

बोलीके बड़ी ताबादमें पैदाबाद हानते मूबकी अयह पन्थ किन्वने लगे ।
 पहले हमारा क्रम था का मन्में न समा सके सये करते-करत बाणी तक
 ले माना और बो बालीपर आकर मठ-मठके हृदय और मन्थपर
 बहन सगे उस क्रमके काले आनुबोधी ईमानदारोके नाम मोक्षपत्रों
 टिकानों धानुपत्रों या कायुत्रोंपर रख देता । इय सब किन्वते ही ही
 बोलते प्रायः नहीं हैं । बाब्या सब हय उय कहन लगे हैं किन्वते मानी
 त्रिक्रम भाष त्रिक्रम एक त्रिक्रमे अमिनय त्रिक्रको अनुभूतिका इम
 काण्डपर उतरा नहीं देन सकत । इमीलिए हमारी धीन यानी बाणी
 स्वयं मन-बहुभाषना कोशक हमारी बकरत पूरी करनेकी एक
 इन्धिय भाष रह गयी है । हमारी भाषकी धीन है - हमारे काण्ड ।
 बिजलीके छार बिजली पहुँचाये है नल पानी पहुँचाते है और हमारी
 यार्ई हमारी स्मृतियाँ काण्डके बगइलासे हमारी बोलीकी बोक-माल
 पहुँचातका काम करती है । हम कहते हैं कि यर हमने संघमें पड़कर
 किया है । ताबर हमारा बग बकता तो हम संघमें पड़कर अपन देतने
 मुनन सान लेन आरिक् स्वार्थीयो मो बदल लेते । लर अब-अब 'धाक'
 तैयारी विश्वमें होती है और बकरतसे ब्यादा भाष तैयार हो जाता है
 तब-तब महापुण्ड-बीसे बिर-बिरहू होते हैं । भौतिक माककी तैयारीके
 बिषह रत-धीन वर्षोंमें होते हैं किन्तु बोलीके माककी तैयारीके बिषह
 मबादार बल्ले रहते हैं । नून य तब से मन्थ बहकात'से प्रन्थ हुए कि
 उनके प्रचार को बकरत हुई । भूरुब और ल'रको कमी भी प्रकाशका
 विज्ञापन नहीं देना पड़ता बानीकी बाणमोचो प्यास कुमानको लुचोके
 लिए गुमानो नहीं रखन पड़ने बापुका विद्विधियों और धरोखों तकसे
 अन्तर अलक लिए इमाडन नहीं लेनी पड़ती किन्तु बाली भाष इतमी
 लुकी रतनी फीरो हुई इतनी मझी होनेपर भी उतना एक बकरत
 हा गया है । पहले आन्तरमें प्रकाश भर बानी-द्वारा भाये धव्य बुद्धिनी
 मफा हू करते थे, अब हम अहंताके आचरणके लिए बानीका

कौशलपूर्वक उपयोग करना सीख गये हैं। पहले हम मानव-राज्योपे उत्पन्न मस्तिष्कको अपने निरक्षयपर नहीं चढ़ते देखते थे अब निरक्षय की मस्तिष्कको उज्ज्वलता कहनकी प्रतिभापूज कलावाचीम हमारी सरस्वती - हमारी बालीका सजाव-शुभार काम जान स्या है। पहले हम मुमिसे आकाश तक बलते थे अब हम अपने मस्तकमें रखक शिख बनाये हुए हैं और एक दिग्गसे दूसरे दिग्गको दूर मानते हैं। हम कहते हैं कि यह हमारा विस्तार है। पृथिवी संकुचितताको विरक्त विस्तार कहना हमारी यथावपर अवधारक आचरण डालनेकी लुबीका ही नाम है। पहले हमारी बाधीम हमारी प्रेरणा बरकर आती थी - तबसे छनकर मुमकी आवश्यकतासे प्रतिष्कनित हुकर, और हृदयक समपयका मुना-मुनीको अब सकनबासा स्वर बनकर। अब हम प्रेरणाक समावको जोरोंको प्रेरणाएँ अपार कैकर मिमग करक भी अब धरम अस्तित्वका कीराक सजानेमें बुद्धिका उपयोग नहीं कर पाठ तब हम अपनी प्रेरणा-हीनता ही को अपनी पहुँच कहन समते हैं। जो बुद्धिजीवी है वे इस प्रेरणा-हीनताकी - कलाक साथ जोर विपवाचवाठ करके भी - कला कहते हैं। जो अक्षिजीवी है विनकी अक्षिज बुद्धिका कोई सम्बन्ध नहीं वे उसे 'साधनी' कहते हैं। और इन जो पाठोंके बीचमें साहित्य नामक कबीर रोकर कह उठता है -

चरुती चरुकी दुनि के दिवा कबीरा राय

बुह बाउन क बीच मी साबित बचा न काव ।

मुनों-मुनीम विज्ञानका रक्त-कर बसुम करनवाली हमारी प्रेम भावनाके समय-समयपर लुप्तकी मयूरिणी बालीके साथ ऐना ही व्यवहार किया है। मुनीकी अक्षि मुनीके अक्षर-ब-अक्षर अक्षर ही को विकास कहते हैं। और विकासके पक्षके अज्ञानता साथ ही को साहित्य कहते हैं। साँधके मोनिकताक पक्षके पागल हम कभी-कभी आकाशकी तरह अंध विचारको ग्रहण करते हैं - हम कुछ नहीं करते। किन्तु उस समय

बाकी भी सामान्यकी तरह पशुचक्र बाहरका बोलन जगत है। नहीं मानमानक-य विचार ही परन्तु हम जमीनपर है यह न मुझे। हमें का बाधना होगा जमीनकी बाधना ही होगा। व जमानपर उठ ही जिनमें हम बनने हैं। हम जमीनपर पैदा हुए हैं और जमीनक उचन-पुचनके मन्दछबाइक इाकर ही हमें रहना है। अतः सामान्यको बाधें भी हम जमीनकी बोलीमें बाधें।

ऐसा न हा कि हमारा विषयमें कोई मत्त ही न हो और हर विषयपर, हमारे मनमें उम उठनेबाधे विचारों या विकारों-भावको ही हम अपनी मूक्त मान बैठें। कभी बलवता कभी बलु और कभी उकरतकी रमइ आकर जो कुछ हमारे मनमें उग उठ करटा है, वह सबका सब हमारा मत्त नहीं है। हमारे मनपर मानबाधे इन अनकों विचारोंमें हम विषयपर अपन निरक्षयकी उंगली रख दें बड़ी हमारा मत्त होया। प्रत्येक उम विषयपर, जिस हम मेत्रमें कलेजरर उठाएँ जिस तकसे हृदय तक पहुँचायें हमारा मत्त होना चाहिए। बिना मत्त हुए निश्चिन्ता समझमें न जानिबाही बात है।

व्यक्ति, मन्त्राज साहित्यम राष्ट्र - इन मयस्त लंभोंमें मत्त-निरक्षय मत्त-प्रकाशन मत्त-मंथन और मत्तानुबुद्ध बतनका काम जो लोग किया करत थे उन्हे हम कहत थे एक युगमें श्रुति दूसरे युगमें मत्त। जिस तरह मूरक और बाइका प्रकाश स्वदेशी और विदेशी नहीं होता उमी तरह हम आर्थिक काम स्वदेशी और विदेशी नहीं हुमा करत। हम ज्ञान नहीं देने कोई व्यक्ति हमारे द्वारा ज्ञान देती है। और वह व्यक्ति मूक्तकी परिवर्तिका वह ताइज विद्वक काल-कालमें एक-सी काम कर रही है।

उमी ताइजको साहित्यिक कहते हैं। और जा विद्यार्थी आपकी संस्थास निर्माण हो गहे हैं या वेगकी संस्थामें निर्माण हा गहे हैं उनमें कुछ वे ही जा विद्व-संवाचक महान् साहित्यिक अपन बीज मान की पैगारी करें और कुछ वे ही जिनमें-य किनीमें वह व्यक्ति या

व्यक्तित्व पैदा ही सक जिसे हम बिस्वका महान् साहित्यिक कह सकें । आपक प्रायश्चित्तमें बसलबासी बिजलीकी टिमटिमाती बुनिया और मजदूरोंके सड़े-मड़े झोंपड़ोंमें मिट्टीके तलकी टिमटिमहानिबी प्रकाशके पथमें कुछ अपने ही म अपना सम्पूर्ण अर्थ रतनबाली सिद्धियां नहीं हैं । व तो हम बातची संवितबाहिका हैं कि मूयक अपने सहस्र किरण सकर आन तक के अन्वकारम बिस्वनप्राकी सहायिका' मात्र रहें । क्या ही मानु छाया ह्या ही के जर्जरी तो समकी आरतो बनकर गयी तो जिस कालके ह्वाले अपनको करनेको मूरज साधार हुआ था उसी कालके हाथों व भी अपनका छोट रेंयी । व छोटे प्रकाश प्रकाशक पथकी और आते समयकी सीढ़ियोंपर कम पथके बिहू मात्र हैं ।

अमीरीका कुछ ऐसा बोझ जीवनपर आ गया है कि ईमान बेंचकर बाजारमें लड़ो हर्ष कलम अस्तित्व बेंचनसे इनकार करनेवाली कमलक विमलाठ बगावत करती पत्नी आ रही है । इस विपमतान जीवनका एक ऐसा चित्र लीज दिया है कि सिर अपने तरीकेसे साधन मगा और बह अपने तरीकेसे चलने लगा । फलित-ज्योतिषकी भावामें सोचें तो मानव-विक्रमके व राहु और कतु, कुपहकी तरङ्ग बिपहलील डाकर गृह-कलहकी प्वासा — माथी बिचारों आरतों परिस्थितियों और जीवनोके शत्रुम जलाय हुए हैं । एना महामानव चाहिए जो इस बह और सिरको मिलाकर सण्डित-मानवमे एक अलण्ड-जीवनके महा-राष्ट्रका निर्माण कर लके । ज्योतिषकी भावामें ही चोड़ा और सीधें तो हमारी चारना देगिए कि हमारे भाष्यक और जीवन-स्वापारके संवाकनमें हमपर अन्तरिक्षक निगारोका अमर पड़ना है । बिम्बु हकार ही पडाममें लकपते हुए हमारे जीवन-साधोका अमर हमपर नहीं पड़ना । जिस भीमवर्तीके प्रकाशस अग्यकारमें हमारा पथ-गपन डीगा है उनक यही अपराय है कि एक ता बह पिलेमें दा मिलती है दुमरे बह हमारी ही पूर्वसे कुन जाती है, तीसर बह हमारी जेबम रक कंती है, और चौथ बह प्वाकानयी होकर भी

हमारी टांगी है कि हमारी चरकरतके बिना कभी अब नहीं पडती ।
 ध्यान हीनता, हम अपने हाथ होनवाक पद-संवापमक एहमानका
 नहीं मानते । हमारे भाग्यदा निर्माण और हमारे आचनका पद-अचान्त
 हम सोचन है कि बाधमानके मिठारे करत है । आजके समयन संवा
 और अल्पवक प्रति हमारी यह क्षुण्ता बिन्दमें बहमनक नामस परिचित
 है । ना जहाँ प्रकर मूयकी किस्मोंमें बर बाधमाने काम करत है
 बड़ी एक भाग्यवती सकर नहीं जान दिया जाता । क्या सहीकीका यह
 गौरव हम कभी अनुभव करेंगे ?

मूमका यह आह्वान नहीं मानता कि वह अभीर साकर रहे । म
 उमका यही कामा हा सकता है कि वह अपन ही धेरेंमें भीतिक रह ले ।
 बाह कभी जोवनमें माने रह, कभी पीछे किन्तु मूम तो आचनकी छाया
 हो है । वह आचनकी एक उम्मेदमें माया ही है । यत हम जोवनको
 देने कि अब वह पद मूमता है अथवा वह पपमाभी राही होता है
 तब वह म जाने किशोकी इसकी क्षमीगौर पर रहता अपन अमीष्ट
 स्वधरा पहुँचा करता है, और अब जीवन कृष्ण बनकर चारुपारमें अम्प
 लेता है, मूय बनकर रात्रिकी तिलोत्रिकि बजा हुआ फुडीरो लता है ।
 मूमनर बनकर अपन ही द्वारा निर्मित कामाक लोपति तिरस्कारका
 सपहार वा अवन स्थानमें प्रागतका बाध्य होता है ईसाके रूपमें अपने
 पूजनवाकीके हाथ मूलोपर लटकाना जाता है तब मुदिबाका लाकव और
 पनिकताका माह प्रतिभाके पुकारीमें बनों हो ?

पहुँचका मूमन नाम नियम है । बाहे वह अमीष्टकम्पके हो बाह
 लोपकी और बाहे बाधकी । नियम साक्षिपका पद-अचान जीवनका
 विना-दर्शन और मूमका स्वल्प-अचान है — प्रजननपीला मूम-मुन्द्रीको
 वह समुदाय है जहाँ अमी या पीर उष पहुँचना ही होता है । नियमकी
 तरह ही माया भी जोवन और मूम दोनोंकी मावारी है । उन बाधोंको
 अपने अ्यका करनेका दुकरा मापक ही नहीं है । मैं मायाकी विचारका

बाह्य-भाव नहीं मानता। कोई बाह्यहीन विचारको पकड़ना करके तो दिखाये। हाँ भाषा तो विचारके प्राणका शरीर है। एक टेढ़ा बरत है। पाठ्यकायम सिधे शब्दके समुद्रमें कोई नहीं डूबता। और न कोयके बहावमें कोई ठीकठा ही है। भाषाका हर भाष्य विचार केन्द्र नहीं बनता किन्तु अर्थ लेकर तो बनता है। परन्तु विचार तो बिना भाषाके बाहर निकलता ही नहीं स्वरूप ही धारण नहीं करता। सधे व्यक्त होनेके लिए कुछ संकेत कुछ चिह्न आवश्यक चाहिए। विचार-गतके इस क्षेत्रमें हममें संका-काण्ड खड़ा कर रखा है। यहाँ मेरी भाषा है और ठीक भाषा है' बोलने तक सीमा माननेका हिन्दीका वायरा इसलिये बड़ा वि बह राष्ट्रकी बानी होनेकी सरलता रखती है। किन्तु यहाँ हिन्दु स्थापनाका समझा लड़ा हो गया। यह भगड़ा कुत्रिम है। अब वानों भाषाओंके क्रियापद एक है जब उनको किठनी शताधियाँ बुर रखा जायगा? क्या विश्वमें कोई ऐसा उदाहरण है जहाँ दो भाषाओंके क्रिया पद एक है और फिर भी वे अलग रह सकी हों? हाँ बोली तो यदने बानांसी नहीं श्रेणी बोलनेवालोंकी होती है। और यदि विचारोंकी बोलने बाणके नाम पहुँचना है, तो उत्तर भारतमें भूमती राष्ट्रवाणीसे उबू पायदोंका विरम्कार न हो सकना और दक्षिण भारतमें प्रबल करती राष्ट्रवाणीसे गंभ्यत पायदोंके बीच विबाण गयी दिया जा सकता। क्या आपके मनमें यह सन्देह है कि उत्तरकी बानी दक्षिण और दक्षिणकी बानी उत्तर केमे मयसेना? मेरा निबन्ध है कि भारतमें एक जाति रही है या एक भाषाको तीक्ष्णानियोंके द्वारा दक्षिणमें उत्तर और उत्तरमें दक्षिण तक पहुँचानी रही है। वह जाति अपने प्रमुके सम्मान अपनको समस्त बापोंके गुरु मानकर प्राचना करती हुई बापहीनाकी जाति रही। उन्हें गठ कहते थे। वे बलने तो भाषा लेकर रहते तो भाषा मेंमासकर और गाते तो भाषा बनाकर। राष्ट्रपदानेमे निबन्धी मोरा हा पाठिकारिक विचारके निबन्धे गुननी ग। या मान्य मनामात्रके बोधकस्तर स्वरास गेहते गुर हा बहलाय

ये सब मन्त ही । इन बालिक कायोंकी आजकल हम 'प्रचारक' कहन सभे हैं । हमार नामकरणमें सत्ता सभतो रही है । ब-मीनम हमार हुरयम उठन वाले बिचारोंको जो मुसक नबीन आबिप्पार लेकर जाये हमन कला कर दिया । बड़ी कृपा की जो हमन मातृत्वको रोखपार नहीं कह दिया । निर्माताका अपमान करनबाके हम माताका भी अपमान कर सकत थ । हमारी इसी मातृनाम सन्तका 'प्रचारक' कहा है । स्वयं स्वीकृत कष्ट-महनकर, कैबक मोहन-मर लेकर काम करते छापीका यदि हम प्रचारक कहत हैं तो जो काले इरादोंके उल्लेख बिच खीब-खीबकर दुनियाका अपनी हवि या बरबिदी उँगलियोंपर पकनेके लिए बाध्य करत हैं उन्हें हम कौन-सा नाम देंगे ?

अबतक सन्त से से मोवबापी बोलते से काकबापी लिखते से जोकबापी गात थ और काकहुरयमें बापीको पहुँचाते से । अब खुपिल और सन्तत्व गया तब हम झहराठी खदान मिलने छगे । वह जिसपर पीछे-म मिर इल से बह जिसमें गिन-बुन तिलितोंक मनोभाव प्रति बिम्बित हो सके । कल्पनामें रसाया माहित्य देनकी हमारी शोध प्रकृत करती है कि मामी हम आत्मनायका कल लखते हैं । निर्माताका मातासे प्रजनन-बीजमें यदि कोई रिस्ता हो ता एककी बेटी होकर दूबरेको पत्नी बनकर और तीसरकी माता होकर तीनोंपर अपन इंगुअ समान प्यार कर पकनेबाकी भावबताका जमनीको हम बेचन चहुती उल्लेखी बिभासिनी बमानका कल क्यों खोल रहे हैं ? रसोस साहित्यकी हमारी खिबर प्रगंसक-ममूहकी मनोभावनाकी यन्त्रियाँ अब मिलकन लगती हैं तब उन यिनककी मनुमामारीपर हम अपने प्रार्थकोंकी लाबाव कुत है । यह हमारा कैसा माह है ? अब हम रसासैपनमें हाते हैं तब क्या हम माह भ्यक्त नहीं करत कि कसमकी दूकानकर हयने जो माल मबापा है उसका अपला हमार हुरय और मस्तकका बाग्याना, उही माल बनना है बिठना दुगन्धित हाया ? फिर यह राष्ट्र-निर्माण सन्त

चिन्तन मत निरूपण साहित्य-साधना और सम्पन्न यह सब कुछ क्या है ? कसब खपास ! और इनको छोड़ देनेके बाद बाकी क्या बचेगा ?

हम एक खतरा और न भूके । एक बेहताहीके देखिए । हम कहते हैं कि यह बड़ा मध्यविरासो है अपनी चारनामोका कामका । फिर एक सहारातो देखिए । मन्मथाक नामपर उसकी भी कुछ कठोर चारंगाएँ हैं जिन्हें यह छोड़ नहीं सकता । और यह कहना सर्वथा कठिन है, कि इन दो अनुसारायें कौन-सा अनुसारा अपनी धारणाबोले चिपके रहनेमें अधिक अमरतीय और अधिक हानिकर है । इसका बीच यदि हमने एसीके साहित्यिक-सहाराकी लैराट बाँटी तो रसोंकी बालकारीसे अपरिचित प्रामीण उन सहारेसे भले बचें किन्तु सहारातो मध्यविरासकी बचत तो असम हरगिज न होमी । अब रसीली चारनामोसे चिपकनेवाली एक पीढ़ी हम निर्माण कर चुकेमें तब जिस तरह समुद्रका ज्वार समुद्र ही के बे-कानू हो जाता है उसी तरह यह पीढ़ी रसीले कसाकारोंके भी बे-कानू हो जायगी और एक बाकी ठेगाकी तरह अब कसाकार जीवनकी और लीटमा चाहेगा तब एसीरूपनकी रिश्ततपर जीवनवाली यह पीढ़ी कसाकारके साथ लीटनेसे हमकार कर देगी । क्या हम यह खतराका व्यापार बन्द न करेंगे ?

कसाकार ईमान और बुद्धिवाँ बँचकर विश्वका निर्माण नहीं करता । वह तो रोटियाँ बँचकर तेल खरोवता है और प्रपक्व राबि-जागरणको साधनाका मन्त्र-जापरण बनाकर जीवनको पत्ति देनेवाले अपने सारण लिंगा करता है । मिप्यारोको रोटि न मिलनेसे समाजक द्वारा अपमानका अनुभव हीठा है । कसाकारको अपने गृध न सटनके बुद्धिमें सबसे कम बेशना और अपमानका अनुभव नहीं जाता ।

विश्वकी रचनाय आपने एक बात देगी हागी । भूमिका नाम है विररम्भता । भूमिमे वा उपजता है या भूमिकी चरणपर वा प्राणी भीते है उन्हें नाकर ही विररवा पापक हाता है । किन्तु 'सम्पत्ता नामक

पेंगलियामे अमरत्व खोज रहा है। उपचारकष्टे सुरेसे रक्तकी साज बूँदें
 टपककर चकित धीरा मम करें किन्तु कलाकारकी इच्छासे ज्ञानवासी
 हृदयके गूनकी सकेतवाहिका कासी बूँदें मानवके माय्य और प्रमत्तोंको
 कासी प्रदान करती है। यह काम मध्यवित्त कीर्ति-शाय विकारोंकी शैरात
 बाँटनेसे न होगा। केवल अवागोचर निरकृते वे-दक्षित्यार अर्णोंको सिद्धता
 ही उचित न होगा। हमें लोक-जीवन सिद्धता होना। हम दाहराटी साहित्य
 क्यों सिद्धत है? क्या हम हार मान चुके हैं कि लोक-जीवन नहीं सिद्ध
 सचते? हम यह गर्व न करें कि हमारी रचनाओंने हमें सुखसे जीवन
 बिठाना सुकथ कर दिया। सुविधाकी वह प्राप्ति कल्पीका आवरण नहीं।
 घटाव और अस्वीय वेचनेवालेनि भी तो अपनी सम्पत्तिसे महक बड़े कर
 रणे हैं। विवाहों त्योहारों और चस्किन्यों आदि अवसरोंपर गाये जाने-
 वाले पीठ ही तो भाव हमारा 'लोकसाहित्य' है और हम उससे कापी
 दूर हैं। हाँ 'तुळसीदास जाम रजुबीर की', 'सूरदास प्रभु तुम्हारे मिकल
 का' 'मीरा क प्रभु गिरधर नागर' और 'कहत कथीर सुनो भाइ साधो के
 कवमें एक साहित्य लोक-जीवन तक पहुँचा था। असाक्षियों हुई कि अब
 हम उससे अविद्वान् कुछ नहीं पहुँचा पाते और अब हम बैठते हैं कि गुसाव
 की डालपर परतोंको बोड़ी कल कती ही लयी है कलकी कसी जात्र गिम
 लयी है और जात्र पून बनकर अपने उगमेपकी कीचडका खुसती मिट्टी
 और इनाम मस्तक उठानी तथा काँटोंकी टहनियोंपर गुस्सावपचमें बिटोड़
 करती हुई तावतसे निर उठाकर, पूनकर जात्र लम्बी यात्रा समाप्त कर
 गैंगुटी-गैंगुटी होकर पूनम मिल जानेको बाध्य है तब भा हम यह अनुभव
 क्या नहीं करत कि लोकजीवनके पास साहित्य पहुँचानेमें असाक्षियों ता
 दूर अब बिलम्बम दिन भी नहीं गुजरत दिव्य जा सचने। प्राचीन
 साहित्य हृदयवा मन्तोष बनकर भके रह से वह काव जीवनकी दाम
 समस्याओंका नहीं सुकथा सचता।

क्या हम निमित्त उपायें-द बाणी है? क्या हमन मचमुच कटिके

बन्धन छोड़े हैं ? किस कड़के ? बागी वह जिससे सम्म आगे न बढ़ पाय । बिड़कर समय तकने स्थिर कहे और फिर छाचार अनुनामी बना जिसके पीछे चका आवे । प्रतिबुद्धताका नाम बधावत नहीं है । प्राणापर सेककर लोकाजीवनकी माराकी सप्रतस सप्रततर जनपुकी और धुमा बैना लक्ष्मी बगावत है । निर्माणके हर कोस-काटेको उखाड़ फेंकना बधावत नहीं है । जिस निर्माणपर मानव-पतन मानव-श्रेय्य मानव-आइम्बर, मानवकी कपडोरी और मानवके निर्कृत्य बरमाचारोंका प्राचार बडा है उसकी ईदसे इद बजानकी प्रेरणा बेनबाली हुकार करना सच्चा बिरोह है ।

बिरोही और बिद्रोही सेकक इन दामें बहुत बडा अंतर है, यह हम न पूर्व । बिद्रोही कार्यकर्ता अपन सगठनके गिने-बुन पहुँचार रसकर परदेके मोट छिया रह सकता है । वह अपनी पतिबिबिक डोरीको कबिक मनकी हिलोरीकी तरह प्रत्यंकर होखे हुए भी बुद्धि-भोसक रह सकता है । वह अपना मिषन पूरा करनेमें बन-समूहको खापी बडाते समय काम सेककर मजदूरी बाँटनेवाले संकठनकर्ताकी तरह, किस्तबन्धीस अपने प्रचारको छियाकर बसा क आ सकता है । बिन्दु एक क्कान्तिशील लैककके भावमें हमने मो कठोर कठिनाइयाँ होठी हैं । यह प्रसिद्धि और पहुँचानके सनस्त खतरोंका बाज डोलके लिए बाध्य है । समाजमें सचक-पुचक करनेपर उसे उपहास सहना ही होगा । उत्कथंसे डाह करनेवाले क्कान्तिमं-द्वारा प्रचारना भोमनी ही होगी । निर्भीक मत क्कान्ति करनेपर छासन-द्वारा क्कान्तिम होकर लोक-जीवनमें प्रवेश करनेकी शान प्रतिष्ठा पानी ही होगी । काम और ईमान बैबनेसे इनकार करनेपर छासन कान्ति-द्वारा उसे मुक्ता मार डालनेक लुक पश्यकका छापना करना ही होगा । और मइज बहका बेनम गसत समसनेबादे अपने ही लोक-जीवनके लोकोकी बेसमजीवा बेरज्मोसे विकार होना ही होगा । प्रसिद्धि और पहुँचानक खतरोंसे पीछ हटना एने कलाकारका पतन है । उस एन्द्रीय होकर भी राजनीतिक प्रचारकों-द्वारा हलोकें पट्टे गलेमें न पहनने

या पहने हुए पट्टे बसेछे सतारनेपर मिसनेबाके भर्बकर आक्रमणों और अपार लालछाके बीच रबीन्द्रको बालोम यह सोचनेके लिए साधार होना ही होगा कि - 'अकेला बक अकेला बस अकेला बस ।

इस सतारोके कारण ही क्या आबका लेखक आर-जीवन और उसकी समस्याओंस आँख मूँदनेके लिए बाध्य हो गया है ? क्या इसीलिए वह अपनी पठुँबको बतता मानकर मुगंमि उसके आस-पाम बककर काट रहा है ? और उसे वह अपनी नति कह रहा है ? अपनी पठुँबको मीलका पत्बर मानकर पीछे छोड़ता हुआ आँक-जीवनमें प्रबस करमकी नवी मंजिक नहीं गाँठ रहा ? नतिका यह गुसाम क्या प्रगतिका परम ईश्वर नहीं हो सकता ? इसका प्रियतम कीन ? अतरा सुखी संकट कि इनसे भी मीठी कोई बन्पुई ? यह सोचते-सोचते बकनेबाला अन्तु पीठे-पीठे बकाबट क्यों नहीं अनुमन करता ?

विरवम महापुत्र हा रहा है । मूतबालका बीमब वह बूल आ रहा है । और सीमाए किसी छाड़ोके उबसे हुए मूतकी तरह अपना अय लोय हुए रो रही है । बतमानम यह बाक्य ल्पी हुई है और वह देखा विरवका चिन्तक वह सोचनेके लिए बाध्य है कि ककटा बमाला कैला बलवा । कैलीकी सीमाएँ कहाँ होंगी ? भारतीय महामालब क्या तुझम भी काई पूछवा ? क्या लरी भी कोई साम, कोई बडूत कोई अगल है ? जो पीस कर बिलीका बारिअप इरब नहीं कर सका वह बीसकर रिमाओ महा प्रलय किनके तरुपर करवा ? ल्पी भापाको हिन्दो या भारतीय भापात क्या दिया है वा ल्पीकी मोमा निश्चित करते समय उससे पूछा जायेगा ? वा हिनाक बोचोबीच हिंसकीको मरजीपर अक्रमप्यनाओ आराबना और तरबचिन्तन करता रहा और हिमकाकी हिमाओ अपनी कलागमक बायल्लामे बलवान् मिड किय रहा वह विरवक भाप्य-निर्माणपर अपने निजय देवा ?

आपकी मस्याका इस उगापिधानक समय देनेके लिए मरे पास क्या

है ? हिन्दी साहित्यमें यदि मैं कहूँ या समस्त भारतीय साहित्यिक चरमार्थ-
 स म कहूँ तो प्रेमचन्द और जयजंकर प्रमादकी मोठ म आपकी मौपठा
 हैं । येने मुना कि वे अपना इलाज नहीं कर सकें । यह भी कामकी
 बात है कि अन्धे-त्री संयत्ताप्रसार पारितोषिक नहीं पा सकें । न द्वितीय
 साहित्य सम्मेलनके समापतित्वका गौरव उन्हें दिया गया । क्योंकि निम्न
 का बहुमत पन्त निरान्ध मशीन मद्दारेकी प्रताप और प्रेमचन्दको किमी
 के योग्य ही नहीं समझ सका । और हिन्दी छीछनवाले देशवासियोंसे कहूँ
 तो यह कि वे इसमें जान बंदर कलाको अब बहु संकटमें दोखे मरनेसे
 बचाव और राष्ट्रकी बानीका बन्दनयुक्त-यत्र बर्धन मुक्त करनेमें
 सहायक हों ।

बूझती चीज जो मैं आपकी हूँ, वह यह जमीन बिलकी एक तरहको
 यदि आप उखाड़ दें तो भारतभू हरिद्वन्द्व बूझती यह उखाड़ दें तो राजा
 प्रताप मूपन सिधाबी छनसाक तुलसी गुर कबीर और मोरा बान्नि,
 इस जमीनमें-से उठकर आपसे बोलने लगेंगे । यह जमीन आज मेरी और
 आपकी नहीं । अत इसके बान्नि इसके बन्दन इसकी बधानपर बना
 टाका इसके बीजनपर क्या पहरा; और इसके अन्न और प्राणवा हाते
 हुए मो इसकी ये मूल-स्मृतियाँ भी आज मैं आपकी दीलादानमें देता हूँ
 कि कमी आपका साहित्य इन्हें मिटान योग्य भी हो सके ।

तीसरी चीज आपके मन है । जमीनसे जानमान तक नजरकी पहुँच
 है । परन्तु पराधीन देशमें आप जो कुछ देखें उसपर माच नहीं सकते ।
 आप बहु चीजेंमें जो आपका पाकक जाग्रता है । आपके इन बन्धनमें
 आपके राजपार है आपके व्यापार है आपकी जिम्मदारियाँ हैं और एक
 लहरा सेनपर आप अनेक संकटोंमें पड़ सकते हैं क्योंकि व्यवस्थाकी इच्छिम
 दर-उबर आपकी प्रतिमाके परनिधोपकी मूपुर-ध्वनिते आपका आरामसे
 रहन देनेवाले बुद्धवचक नाराज हो जानेका प्रतिमाके कर्णोंकी आवाज
 उड़ड़गाहटने प्रतिमाके बमराजके जान उठनका अन्देश है । अत इस

मागवहीन मुरसाके साथ-साथ मागवचान् प्रतिभाक फंतोकी फड़फड़ाइत ये पीछामे आपको देना चाहता हूँ ।

ये चाहता हूँ आप प्रचारकको सन्तस बरक छे । नीकमे छड़ हो बाने-मरको आप यह न समझे कि आप जाक-बीचनमे प्रविष्ट हो बने । लोक-बीचनकी लीसें और जल्मासें जल्मादा और बेंगवाइसें बेबैनिसें और बहराहटाक खस्वाके उदभाटनका यह खजाना यदि आप मेंमास सके तो ये आपको सावरसे देता हूँ ।

और एक बीज बन्धनपूवक बना चाहूँगा ।

यह एक बाणी है जो लोक-बीचनके हृदयको सोच-साधकर चिन्ता रही है और चिन्ता-चिन्ताकर साथ रखी है । एक मुजा है जो ठगकी आरसें छठ रखी है जिनकी मुजाएँ छठ नहीं पाती और उनका भ्राम्य सिद्ध रही है जिन्हे धाधनन लिसमा-पड़ना नहीं सीसने दिया ।

एक बाणी है जो शौपडिमोकी कराहको राजमहलोंमे कि जाकर टकटपी है और राजमहलोंके अपमानोंको शौपडिमोके सेवापथमें भिके प्रभु के प्रचारकी तरह प्रवृत्त करती है ।

एक बाणी है जो नसिमोमें कुशोमें शौपडिमोमें महुलोमें पहाड़ोमें कुझोमें बीड़ोमें एकान्तोमें विजयोमें विजय-पथकी पत्तनयोमें बडे बडो का स्वर लिये बराबर मुनाई पड़ती जाती जा रही है ।

एक बाणी है कि नमस्त बमोके देव-मन्दिरोमें जिसका रम नठिपीक जिसका पथ उम्मुक है - किन्तु कौपते तिहातनोंका भाइंगर है कि इस बाणीका ये न जुने ।

एक बाणी है जो कि बरौतक भारतका नरमुग्ध है बरौतक लम्बेघाडिनी बनकर, यह प्रचण्ड है और बरौतक बिदर-हृदय है यहाँ तक बिदरबिमुकी प्रायनाके गौरवसे मीली या बाशीली है ।

एक बाणी है जो लकड़ोकी प्रायनाकी कटिया बनाकर बीसप्री है और बिनायकी बमकियोमें बिमुकी मुनहनी बायाके बर्तन करती है ।

कहेगा है कि आ सोक-जीवनका स्थित कहेगा बना उठनेकी चाह बनकर लड़ा है। मुँह है कि मुक्त-हास्यमें विद्व-परिवर्तनके बोक महाप्रसन्नकी बाना बनकर आ रहे हैं। नुबारे हैं कि कष्ट-भावाके गमक द्वार है अथवा अस्मितके निर्वेगकी स्तकार है अथवा दम हुएके लिए दण्डित होमका हुना स्वीकार है। वह साक-जीवनक लिए प्रताड़ना सइता है। साक-आवनकी भी प्रताड़ना सइता है, और उसका जीवन पठितोम्मुख साक-जीवनकी उदावटके लिए स्वयं प्रताड़ना बन जाता है, क्योंकि वह सोक-जीवनको प्यार करता है। सोक-जीवनकी बची बनकर उसकी चेन्गी बनकर उनको नास बनकर, उनकी उठान बनकर और उनका मस्तक बनकर स्थिर रहता है। संघटमूहमें कारागारमें और बधमूहमें बह मुक्तिकी एक ही बाणी बालना है। कड़िक मुमराहोंका वह प्रमु-वबका पना देता है। वेदवाउकों और विस्वामवाउकोंमें वह सममें निवास करनेवाले प्रमुका ईश्वर बवाता है। मिन्कोंकी मद्रिणुता उठता है। कुँकी कोमलता अवाता है और पय-मैपोंका बह अपन कलेजन-म पय-दान करता है।

सोक जीवनक साम्यवा भविष्य बह लिखता है। किन्तु विरवकी पुरिययीं मुसझाकर तत्त्वज्ञ मर्गे बनता जाता।

बह कवि है। साक जीवनके जानुबोले गोष्ठा सोक-जीवनकी चाहोसे बरीना और दम इच्छाम दूर कि वह कवि हो और दम बातको बिना जान कि बह कवि है।

बह न सम्राट् है, न मरदार। न बर्माचार्य है न अरुम्पा बेनबामा। बह एक बायी है जिसके आगे विश्व साधार है कि उने मुन। उनमें बटाह है जिसमें कोन्-कोन् दुखियोंकी आत्मा निग्रक रही है। उनमें पत्रन है जो याताओंको बहमप्यताको लजिग्रक कर रहा है। उनमें विरवाम है जो बलि-वगियों और कमजारी स्वीकार करमवालीका बनता हृदयकी पक-पकके बाब रताग कर रहा है।

वह बाणी है जो राजाज्ञा नहीं है किन्तु कोटि-कोटि आदमी कोटि कोटि मानव जिससे बँधे हुए हैं अलग सेना नहीं है किन्तु उसके एक विश्वासपर काटि-कोटि व्यक्ति उठरे हुए हैं।

वह बाणी है जो बण्ड बेतमें आपनको भी खमा नहीं करती जो बुगइवाका अपने सिरपर केती है और बण्डाइयोको प्रमुके चरणोंपर चढ़ाती जाती है।

वह बाणी हर देशमें है, हर जातिमें है हर धर्ममें है। ईसाका अनुचार करके उस बाणीका नाम अमेरिकाम कन्वन्ट इंग्लैण्डमें जेजिस क्लसमें सेनिन धमनीमें हिटलर इटलीमें मुसाळिनी टर्कीमें मुस्तफा कमास चीनमें जेंग काई सेक और विश्वमें न जाने कहीं-कहीं क्या क्या कहा गया। किन्तु गुब्देव रबीन्द्रकी बोलीमें भारतकी वह कविता वह मूल वह साहित्य वह पुषपाय कहाँ है? उस बाणीके स्वर्णोंका आवरण सेबाबामकी झोंपडोम निवास करता है। उबार लिया हुआ यह बम्बन भी मैं आपको सौपता हूँ।

धीर मैं मानता हूँ मुम यही नहीं कहा रहेया। समयका स्वभाव ही लड़ा रहता नहीं है। हमारा धातु-कलमान जब पूजाका भूतकाक बनना तब मैं उस युगको देखना चाहूँगा जहाँ एक मा अनेक मूर्तियाँ प्रकल्प मचाती और फिर विश्वका निर्माण करती बीज पड़ें। सेबाबान उती युगका ग्योता कवी न कहा जाय।

आपने मुम यह बहमर रिया मैं आपको पुन पश्यवार देता हूँ।

बम्बई हिन्दी लिपारी

दरिपान गमारज

१९४१



साहित्य और कविता

एक समय यह होता है जब हम अपने सामने अधिक समुदाय नहीं पाते हैं तो दुःख होता है। पर एक समय यह भी होता है जब हम अधिक समुदाय पाते हैं तो दुःख होता है। जब हम बिचारोंका प्रकटीकरण कर उन्हें दूर तक पहुँचानेका यत्न करते हैं तब समुदाय त्याग नहीं किया जा सकता। किन्तु जब हम बिचारोंका कोप निर्माण करते हैं तब हमें ठप्पकोक एकान्तकी आवश्यकता होती है। एकान्त उस समय हमारे अस्तित्वकी आरम्भना आरम्भकी पूजा और आत्मदेवकी अभ्यचना होती है।

हमें एक बुरी आदत है। हम व्यक्ति नहीं पढ़ते पुस्तकें पढ़ते हैं। जिस साहित्यमें व्यक्तिको पढ़नेका यत्न नहीं किया जाता जिसमें व्यक्ति उसके अस्तित्वकी तरह तब पहुँचनेकी कोशिश नहीं की जाती वहाँ व्यक्तिगत उत्पन्न होना और पतनकी कल्पना-मात्र पागलपन है।

हम बात नहीं बिपय सुनते हैं और जीवन क्लम या ज्ञानका पृथक मापय छिट बँटनेका यत्न करते हैं। एसी स्थितिमें गनियन्की तरह बहन बर्षाकी तरह बरसने पुष्पोंकी तरह बिचारमें और अन्तकर्मोंकी तरह उपायवाली आत्म-वेदना हमारे पास खुलकर क्यों आयगी ?

व्यक्ति को प्रकारके होते हैं। एक तो वे जो बिचमें फैले हुए ज्ञानस तन्तु चुन लेते हैं और फिर अपने ही तन्तु-संग्रहस चकित हैं। उठते हैं और जने विश्वक सामग्य रख दते हैं। दूसरे वे जो उस बाहुरीक यत्नशील बान्धकी तरह जो दूरे और अस्पृष्ट स्वरानि यमुर और कोपम मनीष बनावता-ठा नजर आता है बुमिमाके बिचारोंसे एक बिचार-समुदाय निर्माण करते हैं। उनके बिचारोंकी सम्बन्ध किसी प्रत्यक्ष व्यक्ति घटना या

दुस्वप्न या कल्पनाको उद्धानोषि जाग्रत होती है और उसे जमानको घोष देनेमें वे अपना ईमानदार कतम्ब अनुभव करते हैं ।

साहित्यिक रसके निर्माणमें सगा रहता है रस ही काव्यकी आत्मा है । रसोंपर घटनक्रिया करके रसों तक पहुँचनकी चेष्टा व्यक्त है । रस इतनी मुकोमक वस्तु है कि उसपर क्रिया होनके बाद छीना-सपटी या रगड़-मगड़ होनेपर वह मसमें हुए फूलोंकी तरह अपनी सुगन्धि खो देती है अपनी कटुताके भाँसू रो देती है ।

आजका युग ऐसा है कि मस्तक जलन काय करता है बड़ बकग काय करता है । साहित्यकी बुनियाके वे दोनों राहु और केतु हैं । इन दोनों बर्बाको जोड़ें तो मनुष्य प्राची बन सकता है । हृदय और मस्तिष्कका विच्छेद करनमें एक अजीब-सी बात शो गया है । एक तरफ मस्तकपर बाधा लाया जा रहा है और दूसरी ओर पीरोपर चन्दन बडाया जा रहा है ।

हमारा प्रयत्न यह कि हम अपनी अन्तरात्माक प्रति व्यक्तित्वके प्रति सज्ज रहें ईमानदार रह । मुझे उस लकड़हारक लड़केकी कहानी याद आती है जो माम्बवदा राजा बन गया था । राजपण्ड राजबरबार और शाही पौगाफमें भी बह अपने निजी अस्तित्वको मूला नहीं था । उसने जपल पुराने बिबड़े और लकड़ीके बट्टका एक आलमापीम बग्न कर रखा था । विलम एक बार बह गडा-बीकर एकान्तमें सारा राजसी लिबास उतार देता था और अपनी लकड़हारेकी पाँधाक पहनकर एक बड़े शीघेके सामन लड़ा हाकर अरमस्त बीरताके साथ अपन प्रभुग बह बहता कि मैं यह हूँ बह नहीं हूँ । इसी तरह एक सज्ज साहित्यकारका भी यही कतम्ब है कि वह अपनी ईमानदार बहिमाप अपने सत्यके निकट भाग प्रभुके सम्मुख राजा हाकर ऐसा ही बहें कि मैं यह हूँ बह नहीं हूँ ।

व्यक्तित्वन निर्माणके लिए हृदयकी जरूरत है । यह रास्ता बर्बों या पम्पाव नहीं मिलता । उसका अपना रास्ता हाता है । सेवक जिस समय

स्त्रिये सपता है, उस समय पाठकोंका प्रशंसकोंका मञ्जमा सपने-त्राय
 बन जाता है ।

जबतक माहिस्त्रियका बाहरकी दुनिया देखनेके लिए बाध्य किया
 जाता है तबतक स्वयंको नहीं देख पाता । जब वह स्वयंको ही नहीं
 देख पाता तो वह कुछ भी नहीं देख पाता । बिल्कुल धुनियाका पत्रा है
 और स्वयंका पत्रा है । यह जस्यवाज नहीं है । माहिस्त्रियका बोधन
 ईतमें अर्धत और अर्धतमें ईतकी अनुमति होता है । जब वह अपने अनन्त
 बिचभामें उतरा होता है तब वह कला-पिताके जोखम-मर सम्भामम
 मामुपित और कला-माताके प्राथमम बोधम बोधोभा डाटा है । किन्तु
 जब उसका चिन्तन उसको इसमपर उतर जाता है तब वह अपना ही
 कर्म-सुत्र होकर बिल्कुल अन्तरतरकी मुक्तोमस गादामें खेपता रहता है ।
 साहित्य इसा त्रिगुणात्मक स्वरूपमें व्यक्तित्वको प्रकट करता है ।

भारमप्रकटीकरणको बेदना कभी-कभी मरण-बेदनाम भी कठोर होती
 है — मैत्रकनी इस बेदनीका दुनियाका अनजब बाजार अनुभव नहीं करता ।
 मञ्जमा मोहनाए एसोंके लिए मृत्यु है । एकान्त उसका बोधन है । भारत
 प्रकटीकरणको मूल जिन्हें होती है, उनका एकान्त अस्तित्वोंकी बस्ती
 होता है । उस समय के उर-सा भी आक्रमण बरताम्य नहीं कर सकत ।
 कर्म बेदनाके बीसु त्रिम उरख बे-अधमरकी और बे-इद पुछाछम एक
 आत है और हृदयक बोध बनकर बाबसा कर दत है उनी मरख जब
 में अपने-आपका सम्पूर्ण कलम मा स्वयंपर उतार रखा होई तब मरे
 स्वरपर बाधु मरकर दोइनबाले हायको देखकर मेरा सम्पूर्ण अपनापन
 मेरे स्वरपर उतरते समय तक जाता है । हाँ, उसके बाद उतर चुकक
 पदचानु मनमानी गस्त्रकिया हा मुझे चिन्ता नहीं । जब मैं देखता हूँ कि
 आप फलोंको छीस का तराघ कर ही आते हैं तब मैं अपनेपर को जाने
 वाला तराघम विगित्त क्यों हाई ? किन्तु यह तराघ उस समय नहीं
 पोभती जब बुझोधी टङ्गिनियोंपर प्रकृतिकी अप्रत्यक्ष रंगकियोंमें एक

बनते जैसे आ रहे हैं। फूलोंके तिलकते समय आप उनपर बाह्र बीर केभी
 लेकर न हों। जब वह पूरी तरह खिल चुके फिर आप उन्हें लेकर पैरों
 तले रोके लाई-मरोके या उनकी पूजा करें। आप स्वतन्त्र हैं।

यदि गान्धी-मुफका उदाहरण छोड़ दें तो राजनीतिक व्यक्तित्वमें एक
 लराबी है। वह अपने जमानक बीरोंके ज्ञान और उनकी कामकाजपर
 फुलना-फूलता है। मतासे बनता जितनी गुनी अज्ञान होगी उतना ही
 अधिक प्रभाव राजनीतिक नेता रख से जा सकेगा। बनताका भावरण
 राजनीतिक नृणाका भाव बिन्दु है। किन्तु साहित्यमें यह बात नहीं।
 यही तो जीवन जीवनक इस प्राण-मल्ल-मय पत्थर जीवनका हम व्यो-व्यो
 उठा बनाते प्रायः त्या-त्या बड़े-बड़े रहस्य हमारी जीर्णिक सामने आते
 हैं और उन रहस्योंको हम व्यो-व्यो अक्षुब्ध सम्मुख रखते आते हैं। हृदय
 घावकी निवृत्त मयी मांग हमारे सामने आती है इस जीवनमें जब अधिक
 लोभ आ जाते हैं। तब अज्ञेयामीका बजन निरनेके बजाय बदन बनता है।
 नाद्वितीयक फूल-मालामोक्ष पकराता है। उसका सबसे बड़ा बल सबसे
 बड़ा पुरस्कार निर्मल हृदय है जो प्रभुकी देन है। उस पुरस्कारकी सबसे
 अच्छी देनी उसका अस्तित्व है जिसे प्रभुन अपने हाथी बनाया है।
 जयन प्रभुके लिए सम्पूर्ण आत्म-समर्पण ही उसकी अर्पणा है। अर्पणा साहि-
 त्यिक ऐसी देनाएँ जीवता है जिन्हें समय मिटा नहीं पाता।

राष्ट्रीय कविता क्या है? राष्ट्रीय कविता केवल लून फाँसी इककड़ी
 बेहिवोकी कविता ही नहीं है। राष्ट्रकी प्रत्येक बीज पवित्र है गीरबकी
 बनतु है। राष्ट्रकी ही मरान् विद्याल मानता है। उसे ही समस्त मृतकाल
 में लेकर भविष्य-जातके नापके नापता है। एसे ही मरान्तन राष्ट्रकी
 बायो मरबी राष्ट्र-बायो है। राष्ट्रीय कविता पुंखक बापकर ही मनो
 रंजन मरी करती या मपुर अनागत मापकका नापन ही मरी करती
 किन्तु वह फुलक प्रभावकालम संवाकाष्टका मीपस रूप भी बापक कर
 लेनी और मीनितक। कविपदार आमगिन करती है। गांधी और

हिमालय दोनों ही पूरे राष्ट्रीय हैं। क्या वह हिम ही राष्ट्रीय नहीं है जिसके मुकुटपर हिमालय है यन्में गंगा-जमुनाका हार है करवनीम ममदा-शापोकी सड़िया हैं जिसको साबरीकी किनारी कावेरी कृष्णाके सुनहरे बरतने बमक उठती है, और जिसके बरतोंको हिम बहासापर मोता है।

धन्य करनेके लिए केवल व्यक्तिकी ही जरूरत नहीं है। म यही आवश्यक है कि जिसे धन्य किया जाय है वह प्रत्यक्ष जमीनकी चीज ही हो। साहित्यिकके लिए सबसे बड़ी जमीन हृदय है। कल्पना की जमीनपर उत्पन्न होनेवाली बटनारें भी महाप्रसन्न कर सकती हैं। कल्पना और हृदयका मिश्रण ही किसी साहित्यिककी परीक्षाका योग्य माप है।

यै आपसे दो बातें और कहूँ। यदि अच्छा साहित्य बीज पड़े तो निमल न बाहर और फिर उसे अपना कहकर उमल न बीजिए। यह तो परायी बीज हुई। दूसरेके बिचार हुए। जिन्हें साहित्य-निर्मात्रिकी नहीं केवल साहित्य परोसनेकी जादय है वे महापुरुष तो सचते हैं किन्तु साहित्यिक नहीं। साहित्यकी प्रसन्न-वेदना उन्हें सही ही नहीं। अपन बिचारोंके लिए बीज-मिन्ना उन्हें सही ही नहीं पड़ी। उन्हें तो तैयार बिचार उठ सिन्ने। व ही अपने साहित्यपर प्राण देनेवाले साहित्यिक नहीं हो सके। हमें इस विषयमें सतर्क रहना चाहिए।

दूसरी बात कविताका विषयकी है। कोई कहते हैं कविताका विषय मरग है। कोई कहते हैं कविताका आधार कल्पना है। वास्तवमें कविता विषयाके अमूर्तकी कबोकी पूर्ति है। प्रभुकी बुनियामें हम देखते हैं कि ई बार पानी पीज सड़ाठ है और पुष्पात्मा कट सहन करते हैं लेकिन कबिकी बुनियामें पानी मुखा नहीं रह सकता और पुष्पात्मा दुःखा नहीं हो सकता। कविता कल्पनाका सत्य नहीं सत्यकी मुकोमल कल्पवता है। कविताका विषय जमीन है विस्तृत है। ईसा अस्तवत्तमें देदा हो

सकते हैं। कृष्ण कारामारमें — तब फिर क्या हमारे गीत पेदा करनेके लिए हम मन्दन-कानन चाहिए? ये जन-मंडलों और जनरबके बीच भग्न नहीं हो सकते?

पुरातन कविता ठंडे बसेंको है। प्रेम और दुःखारको कविताम हम मूरबास और कबीरसे जागे बड़ नहीं है। हम रा कस्तम्य है कि हम उनका अध्ययन करें। अमृतक उत्थान और पठनमें हमारी जिम्मेदारियाँ गुरतर है। हम उनका मार-बहन करनेके लिए योग्य बननका प्रयत्न निरन्तर करते रहे।

उत्तम साहित्य फैलानकी बीज नहीं होता पढ़कर फेंकनेकी बीज भी नहीं डोंता वह रक्तक बिन्दु-बिन्दुपर उठारनेकी बीज होता है। नहिर्बाँ अपना विज्ञापन छपनामे बिना ही प्यारोंका अपनी और खीचती है और उनकी प्यास बुझाती है। प्यास यह नहीं देखता कि मरी टेडो-आड़ो है या ठंडी-नीची है वह केवल उनका स्वाद ही देखता है। उसी तरह हमें देना चाहिए कि कहीं कविताका स्वाद तो नहीं बिगड़ गया है फिर उनका छन्द या व्याकरण वीसा भी ही स्वादपूथ कविता तो बरबस लोगोको अपनी धार आकर्षित करेगी। जिस तरह मूय बिना तैल भरे फिराया निय और बिना मुर्चिबा अमुर्चिबाका खयाल किय सब लोकोमे प्रकास बाँट जाता है उसी तरह उत्तम साहित्य अपना प्रचार अपने-आप कर से जाता है। यथाक्रम तो प्रचार भाषाका होता है साहित्य तो मजबूत जायें आप हो बूँड़ लिया करती है। मरी इच्छा है कि राष्ट्र भारती हिन्दी का साहित्य दिन दिन उत्थानर होता जाय और गूर तथा मुन्दमाकी यह पवित्र जाया अपनी भाषाभोरी बहन हो।

बन्ना साहित्य हरिन्द

१९३२



रचना शीर्षक ठूँडती है

संयोजन

यै कृतत्र हैं कि आपने मह इस ममारोद्धका अध्ययन बना । बेगम बनकी जातिपोंको तरह हमारी भाषामें कविपोंकी भी एक जाति होती चली जा रही है और पता नहीं कि 'ज्या रहीम मुक़ नौपत्र' बहुत ख़ास कुछ बात वाली उक्तिको तरह इनपर मुन्स मनाया भी जा सकता है या नहीं ।

शिवानील्लामे कवि ज्यों-ज्यों हटता है, ज्यों-ज्यों उसे अस्मा और औरोंका बतल निमग्निन करनबाकी जातिका ब्यक्ति बतकर भाषाबाँके बीच उसका परिचय करया जाता है । बलाकार इस अन्वयको चुनौती मानता है और बिन्दक बहुत बड़े पंगितनोंका उत्तरदायित्व लेकर यह साक्षित करनके लिए बाध्य है कि वह उत्तमानका मन्म-बाहक है पत्रका पुष्पोपक नहीं ।

इस सब भारतवर्षमें एक बहुत बड़ा इच्छा एक बहुत बड़ा श्रुति एक बहुत बड़ा पीडा एक बहुत बड़ा कवि लो दिया । जा चिन्तनकी चरित्रोंको जब शिवासे लोचना या तब बापीमें जानना या । लोच जीवतकी कश्तान काटि-काटि स्वर पुष्पावक गवित बनकर तिमकी बाणामे फूट पड़ते और तिमकी शिवामें टूट पड़ते थे । बिन्दका एमा बनहोना काय हमल लो दिया । उसका इन्म जब उठती भाषाया मुद्राय और बसाया भाष्य गिनती थी । हैनको बलिष्ठ पौत्रियाँ उठक अन्त-करममें पुकार उठती थीं । नेता न होते हुए भी तिमकी बात गजालाकी तरह पालन की जाती गरी न होने हुए भी तिमकी बात समझाकी तरह मलक मुताकर

रचना शीर्षक ठूँडती है

स्वीकार की जाती स्वर-माधुर्य न होते भी जिसकी बातपर सहस्र-सहस्र मस्तक झोक उठते बतिक न होते हुए भी जिसकी बात सुनकर सहस्र सहस्र प्राणिया और घट-घट संस्वामीकी रक्षाके लिए घन बरस पड़ता और प्रियतम और त्रियतमाका पागलपन न होते हुए भी जिसका ईमान और बलिदान जिसकी कीर्ति और मूर्ति पीढ़ियोंमें बुकरायी जाती — उसे इमान लो दिया । जिसके मर्भोंमें दुनियाकी बीस्कार भर जाती जिसकी सौभाग्य अकरतमम्भोकी अंकार सुनाई पड़ती जिसकी मुद्दाम बिरबके परिवर्तनकी मनुहार होती और जिसके स्वरमें साम्राज्योंको कम्पित करने की हुंकार होती उसी महान् मानव-काम्य अथवा काम्य-मानवको हमारे देवका भूमि लो दिया ।

बिरबम तो गन्धी सन्नका बच्चा अच्छा मास्म पड़ता है किन्तु हमारे दिवंगत मुन-निर्मलाकी मरण-तिथि अभी आठ महीने कुछ दिनकी है और अगतिवि अस्ती बरस तरह दिनकी किन्तु कौन उन अस्ती बरसोंको प्यार नहीं करता और किन्हे ये आठ महीने प्यार है ? सब तो यह है कि इमान अपने देवका बचस्व और राष्ट्रकी बाधोका सर्वस्व लो दिया । माहित्य यदि प्रतिबिम्ब है तो इमाने अपनी बाधोमें प्रतिबिम्बित होनेवाला महान् बिम्ब लो दिया । इमाने महारमा गान्धीकी लो दिया और महारमा गान्धीकी लोकर इस प्राच्य बिद्या परिपक्वा उत्तरवाचित्य भी देवके सामन अर्पित बड़ गया ।

इस पुण्य स्मरणके बार मुझे एक ही बात कहनी है । जिस तरह जब हम श्रुपभके स्वरमें एक एक गीतकी पंक्तिको श्रुपभम न उतारकर गान्धारमें मध्यममें पंचममें उतार देते हैं तब हमारे संगीतन निर्देशका स्वर अनुनय आनन्द और लजपयका स्वर इन आता है जगी तरह जब हम तुषो और अनुनाम बने स्वरोंको आनन्दका मूर्ति-भरा रम देकर बौमल-न धीमम उतारमें गद्गद शबर मुजर उठत है ती काम्य स्वरके मीठे-पनवा लाकारीवा अदलम्ब आरबर यज्ञाह हृदय-प्रदेगमें मोबा प्रवेश वा

जाता है। उस समय तानसमझी प्रदर्शनमें मुर-डारा बनी गयी किशरगठोकी तरह कोई बहू-या उठता है कि

बिधमा यह त्रिप जानि के ससहि रिय न करत ।

धरा मेर मख हाकिरि, तानसम का तान स

कवि बेचारा अपनी लाचारी क्या कहू। अपने ही स्वप्नसे पहले वह लुभ गीला होता है और फिर अपने उसी बीमबकी शोकरधिक सम्मुख रह देता है जबकि यह लाचारी प्रकट करता हुए कि - बिधाताने मुझे लग्नी तो ही है किन्तु उसमें तार नहीं रिये।

काम्य कबल एक ही जीवचारीसे सदा - मनुष्यस। मूझ और पुण्याब जब बिबिताकी बनकदुसारी और अयोध्याके बरबबिहारी बनकर कबिके अन्दरमें उत्ररे तब माषोंकी त्रिस भूमिपर कवि बैठा या उसमें प्रेरणाका भूकम्प क्यों न आ जाता। उस समय उसकी बन्तनीक बहिर्पा मानसदा निर्माण करे या शक्यतका उनके मूझक रूपके पयको रोकनेवाला कौन है ?

गज ही स्वल्पपर जाकर काम्य हो धाराबोमें बैठ गया। एक बहू चारा पी त्रिममें काम्योक्तिसे निकर तुलसी मषिबीधरप और कृष्णापनक रचयिता आ गये। य अपने बगमको अपने आराध्यके बिबचनको अपने आन्तके पापनकी इना आँखा उठस कि उस बचनमें अपनी कला अपना लाकिर अपना अस्तित्व सब कुछ मूझ बाते। उनके संकल्पोंको धारबत समाधिमें-ने उनके आराध्यकी सुगन्धि आती है। दूमरी जोर न कवि है जिन्हें प्रतिपाद स्वयम् है कि मूझ ही त्रिनकी लाचारी मूझ ही त्रिनका बीमब मूझ ही त्रिनका अस्तित्व है। बालिदाससे निकर बाण बिहारी प्रमाण निराला पस्य महादधी दिनकर मधोन और अपनी मूझोबा अन्त बीमब अपनी काही बुद्धि उत्रसा बनाकर उदिसनबाले व नमस्त मन्त्र ओ बलाक मैत्रनमें कुलम गकइनकी साथ मधर कल तक आय है और आज भी आ रहे हैं। गान और संगीतक धाम्यस्वकी तरह इन्हीं का

पाराशर्यपर काम्यका बेबाग वैभव ठहरा हुआ है।

कलम कुँधी छेनी या रस-मरे आत्मनियन्त्रण व्यवस्था कौशलको लेकर कसाकारते अपने अंगोंके टुकड़ासे ठोड़-ठाँड़कर ककाका स्वर स्वल्प और साव युग्ममें बिखेरना प्रारम्भ किया। जब-जब उसकी कछाइयाँ भ्रम उठीं और उसकी सूअें भ्रम उठीं जब-जब उसने अपनेको पत्थरपर पौधारपर, कागजपर कष्ठपर जमीनपर और अपने ही अंगोंपर उठरठा हुआ देखा तब-तब अपने रचना-कौशलकी हेरफेरकी चोटीपर चढ़कर उसने अनुभव किया कि जम्बूको छोटा माननेका जुएँका शर्बे मारना बहु हार चुका है। वह तो स्वयं अपने ही व्यक्तिस्वको मापते अपने ही तरंगमाय माप भावोंका कैपटा-जोषा पेश करनेमें उद्योती सिद्ध हुआ है। उसकी रचना समझिके आनन्दका साधन बनकर भी सुखमके पथमें श्रष्टिकी साम्राज्यका ईमानदार स्वोक्तितपत्र-भाष है।

श्रावण आया श्रावणकी कथा याद आती। बहुएँ और बैटियाँ उठीं उल्टाने गेरुका रंग बनाया और शीवारपर स्वेत पूछममि बनाकर बरखाओं के आम-नाम काँचिरि काँचपर रखे अपने आभे माँ-बापको बैठायें माथा करते हुए तरम श्रवणक चित्र बना दिये भी श्रावण मूँहपर लगाकर कृमवपुञ्जक चित्रके श्रवणकी पूजा कर दो। कलाकारके उम विकारको जितमें वह नारीकी श्रृंकारिणा कहता है नारीका मद्द श्रावण चित्रता स्पष्ट है — क्या नारीमें केवल अवरिणक लक्ष्य आकर्षणकी प्रेरणा मिश्रती है ? हम अपनी युगनिष्ठ अनृत्तिका बिस्वकी जननीपर यह आरोप क्यों करते हैं कि वह श्रियतमके रसम कबल विषम-मुल्य हुईती है। उदपने कलाहीन चित्र बनकर बैटियाँ बहनों और बहुजोकी अंग मापें श्रवण बनकर शीवारपर उठरती हैं और पूजित होती हैं उनमें जननीका उत्तर दामित्व अधिक सुजित होता है। वे विद्वकके निर्मलिका बरदान मीगती हैं फलदा अभिगाप नहीं।

चित्रों और मूर्तिमायी कला विद्वककी एगो भाषा है जिनमें अनुवादका

अविद्याप हुकर कर्मवित्त नहीं कर पाता । वह इतनी सख्त भाषा भी है कि जिसे समझनके लिए शब्दकोषोंकी आवश्यकता नहीं हुआ करती । वह एसी मोझी कला है वा बटनामाकी उलझनका पता दिये बिना हमारे अन्तरंगपर रमपूनावा और उसकी बेबैनियाँको बिलकुल बर्गना लड़ा कर देती है । मानो वह हमारे अन्तःकरणकी खिड़की है जिसमें आनन्दमय, उत्साहमय कल्याणमय अथवा शमावित्तके रूपमें हमारा सब कुछ अमर्फी रीक रहा हो । कलाकी लम्ही-लम्ही उलझो और मुझकी डारिमाँ अतीतसे बतमान तक दोषके दोषकी स्मरण-यात्रा मँकट बिजु है । कलाकी सामा मानवीय अनुभवकी मधुरतर बठोरतम और बटु शर्की सीमा है । नामों शार्पकों और बटनामोंका याह लीबत हुए, कलाका स्वर पूजाकी बरग-अवनि है । मानव विकारोंसे निर्मित स्वभाव युक्त-युक्तोंके कलाकी रचनाके रूपमें उलखत है और उन्हें दिये हुए नाम तथा उन्हें पहनाये हुए कपके आवरण तबया आच्छिन्नक रीक पहते हैं । बागीस कायल कलिए और सत-सत भावोंसे भिन्न-भिन्न भागके सोफोंके पृथ्वी-भरमें समझाते बठिए, किन्तु कोपछका बिजु लीबिए वा जीमें हुक उठनवाली उसकी कूकका परिचय कराइए और अन्-अनके मन तक सरलतासे पहुँचा दीजिए कि आप क्या कर रहे हैं । जहाँ जाल आनकाराक बोझमें बक सटा हा और मूदम बिचारकता उसकी बीमारी बन गयी हो बड़ी उस बक हुए यात्राका रथाके लिए कलाकी पुकार कीजिए । वह आराधनासीला जानकी रसा कर मे आपनी । जो लम्बे केवल बचनक द्वारा मानवकी समझमें बपों मही वा पावे मुक्त मर 'अपन'में उन्हें बाग भरमें समझा दिया ।

हाँ कला लहर है किन्तु लहर-बाज नहीं । कला लीबनक स्वभाव स्वयं और बीगलका बन्ध है टाक है किन्तु याचकनकी उँपकियाँ आपन अविष्णका लड़ मरे या बिडोह भर रंगम ज्योका ल्यों उठार सके रनक सिंह हमारी एक लहरकी अघात कहराकी विरलम मावानी

यानी साधनामय अम्मासको आवश्यकता है। हमारा बहुत सौन्दर्य
 अथवा साहस और अपरिमित आप्रह कलाका तरलत्व मात्र है। कलाका
 रूपवान और प्राथमिक तो हमारा चिरन्तन स्नेहमय अम्मास ही है।
 अम्मासके जन्म स्नेहवानके इस परमयोगम भी जितने ही दीप्त किये
 जायेंगे अज्ञानके स्तर कन्नामें-से उतने ही ठोके सठकर बोलने लगेंगे।
 बिना काम्य मूल्य नीत मूल्य कोई भी इसका अपवाद नहीं।

बिचार आया राय माया अनुपम आम्बोजित हुआ आदर्श गुरु
 मुद्राया और सोक-बीजकपर उतरनेके लिए, मानी बीजित रहनेके लिए
 यह सबके सब जस यह कलाका माध्यम है। जस पड़े वे किसीकी कल्पना
 कष्ट या कृषीके मोहताज हो। मूल्य कलाका बस है। माध्यम और
 अम्मास उसके पंच है जिनके बिना वह उठ नहीं सकती। आर्यासे
 वृत्ति तक और अपरिमित आरोग्यसे ईश्वरीय समझे जानवाके संकेतो तक
 कलाके जो डोरे हिक रहे हैं और उनपर रस भीबा किन्तु पय खोजता
 मानव विरवास बैठ-बैठकर उड़ता और उड़-उड़कर बैठता-ता जो रिबाई
 व रहा है वही कलाका जो मंचत इतिहास बन रहा है। रायके मुक्तोमल
 धर्मो तकने हजार-हजार बारीकी बुद्धिपूर्वक अम्मासके बार ही कलाक
 उस कौशलकय बीजित रहनेका बरदान दिया है। स्वाभ्याय और धर्म
 खोजकी तरह ही कलाके अस्तित्वको चिरन्तन रसनके आकषण-विशुद्ध है।

कलाकी यह श्रुति नहीं सोमयो कि वह कबल अपनेमें व्यस्त ही
 अपनी ही अम्मास है। आप बतक तो न मैं दूसरेके पुत्रको अपना न
 कई दूसरेकी बस्तुकी कलापूर्वक परावनके रत्नोद्घोषको भी आप अपनी
 मौलिकता न कहें किन्तु कलाका ही नहीं किसी भी उत्तरदायित्वके
 निर्माण-देखना पबिक औरोंको रचनाके प्रति उभेता और उदासीनता
 रखकर निर्माता नहीं रह सकता। वातावरणके मंचमये उधार किये
 बन्दे आर्यागर् और मुझे अज्ञान रह जानेंगी और अज्ञानकी उद्वेगता
 प्रकाशको पोटिबोटी किनी भी मूल्यपर खोहल न हो लकेगी। जिन

तरह की वस्तुओं पर रचना करने की प्रवृत्ति होने के कारण और हरबाइके
 सामग्री की उमीद साधना हुआ अपन पर पहुँच पाता है अपना जिस
 तरह अपने अन्त तक पहुँचनेवाला रूपक धनको कि मेरी और बगलाको
 पार करके ही अन्त अन्त तक पहुँच पाता है उसी तरह रचनागोचरको
 अन्त रचनामें प्रेरित होकर ही विषयको अपनी मौलिक रचनामें
 अन्त मौलिक रूपमें देना चाहती है। प्रणति की साधना यात्री गति
 पथ उमीद की रचना है।

विद्रोह ? ही आजका कलाकार विद्रोहको आवश्यकता अनुभव करता
 है। किन्तु जिस तरह वह अपने दोष आजका साहित्य कहना है
 उसी तरह आजका विद्रोह कलाकी कति कहना है। विद्रोह और
 कति - वे दोनों आजके अन्त और कला पुराने भाई-बहन कहना है
 है। समय आगत है। अद्यपि हम उसके दान टुकड़े करके अपना सम्पादन
 कर रहे हैं। जिस तरह विद्रोहकार जिसमें पुष्पभूमिपर छाटी-छोटी
 लोकार्थ बनाकर बस्तुओंके प्राथ और अस्तित्वका नाम कराया करता है
 उसी तरह हम समयके टुकड़े करके अपने अन्त और विद्रोहकार
 परिचय कराया करता है। जिस हम अन्तवास करते हैं वह अन्त
 छोटी पाठी और कतिपयके इतिहाससे भरा हुआ है। जिस हम अन्त
 का कहते हैं वह अन्त नृपति-राजिका अन्त विद्रोह है। जिस हम
 अन्तवासके अन्त विद्रोह पाया है। किन्तु जिस हम अन्तवास करते हैं
 वह हमारे अन्त-से इन तरह अन्त रखा है। अन्त वह अन्त अन्त
 और अन्त ही अन्त विद्रोह आया। अन्त हम अन्त अन्त विद्रोह
 अन्तकी अन्तकी तरह अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 अन्तके अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 और अन्तकार अन्तकी पाठीमें अन्तकार न अन्त अन्त अन्त अन्त
 अन्तकी अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त
 अन्तकी अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त

उसे भूतकाष्ठक हवींने परखा न भविष्यक मूमकी किरासे उसकी जीव
की । हमें अबकास कहाँ था । पानीकी अट्टानपर अपन सपनोंके चित्र
बनात बैठ नम है । अतः वा कासकी पुठमूमि बुननेमें भूल करता है
उसके चित्र बुनने हों उसके नीचे सुकह हा उसके स्वर अबहीन हों और
उसकी इच्छाएँ लोकरचि तक पहुँचनम असमय हों तो इसमें आसचय
क्यों होता चाहिए ? युग बधुकी अमर मूपुर ध्वनि बनगके लिए चरच
रत्नकी बसीत दुःख जो चाहिए । इसीलिए भूतकाष्ठ यानी इतिहास ऐसे
निर्माणोंको अपने पास संचित रखनसे इनकार कर देता है और बतमान
काष्ठ यानी लोकरचि उसे सुननमें बहरी हो जाया करती है । यही कारण
है कि आजके तद्वचको सुनने बिहोइके लिए आमन्त्रित किया है ।

ध्वन्यालोक लोचनम अभिनवयुग्ममे प्रतिमाक विषयम लिता है—
'प्रतिभा अपूर्ववस्तुनिर्माणाया प्रजा । आजका कलाकार इस कथनको
टासकर नहीं इस कथनको सम्पूर्ण मानकर बिहोइके लिए उपस्थित
है । इसलिये कि शीते युगके कलाकारोंन और पाठकनि कलाका स्मरण
नहीं बिस्मरण माना । कला मानो जगत्के इन्द्रोको मुला देनेमें एक मोइक
कोमल सुन्दर मुलावा रही है । आजका कलाकार कलामे कर्होका इतिवृत्त
निखनकी अमता चाहता है । वह वस्तुस्थितिक बिस्मरण नहीं चिचक
चाहता है । बरास्तहा वीराम बनकी हृदयहीनता और उद्वेगता और
कलाकी बिस्मरण-नीलनाका काम्यघातन बिनाह-आजके कलाकारके म
सब मानो एक ही पैसीक अट्ट-अट्टे है । वह साहित्यको दोनो गिरोंन जसारी
आनवासी मीमबलीका एमा ऐम नहीं मानता बिचक प्रकाशके कुछ मानी
न हा और जिनका अस्थित्य धन-भरमें नष्ट किया जा सके । इसीलिए
आजका कलाकार कामिशाहता कला-बीमब लकर तुमनीदासके चरनोंमें
अज्ञानको बाध्य है । बहीमी मुलावा बनकर बाहे घराबन जाने चाहे
कथाम अबतक राम-राममें रमकर अभिम्नको धाँसी और उँगभिम्नोंर
उदारनकी शमता जग बेहोमीमें न हों आजका कलाकार उसे बिचकना

स्मरणनु मानक लिए तैयार नहीं है। आजके चिन्तकके लिए कला व्यवहारका ऐसा आवरण नहीं है वा यथायक कष्टसे बचा के जानेके लिए तैयार होना वा सक और पीढ़ीको भी बाल्या ज्ञानके लिए समझ कर सके। वह यह भी नहीं मानता कि प्राचीन कौशलको बोझ-सा बरत बनसे नहीं कलाका निर्माण हो जायेगा। वह मानव चारणाकी समुची पुष्टमूर्तिमें ही परिवर्तन चाहता है। मूर्तिके तित सब वैभवस मरा कला ऐसी मूस हीन कैसे होगी जो बहसत मुपका सामना न कर सके? किसी युगक कलाकारका बिष्णु संपत्ताको गोदमें केटे हुए कश्मीस पैर बबघाटे हुए दीरसागरमें निवास करता वा। बहस युगका बसिपन्थी कलाकार साधु भवन भवन बनकर थाया और उसन दीरसागरस कीचकर अपन प्रभुस नामदेवकी कुटिया बनवासी। भिन्न-भिन्न रूपाम सत्ताम अपन मासिक-से कौन-कौन-सी मङ्कुरियाँ नहीं थी। यदि आजका कलाकार अपन सक्त पूजकोंकी इन स्तह-मयी मूर्तसे सबक लेता है तो उसे अपराधी कैसे माना जाये? जो चारणाए बहुत बुरी हा ययी है जिनमें बिदबमें बहन-किरणकी लम्बा नहीं रह ययी है, वे समाधि क्यों न के लें? यदि वे निमित्त जानेसे पड़े समाधि के लेंगी तो इतिहासमें ठहरनके लिए जगह पा लेंगी नहीं तो वे सौत लेकर बीनबासा मुरवा बनकर जिये भस ही वायुपालको गतिमें शीङ्गते हुए बिदबके द्वारा उनके धाम्यमें मष्ट और बुगन्धित ज्ञाना ही लिया है।

ऐतिहासिक पुष्टमूर्ति धार्मिक चारणा राष्ट्रीय आवरणकता नैतिक आवरण और व्यक्तिगत मर्ते और पकरते ये अपनी जगहपर ठाक है किन्तु ये अपन बन्धनोंमें बकड़कर कलाकारम सब कुछ मर्ते उसस मूस हीनता और स्तहहीनताकी मीय न करें। ये उसे इय न दें किन्तु उसका ज्ञान न लेंगे ये प्रेरणाकी पवित्रताका अविमान अपनमें रखें अनुकरम-की अनुधारताकी मीय न करें। कटिपोंके अनुधारता मीगी की और बहीर मुक्तो और मीरान बिदोह किया वा। परम्पराके वैभवके रचोंको त्याग कर

आत्मका कलाकार अपने ही पैरों यात्रा करने लिए बाध्य हो गया है। वह जान गया है कि परम्पराके विनाश बटवृत्तकी अपेक्षा मूसक बने नहूँ नहूँ पंगोंपर उठके घड़ाके अस्तित्वकी उद्धार सुरक्षित है। जिस नवीनता से हम घबराते हैं उस नवीनताकी प्रेरणा तो हम अग्राप्य मरिच्यन नहीं प्राप्त इतिहासने ही की है। मन्द बुद्धि कठिको छिरपर लादकर बलती है और ताव बुद्धि आत्मकी अज्ञानताको कलाका आश्चर्य बनाती है और परमाके अम्मासका रूप देकर आये दिनके आधिपत्यरोंका निर्माण कर मुगके वैभवक रूपमें उन्हें प्रस्तुत कर देती है। आधिपत्य निश्चयकी स्पष्ट छाया है। कला और साहित्य दोनों इस निश्चय इस नियमसे घबराते हुए नहीं घोभने। नियम तो मूसको मसुरास है। यदि उसे गुञ्जलघोला रचना है तो निश्चय तक पहुँचकर ही।

जोन मालेमे अपने 'जोन कॉम्प्रीमाइज' ग्रन्थमें एक जगह कहा है कि यदि समाज कुछ हासिल कर सके और प्रभावामे जकड़ा हुआ हो और नवीन विचारोंका दाग हो तो कमी-कमी अपने विरोधको हमें रोककर रखना होगा। किन्तु कुछकी स्वीकार और कुछका इनकार करना मध्यविन्दु कलाकी उद्धारमें नहीं बसा है। उसका रस सम्भवतः अमरत्व है और चिन्तनसह जड़कर निश्चय तक बढ़ जाता उसका मुकीमल पथ है। यह सम्भव नहीं कि अपने रक्तमें बनी हुई आत्मप्रकटीकरणकी मूलका वह अपमान कर सके। पूजाकी पवित्रता का आमेके बाण मूर्तोंको समान घोसता अपनी नहीं अपने अमिमउकी बलु हो जाता करती है। यदि एना कलाको कलाकार रोके तो माधु विनोबा उसपर वह अपराध लगाये बिना नहीं छोड़ते कि कलाकार अपने माधुय भरे पुरुषावका अथवा पुष्पाव भरे माधुयका आत्मविलासी हो गया है स्वयं प्रयोग करके सना है। वे कहते हैं कि घड़ाने मूर्तोंके आसमानकी पानी बरसाया किन्तु कठिक हिमास्यपर वह एकदर बनकर बैठ गया। नीचे जन-जीवनमें जाता हुआ प्रवाहबरो घंटाके इन स्वभावमे बढ़ बबरा घटा। इनीलिए वाच्यशास्त्र

बिनादेन काला गच्छति योमताम्'की बात हम मुझ तक नहीं कहाकारकी स्वीकार करती है। वह ता हमके आत्मसे यथीता होकर भी जीवनकी जीमत् कृतनसे इनकार नहीं कर सकता। वह मोक्ष-जीवनकी उपेक्षामें पुण्यापका अनुभव नहीं करता। वह जीवनकी पूर्ण जीमत् कृतन काहता है और उसपर हँसकर मिट जानमें रमना अनुभव करता है। यह सब है कि कलाका प्रथमका व नहीं छू सकत जो तन्मयता न उत्पन्न कर सके। जिन्होंने मस्त्र बसना ही नहीं सीखा है व मस्त्र मारकर यदि हैराबा की यात्रा करत भी तो क्या करते। सब ता यह है कि कलाकी प्रथममें वरपक्षे तच्छ समाजक मंचित बन्ध और भविष्यक संवसना काग होना चाहिए। करते हैं कला जीवनका प्रतिबिम्ब है। यह प्रतिबिम्ब बीसा जो बिम्बकी बमियां न मुसा सक।

जीवन ता मानवकी बलिखो राकनेवामी स्थापनमें लड़त हुए उनका नाग करत और अनुकूलनामें गहनबाके काँटीका उल्हाह फेंकन और मुयकी पुष्पक पत्तीका उधरधामित्वकी स्नेह मरी उँगडिबामे पकटत बालमें ही अपनी परिनाया देखता है। कला हम जीवनम दूर रहकर करती रहती? क्या जीवन बनता रहगा और कला बामुछी बजाती रहती क्या वह इतनी शूर इतनी निष्पूर हो सकगा? जिन तरह समुकी कहूँ तो-सी पील आय और पीछ जाकर भी गम्भीर बसमें घाबरत संवसताका निर्माण बिय रहती है उधा तरह कलाकी प्रचित मयुग पीतक प्राबमय रहत हुए भी हममें जीवनकी संधारनकी वास्तव संवसना होनी चाहिए।

महान् मुजर कवि मानासापन एक बार लिखा था कि पूर और पश्चिम कुशीका तराजूक व दोनों पकड़ है और भारतवष इन दोनों पकड़ोंके बीचकी डोहा है। मानासाक जो अन्तरदायित्व भारतीय कलाका भीरना बाह्य है अनुकर हममें क्षमता ही कि हम उसे स्वीकार कर सकें।

क्या देखके नसोपर बला बदना काँ बिहू नहीं बाहूठी। बिहूके

मानी है प्रतिनिधित्व । और उत्तरवायित्वके अंतरेसे अपना मुँह खुलाकर
 प्रतिनिधित्व कैसे ? मोहक अक्षर मोटे अक्षर अक्षर सब समोनी आकृति
 सुन्दर स्वरूप इन सबके एकजिह्व काँजीहाउसका साहित्य कैसे वह
 सके ? पीबित समाजके प्रतिबिम्ब तो स्वयं बीबित होये । एक दूसरे
 से बोलत हुए, एक दूसरेसे होइ छिटे हुए । देशकी स्वतन्त्रताके बीर
 महीनोंपर बैठकर ज्ञानका खेला-खेला खेनवासे हम खोम अपना लका
 खाला मना न भूँ । सँघ खोम अंतरे, परिवर्तन क्रियाशीलता और
 पुण्याय इन सबके बीच हमारी प्राणवान् कलाका स्वर प्रतिबिम्बित
 होना चाहिए । हमारी कला देशकी उचासियों-वैसी अल्पप्राण न हो ।
 वह दबाओं-वैसी महाप्राण हानी चाहिए । समय तरङ्ग अठान्ठियाके
 परचातु भारतीय स्वतन्त्रताको टूटी कड़ियाँ फिर जुड़ी । इन कड़ियोंके
 जुड़नका स्वर हमारी कलामें प्रतिबिम्बित होना चाहिए । मुझे तो एक
 ही बात कहनी थी और मैं एक ही बात कही कि प्रभु करें यह मस्तक
 और यह मस्तकपीछ उस देशकी आराधिका राधिकाके स्वरके लिखबाइ
 बन सके जिसके आकर्षणसे प्रभावित मुरझीयर गिरिधर और कृष्ण
 मुरारी कहला सके । खोदन हमारा कृष्ण हा नका हमारी राधिका हो
 और हम एव तीर्थवासी हो जो अपने ईश्वरपर अपना समस्त अड़ा सके
 अपना सब-कुछ समर्पित कर सके । तथास्तु ।

श्रीरिज्जल डॉक्टरेस परमा

१९४८



विजयी होवे यह मापा - यह राज

मे अग्रगण्य कृत्तव्य हैं कि भापने मुझे इस संस्थाके उद्घाटनकी सेवा मीची। यद्यपि अहं आपका यं सवाएँ अधिक ससक्त हापामे मीरनो जात्रिए बी। यह कृत्तव्यको हां आप चौंते तो यह सेवा तो इस प्राणमें महान् मनीषी पण्डित साधनप्रसादजी पाण्डित्यको अधिक घोषणी। मैं तो उनक चरणोंक दिक्क बैठकर भी बहुत मुक्त पाठा।

यद्यपि इस संस्थाका जन्म १९१९ में हुआ है किन्तु २९ वर्षोंमें इसके केवल १९ अधिवेशन हां सके हैं। मन् १९३१ तक हमारी यह संस्था प्राणकी राजनीतिक परिपक्वके साथ चलती रही। सन् १९३१ क वटनी अधिवेशनक पश्चात् इसके अधिवेशन स्वतन्त्र होन लगे। इस बात पर बहुत चिन्ता व्यक्त की जाती रही है और आज भी की जा रहा है कि प्राणक हिन्दीभाषियां और हिन्दीप्रेमियोंका एक इस प्राणतीय मासिक्य सम्मेलनकी आर उन्मोदनाका है। मरे विचारमें प्राणका एक इस संस्थाकी और जीवनमें आपकी मच्छन्ता तब मिलेगी जब इस संस्थाको आप स्वयं स्वतन्त्र संस्थाक रूपमें देवना जाहेंगे। उपका धर्म ये है कि एक तो आप इस संस्थाको जरूरी जातेको एक परम्परागत क्राइल बननेम रोहें। आप सरकारी मामलोंका इस सम्मेलन-द्वारा स्वायत्त करें। उनक निष्ठा आप स्थायी लभितिक विशेष अधिवेशन मां कर लें। किन्तु इस संस्थामें-म यदि सरकारी प्रमुनाकी मध्य आवगी ता हमारी सरकार हां जानके पश्चात भी जनताकी विद्वता दक्षिण और अन्तर्गामे महान्नाया निर्माण करनेवाकी स्वतन्त्रपेता दक्षिण और जन जीवनकी महान्-अर्थ्य निष्ठा देखाएँ इस संस्थाकी और जाफपित न हो

पायेंगी। इस छो इस संस्थाकी या आप बीजा-बाहिनीके बरत नृहस्पतिके
 तप करत और तपीबसपर बिस्व-निर्माज करतका स्वाग बनाइए।
 राजमहिषोपर आसीताके मुकुट और महल मोसामपर विकटे देखे जा रह
 हैं। किन्तु नृहस्पतिकी बिद्याकी चुनीली बेनकी घक्ति किसी युगमें नहीं
 भी किसी युगमें न हो सकेंगी। इसी तरह बच-बेचकर नहीं। इस
 मन्दिरमें बच और प्रभुता पूजा पाले नहीं मस्तक मुकान ही बामें। बल
 लगाइए कि आप और हम इस बनीका इतनी पुबनीया बना सकें। दूसरे
 इस देशकी महान् संस्थाआके प्रयत्न में उन सीमा तक बिफल है जब
 तक वे प्रभुता नेतृत्व प्रयत्न और संवाम ऊपरस जनतापर सादे बातें
 रहे हैं। अतः अब संस्थाओंमें सीधेस साधारणतामें-स बल पालका
 आयोजन किया है इसलिये कि देश-सेवाकी ये संस्थाएँ जीवित रह सकें।
 साहित्य सम्मेलनकी भी उसी पथकी अपमाना होगा। अब सम्मेलनका
 प्रांतीय कार्यालय उत्पन्न और पठनका पूरा उत्तरदायित्व अपने सिर
 पर लेकर इन संस्थाकी रखा करतमें सफल नहीं हो सकता। हा भी कैय
 सकता है? हमारा यह दावा कि हमारी माया देशकी माया और हमारे
 बिचार उस मायाके बोधनेवालोंके बिचार हैं कैसी बिहम्बना है। हम
 राहरीमें रहते हैं। शहरके कुछ लोगोंको लेकर बिचार करते हैं और
 परइ श्री सदीकी आवाही और २ श्री सदीके बिबैकका स्मर साहित्यिक
 व्यवस्था देते हैं और कहते हैं कि यह समस्त संस्था बिचार है। हम
 व्यवस्थाको बदलना होना। हमारा यह वर्ष मुठ्य है कि मौखिक साहित्य
 नहीं रहता या साहित्य नहीं समझा जाता। तुम्होबास मूरबास कबीर
 इनमें-से कौन भी न राजगद्दा प्रत्य कवि है और न सहररलीपनका दाधित।
 हमपर मजकी बात यह है कि नाँकका आनीग समाचारपत्रोंकी घारी
 रोड़-भूपके परधान् भी प्राचीन कवियोंके प्रति अपनी मज्दाउ रनपता नहीं
 है और बनमानम कविता निवतनाका ओर लमपता नहीं है। इसलिये
 हमारे बनमानके प्रयत्नाओ मौखिकी आर मित्रसाइए। पुस्तकालय और

बिहारमें हम दिवामें कुछ प्रयत्न हो रहे हैं। वहाँ जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन और जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलन होन लगे हैं। मध्यप्रदेश मध्यभारत राजस्थान दिल्ली प्रान्त विन्ध्य प्रकम और उत्तर प्रदेश पहाड़ी जिलोंमें जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलनोंके प्रारम्भ करानकी निश्चयता था। यदि आप यहाँमें साहित्य संकर बायेंगे और यहाँकी सन्निधियोंके जिले-जिले और तहसील-तहसील आमन्त्रित करने तो हमारे विद्यार्थ बनकर मुचित रहनबाके लोभोंकी मुर्दा छुनेगी और गाँवका संस्पर्ध और सम्पर्क पाकर भाषा और साहित्य निहाल हा उठेंगे। हम गहरमि जनपद और आमन्त्रित रहनका बंदू भाषाका-सा स्वभाव साधना होगा। मुझ पून बिदबास है यदि इस प्रान्तमें जिले-जिलेमें हिन्दी सम्मेलन होन लगे तो हम प्रान्तकी अन्य संस्थाएँ भी अस्तित्ववादी हो उठेंगी। और यह हिन्दी साहित्य सम्मेलन वा लुप्त कृतन-कृतने लगना हा।

तीसरी बात यह कि भीलकी भाषा और मूलकी बोलीसे इत्यादि साहित्यकी रक्षा करें। गहरके लोभ साधनके व्यक्ति और धर्मिक प्रभुताएँ हम संस्थापर अपन बरदान बरसाय बरसायें किन्तु पिछले छत्तीस वर्षोंसे क्या आप कुछ सीखना चाहते हैं? जन और प्रभुतान आज तब हम सम्मेलनके सिद्ध किन्तुने भवन बनबा दिने। किन्तु पुस्तकालय लड़े करके हम सम्मेलनकी ज्योतिषी अपन किया अपनी पाण्डुलिपि छातीसे लगाये रखनबाके लेखकोंकी मूल्य और कठिनाइयोंका किन्तुना ध्यास रखा? आपमें-से हर एककी दो हथेलियाँ हैं। आपमें-से हर एक अपनी मकदुरीकी काठी कमाईमें-से बेने-बटियोंका म्याह करत है। यही बदा साधनका कर भा देते हैं। जीवनमें आप देखत क्यों नहीं कि वैरोंके ऊपर पैर मल हो किन्तु पटके ऊपर हुरय है, हुरयके ऊपर कण्ठ है और कण्ठ पर मस्तिष्क है। क्या हुरय कण्ठ और मस्तिष्कके बिना भी कार्य जीवित रह स का सकता है। अतः आप अपन पैरकी गान्धी कर्मायें-से हम संस्थाका लोभ

निर्माण कीजिए। बादक पुष्पीके जलाशयों ही से बनते हैं और फिर जलाशयोंपर ही बरसनेके लिए लीट पड़ते हैं। आप प्रबल प्रतिष्ठा प्राप्त और पीढ़ीके शानका निर्माण साहित्यसे लेकर करें किन्तु जो कुछ पावें उसका संस्र संकर लीटकर साहित्यपर क्या न बरस पावें। क्या कठोर पवित्रके द्वारपर ईमान रहन रखाकर भील माँगती हुई आपकी मातृभाषाके उससेअर आपको मली मालूम होती है। यदि आप अपनी सहायताके रूप-रथ लेकर उपस्थित हा तो इस महान् कोपम हृदयमान् बनपति सपना संघ निकाले बिना न रहेंगे। किन्तु इसे पहले अपने जीवन और साहित्यकी कृत्रिम परिभाषाएँ बदलनी होंगी। बिना तो यह जो मुक्त करे और बिडान् बहु जो भील माने - किसी बिडम्बना है। जत पीढ़ी उठे पीढ़ियाँ उठें पीढ़ियोंके प्राच उठें पीढ़ियोंके मस्तक उठें और अपना एक कोय निर्माण करें और उस एक श्रष्ट बनाकर किसी ईकमें रखवा दें। यदि भूमिकरकी तरह साहित्यका पर भी हिन्दीभाषियों और हिन्दी प्रेमियाकी अनिश्चय बाधस्यकता हो जाये तो घासन और घनवान् दोनोंके इस विषय किन्तु हुए प्रबल निश्चयक रूपसे काममें आने लगेंगे। नहीं तो जिस तरह क्या बरिकों और घासनका होना उसी तरह इच्छाएँ भा उम्मीदी हापी और काय भी उम्मीदी मरबीसे हाये या न हाये। जबतक जनताका जन साहित्य सम्मेलनका काय न बनायेगा तब तक साधारणसे साधारण साहित्य भी निश्चयक प्रकृतिकोके अनुनूल साहित्य सम्मेलनके निर्माण-कार्यमें कुछ अधिक न कर सकता।

जबम हिन्दी राष्ट्रभाषा घोषित हुई है तबसे आज कहते हैं कि हमारा उत्तरदायित्व मुश्किल हो गया है। यदि आपको पार ही ता अलिक भारतीय लिखा साहित्य सम्मेलनम अपने जग (१९१० कापी) के कृमर रूप (१९११ प्रभाग) के अधिसूचनमें हिन्दीकी राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया था और अब १९१८ (इन्दीरके आठवें अधिवेशन) में महारमा याशोमे हिन्दीके विस्तारक इतको अपने निश्चयक कामजनमें राष्ट्रभाषाका

प्रदान बनाकर से किया और उनके लिए बड़े पैमानेपर देशभ्यापी प्रयत्न
 किया तब वह मध्यम्या समस्त इसके ध्यान बनकी समस्या बन गयी और
 हिन्दीको विविध रूपोंमें सबल सम्पन्न और यद्योभवत बलानकी जो
 निय बनैबाले अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनके प्रयत्नोंमें
 मित्र प्रान्तोंके तथा मित्र भाषा भाषी भाई भी सहयोग देत सगे । किन्तु
 जब हिन्दी और हिन्दुस्थानोका प्रश्न उपस्थित हुआ तब समस्त देश हिन्दु
 साहित्य सम्पन्नके अर्थके साथ जुड़ा होकर पूज्य पुरुषोत्तमशामर
 टण्डनके अधिनायकत्वमें अधिकारिक बलपूर्वक राष्ट्रभाषा हिन्दीके
 राष्ट्रभाषा स्वीकार किए जानेके पक्षमें प्रयत्न करने लगा । मैत्र गुजरा
 प्रान्तमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अध्यक्षके माते स्वयं देखा कि पौरवर्म
 गुजर गोवर्धनके उपानक अधिक संख्यामें हिन्दीकी राष्ट्रभाषा बनाये जान
 पक्षमें अपनी सम्मति रखत हैं । हम जिन उत्तरदायित्वकी बात करत
 उनमें यह परम आवश्यक है कि हम जाने कि इस देशकी राष्ट्रभाषा
 अपनी प्रान्तीय भाषाओंके साथ मिलकर ही बनती है । उनसे भिन्न पड़
 होकर नहीं । यदि हमारे देशके भिन्न-भिन्न प्रान्त समुच्च महान् देश
 भाष्यक बटक हैं ता हमारे प्रान्तोंकी भिन्न-भिन्न भाषाएँ हमारी राष्ट्र
 भाषाकी महापुष्टक क्यों न होंगी और उनका बल अस्तित्व की
 और परस्परसंबन्धी क्यों न हुआ । यदि समयसे पहले इस इस बात
 की न समझ सके हों तो हम देशके लोगोंको इतना प्रतिभाशून्य तो न
 होना चाहिए कि वे समय उपस्थित होनापर भी हम करके आवश्यकता
 भावजन न कर सकें । मध्य प्रदेश ही बहु अटकला प्रान्त है जहाँ हम मि
 कर सकने हैं कि राष्ट्रभाषाका व्यवहार अपने प्रान्तीय अंगों अर्थात्
 भाषाओंके साथ बना हा । हमारा प्रान्त विभाषी प्रान्त है जहाँ हिन्दी अ
 मराठी भाषा बाली जाती है । यदि यहाँके हिन्दी अटकल नहकरा अ
 बालकवि अथवा साहित्यकार और देशपात्र अथवा आमजनक आ
 और भाषा मराठी ऐगकोंकी नहीं पड़ सकते ता इसे हम गौरवका न

कल्याणका विषय मान्य है। ज्ञानपर सञ्ज्ञानका धारा न राष्ट्रका निर्माण करता है और न राष्ट्रभाषाका। ज्ञानिक हृदयमें ज्ञानीकी पहुँच और भाषाशास्त्र बन्धनोका लीनकर जन-जनक जीवनक पास पहुँचनवासी हमारी कलाकृतियाँ जिस मनोभूमिका निर्माण करती हैं उसीसे राष्ट्र बनवान् रहता है। राष्ट्रभाषी यह भी अनुभव कर कि उसके कलाकार अन्य भाषाशोक पर ऊर्ध्वकी तरह उधार दिमें जानकी वस्तु नहीं। प्रान्तीय भाषाशोक हिन्दी भाषाकी तरह ही और कृच्छम तो हिन्दी भाषासे नहीं अधिक कलागुस्ता विद्यमान है। हिन्दी भाषा तो राष्ट्रभाषा इसलिए बन गयी है कि राष्ट्रके हृदयका एक हृदयमें ओढ़े रखनेके लिए अब एक भारतीय भाषाकी आवश्यकता हुई तब हिन्दी ही सबसे अधिक देशके लोभाकी अनर्गल्यामें समझी जान योग्य भाषा सिद्ध हुई। कला कोषकी पूर्णता वा हम समस्त भाषाशोककी कला रचनाका अपन आदान-प्रदानके द्वारा एक बनाने और इस तरह देशमें निर्माण होगवासी समस्त कलाकी भारतीय राष्ट्रका मौलिक कला सर्वत्र मार्ग। यदि हम अपने घरक मरुद कुछ कम करें वा इन देशके बुद्ध और वैश्विक युक्ति तीव्र-वाचिकोंकी तरह जात्र भी हम भारतीय राष्ट्र भारतीय संस्कृति भारतीय प्रतिभा तथा भारतवर्षका निम्न संश्लेष लेकर पश्चिममें कुस्तुकुनियाँ और पूरवमें जापान तक हमारी नम्र प्रतिभाकी अमल सेवाएँ एशियाक मिश्र-मिश्र लक्ष्योंमें पहुँचानी हैं और वहाँकी जाग्रत प्रतिभाके सज्जन प्रकाशोंसे अपने राष्ट्र और अपनी राष्ट्रभाषामें दीपावतियाँ सजानी हैं। इसलिए भाषाका गृह-कलत्र अब बन्द होना चाहिए।

इतो प्रसंगपर मुझ इस भाषाके विषयमें कुछ कहनेको आवश्यकता प्रगात होती है जो कुछ सरकारी और कुछ निर सरकारी टकमालोंमें पडी जा गयी है। वे निम्न हिन्दीका संस्कृत ज्ञाना अभ्यावहारिक मानते हुए भी हिन्दीका द्विर्वाचना अमल्य समझने लगे हैं। हिन्दी अद्यत्में चार ती वर्णमि भाषाक नात जन-जीवनकी और भारतीय जन-जीवनक अविनाशनी

सौम बनकर रही है। किन्तु अब हम धर्म बरकरार कठिन बनाया जा रहा है जिन्हें उद्भू-अरसीको कठिनताकी विकल्पत भी उन्हीक द्वारा संस्कृत धर्मोंकी कठिनता जिन्होमें अनिश्चय माना जाने लगी है। कठिनाई तो यह है कि हिन्दी भाषाके गढ़नवाले हमारे कुछ विद्वान्, संस्कृतके धर्मोंका भी धर्मके ल्यों नहीं गढ़ते हैं। यदि बोस-बाष्टका धर्म भाषामें रहता है तो जन-जीवन उस समझ फेला है। यदि धर्मोंका ल्यों संस्कृत धर्म जाता है तो वह भी देशके भिन्न-भिन्न भाषामें उनकी मूल वास्तुक द्वारा पकड़ा जा सकता है। किन्तु संस्कृतसे हिन्दीकरण किये हुए धर्म और उनका धुम्राधार निर्माण जन-जीवनकी समझके सारे दरबाजेपर पहरेदार बनकर खड़े हो जाते हैं और जन-जीवनकी समझको जाने नहीं बड़न देते। एक दूसरी कठिनाई भी है। क्या आप हिन्दी भाषामें इतने नये कठिन धर्म ढाल देना चाहते हैं कि पन्द्रह बपके पश्चात् जब भाषापर पुनर्बिचार करतका समय आवे तब लोग यह कह सकें कि हिन्दी नामकी तो कोई भाषा भी ही नहीं। उसे तो मत पन्द्रह बपोंमें डॉक्टर रघुबीर और उनके साक्षिमान गढ़कर खड़ा कर दिया है। मेरी समझमें नहीं जाता कि भिन्न-भिन्न भाषाओंके उभूके भी जो धर्म मराठी मुजरावी पञ्जाबालम तमिल तस्यु अहिमा कद्रइ और बँपला भाषाओंमें चल सकते हैं कौन कहना चाहता है कि वे हिन्दीमें नहीं चल सकते। यह तो आवस्यक है कि धर्मोंकी धनुओंकी कुछ रक्तनके लिये हम अपना आवश्यकताक धर्म संस्कृतसे लें। जब मयास तिम्बत सिंहस ब्रह्मवेम और इन्वार्नेमियामें संस्कृत धर्मोंन यात्रा की है जब पस्ता और अरसीके धर्मोंके मूलाधार संस्कृत धर्म है तब भारतीय भाषाभाषी पुरुषमूमि संस्कृतरहित ही यह नितान्त अस्वाभाविक है। किन्तु हम संस्कृत रतिन धर्मका पदनिधाकर भाषामें निवासनका प्रयोग राष्ट्रभाषावा निर्माण करापि नहीं बड़ना सक्या। अत इत दिवामें हम अक्षिप्त भारतीय हिन्दी बाहिरय सम्मेलनक प्रयत्नात कुछ प्रांतीय धारणां और

कुछ विद्वानोंको सनककी अधिक महत्त्व न पड़े यही हमारे लिए भाषाके क्षेत्रमें उचित मांग है और मेरा निवेदन है कि भाषाका यह सम्मेलन इसी नीतिका अंगगाये ।

अब कुछ साहित्यपर । हम बहु जानें कि समूचे साहित्यको इन समय ठँका चठना है और हमारे कुछ व्यक्ति साहित्यकी पुस्तकी विधाएँ चुनकर इनमें पड़ जायें । किन्तु बिना ब्रेक बीसेम्सकी जनिकताकी तरह बिना पत्रे-मिस्त्रेपनकी साहित्यिकता हमारे बीच बहुत पनप गयी है । मध्य प्रदेश ही की बात मैं नहीं कहता । मैं तो समस्त हिन्दी क्षेत्रकी बात कहनेका साहस करता हूँ कि हम और-औरे बिना पढ़ने-लिखनेवालों को कौम बल्लत जा रहे हैं । स्कूलमें हो कॉलेजमें हो जन-जीवनक किती भी क्षणमें हो हमारा अधिकांश पाठप-पुस्तकाको छोड़ दें तो प्रायः बिना पढ़े बोझता है और बिना अध्ययन किसे बनसकी सँरात बाँटता फिरता है । यदि एक विधि निश्चित करके आप हिन्दी-अगर्त्में सामन्तसि कवाकर साहित्यको एक सबकी तमाशी के डारें तो आपको सनके गृहजीवनम पुस्तकासे अधिक किनी वस्तुका विकास कडा हुआ न बीरगा । फिर बातीको पूरी और बातीके छद्मभोके व बावदाह का ज्ञान देते हैं ये जाने या बजान बोला ज्ञानके लिए देते हैं वा बोला देनेके लिए । काचारी की तरह हमपर पढ़नेवाली कुछ पुस्तकोंको छाड़कर मानो हम कुछ पढ़ते ही नहीं और कुछ लोग तो उन पुस्तकोंको भी नहीं पढ़त । तब वसात रूपमें नाहूँ बच्चाइ सामन विद्वत्ता बजारनवासे अध्यापककी तरह हम अपनी बुद्धिका प्रबसम जन-जीवनम दिबे जा रहे हैं । हमपर पढ़नेवाली आज की भडा या तो समस्त बुद्धिीनताका व्यवसाय है या अपने बड़ापो मूर्ख न बहनकी पीढ़ियोंको गिष्टना या लौकिकचिते अपनको न पिरने देनेका इमारी बुद्धिका उपग्रह है जो सम्पूर्णत पराभित होकर भी पराजय स्वीकार करनकी भूल नहीं करता । मेरा निवेदन है कि हम पत्रे हम अध्ययन करें और बोली जानेवाली भाषीमें अध्ययनपुल प्रमार ही अपनी

वीहीको प्रधान करें। यह न समझें कि केवल भाषापर लिखे गये ग्रन्थ ही हम देशको उन्नत कर ल जायेंगे। मित्त-मित्त प्रकारके अध्मयनों गाथों आन्ध्रकारों और इतिहासों तथा उद्योगों और कलाओंके प्रत्नोके रचना-कारोंको भी हम साहित्यक महान् मन्दिरका अधिकारी समझें।

कला। बह बुर समय कलाकी याद आयी। यह तो हमारा साहित्य सम्मिलन है न। हम साहित्यको विद्वध्याप्त मानते हैं और कलाके क्षेत्रमें भी साहित्य और काव्यका स्थान स्वभावतः बहुत ऊँचा मानते हैं। बर मूर्तिकलाको देखिए। हम तो अजयमें कासबपर इच्छार्ण और संकल्प लिखत हैं किन्तु बर पत्थरपर होंठ और जीभें बनाकर उनपर मानवकी मुसकराहटकी उतारनेवालेको धार भी दृष्टि बालिए। कहीं पत्थरकी कठोरता और कहीं मुसकराहटका कोमलता। एक पायकी मूर्ति है। एक गायी स्तन पकड़ हुए हैं और एक बच्चा कीभउ सियटकर दूधक सिए सबड़ रखा है। इन मूर्तिका सार विश्वम बही भी मेरु बीजिया। अप्ठुका इर आदमी पड़ संभा। मूर्तिके बार चित्र। यही पत्थर नहीं काइन पड़ने कागबपर रम उतारन पड़त है। य भी दुनिया-भरमें पड़ बा सफ्त है। परन्तु ये पानीमें मय्त है आगमें बलत है मरक यह कि मौसमका इनपर असर होता है। ये चित्र मूर्तिस अधिक अपन रमोके कारण मगस्वी है किन्तु मूर्ति-रम असर नहीं। पर इनको पड़ैब बिदर भरकी समझक बाग है। बाह य किसी देगक बने हों। फिर संगीतका देखिए। यह बाघमें हा गानम हो स्वरमें डा तालमें हो। बाप कन्दनीरमें माइए, रिस्मीमें माइए, नागपुरमें गाइए इन्दौरमें माइए, बिबनापम्नीमें माइए या रामेश्वरम्में माइए। राग है और सब बमह समझ बा रही है। यही शाक मृत्यका है। मधोपुरी हा कबाकली हा मा कोर् और भी। ममस्त राग उँसे समझता है। मूर्ति और चित्रको ठरह इत विश्व-भर नहीं ममज्ञ मकना। इनका मवेरन राष्ट्रीय हाता है अन्तर्राष्ट्रीय नहीं हागा। और साहित्य और कविता कहिए, पड़िए और अपन पड़ावी

प्राप्तके लिए भी अनुशासक बूझते रहिए । अपनी पड़ोसी भापाके लिए भी दुमापिएकी आवश्यकता है । मेरा निवेदन है कि कलाक क्षेत्रमें साहित्य और वाच्य सबसे भीमिष्ठ है सबसे सीमित कसा है । इसकी अपेक्ष बहुत हा छोटी सोमामें बँधकर होता है । इसकी पुकार महाम् तब श्रोती है जब साहित्यक रचनाकार गीतोंको संदीतज्ञाके गायन और वाचपर और मनुकीक नृम्यपर जडानकी क्षमता रखते हा । साहित्यके कलाकार अन्तर्राष्ट्रीय तब ही जाते है जब उनके बर्ध विषय विषकार विभ्रमि और मूर्तिकार मूर्तियामे सतारनेको लक्ष्य उटते है । अतः कलाके यत्रमें साहित्य अनुभव करे कि वह अकेला नहीं है, काव्य अकेला नहीं है । वह कलाक सम्पूण उपकरणोंमें सबसे पीछे जम्कर ही सबसे आगे व्यक्त होन वाला बलवान् उपकरण है ।

लेखनम मुझ एक बात और लटकती है । हमारी रचना हमारी अपनी हा । रमोइवकी तरह हम किसीकी रचना परीक्षणका पेठा न करते हों और यदि करते हो तो उस पेठेकी ईमानदारीसे स्वीकार करते हों । चाब ही कोई व्यापार या बक तब जम्ठा है जब उसके मजालक अपनी जो एक धनराशि यत्रमें मिलाने । इसी तरह लेखनका सिद्धि भी तब महान् होती है जब कि अप्ययनमें-से रख लीजते हुए भी उसका अपना कुछ पीपीके ईशै योग्य हो । जीवनका ज्जरते और अप्यबनका बल जीवनशायी रचना करनवालोंकी आवश्यकता है । मुझ भागा है कि हम आवश्यकतावाची पूर्ति आपकी कलम कर लयेगी ।

मनुपुङ्गव छाटे अँध-नीध गिगर और यत्रमें बहनेवाली गर्मदा टापी महानरी पौराणको आरिधी बागएँ बाको और जबकी तरह जब हमारी जन्ममें प्रतिबिम्बित हो और नाँवेंसे पर्वीयामें बालनेवासी घाम बभूटियाँ जब अपनी बीतिकीके मुशब लेखनिबोकि भाव निहालकर टैनेके लिए उगारें, हम प्राप्तका लेखक हम प्राप्तका कवि हम प्राप्तका मूर्तिकार हम प्राप्तका मनुक हम प्राप्तका साहित्यकार हम प्राप्तका समाजसेवी

साहित्य और साहित्यिक

समापति महोदय तथा मित्रों

मुझे हृदयकी बड़कनकी सिक्रायत है इसलिए सडा न ही उर्कु और इस कारण अपनी व्यवसायका अपराधी साथ मुझ मारें तो मुझे क्षमा कर दें यह मेरी प्रार्थना है ।

आपके जीवनमें दो राष्ट्र भोजते मुझ मुझ मालूम होता है । मुराबाबाद बालका यह मेरा पहला मोझा है यद्यपि मुराबाबाद स्टेचनसे पिछके तीस बरोंमें मैं कई बार जा जा चुका हूँ ।

साहित्य विभागी-ऐसाधो नहीं है न वह हमारे पतनका सुन्दर सन्ध्यामें किया गया गावम ही है । जो वास्तु अपने पतनको गीतोंमें नाकर चुकी होती है, वह साइसी विचारोत्प्रेरी संमालनको समझा कैसे रखेगी ? साहित्य हमारे जीवनको समस्या है । उद्यम हमारा सम्पूर्ण जीवन प्रतिबिम्बित होता है । यह जीवनक मीठे अन्वेषका संग्रह-मात्र नहीं है ।

किसी व्यक्तिकी वाणी उन्ही समय लड़क्याडाने समती है जब यह अपनी सारी शक्ति को चुकटा है । किसी राष्ट्रकी वाणी भी उन्ही समय सङ्घटित होती है जब कि सम्पूर्ण राष्ट्र सङ्कलनको स्थितिमें ही ।

अनेक प्राणियोंके साथ मानव भी उत्पन्न हुआ । बकिम बाबुने धर्ममें मानवका विकास हुआ इसलिए उसने ईश्वरकी कल्पना मानवके ही रूपमें की । यदि सिद्धका विकास हुआ होता यह अपने ईश्वरकी कल्पना विश्वक रूपमें करता ।

एक दिन मनुष्यके मनमें एक विचार आया और उसकी बासाते उस विचारको व्यक्त करनेबास स्वयं अब निकलने लगी । तभी उसके

मनमें क्यों ? का उदय हुआ और उसका समाधान जमे इसलिये' में मिला । इन्हीं क्यों ! म आरम्भ हुआ इसलिये' म समाप्त होनेवाली वस्तुका नाम साहित्य है ।

आलोचना और सद्दानुभूति एक ही वस्तुके दो नाम हैं । हम एक समस्त शरीर हैं । उसके बीच और छिन्नक निकालकर पेंक देते हैं और रक्त पून घट है । आलोचक भी यदि हमारे साहित्यक छाप यहाँ व्यवहार करता है तो कहीं एकटी करता है ?

हमारा साहित्यिक — मेरा मतलब भारतीय साहित्यिकसे है — अपने उत्तरदायित्वका नहीं समझता । विश्वके निर्माणमें साहित्यिकका बहुत बड़ा हिस्सा है । व्यास और वात्समीकि-वैश्व ज्ञापि विश्वको विचारवान करते रहे और दुनिया आगे बढ़ती रही ।

साहित्यिक तो विश्वका आनन्द-बाता है । उसके छदनमें हासमें पीड़ामें विश्वको आनन्द मिलता है । लेकिन साहित्यिक यदि उस आनन्द का स्वर्ण उपभाग करना चाहे तो अपना और अपनी पीढ़ी दोनोंका नाश कर बैठता है । केबारेटरोमें मित्र-मित्र चीकोंका विश्लेषणकर्ता यदि उन वस्तुओंकी छाने छाने तो उसकी भी मति झोली बड़ी ऐसे साहित्यिकको जाता है ।

हमारे आँके साहित्यिकम अपने-आपका ऐसा ही बना रत्ना है । हमने मयवान्का पाया ता मवान लया । स्त्रीका जमान सिद्ध रमणी रूपमें ही दयना आरम्भ किया । वह भूल ही गया कि स्त्री भी भो है । पुत्री भी है । बहन भी है । ऐसे ही साहित्यिकक विषयमें दुनिया सोचनको बाध्य जाती है कि वह मार डालन मापक पावल कृष्ण तो नहीं है ?

ये मोठे विचारक छिन्नाक नहीं हैं । मोठे विचार देना 'भी साहित्यिकका कर्तव्य है लेकिन मोठे विचार देना 'ही नहीं । हमारे साहित्यिक मिद्वसका कर्पादा देते हुए साहित्य निर्माण करें । विचारोंका मस्तिष्कमें मिश्रितमाता कुम्भीपाक मरक न बनायें ।

क्या हमारा आजका कवि यह दावा कर सकता है कि याँवका बादमी उसकी बात समझ लेगा ?

आज हमारे राष्ट्र-संस्कारों के लिए तो चहरोंमें ही बीर बड़ याँवमें । सिर बड़की परबाह नहीं करता बीर बड़ सिरको समझ नहीं पाता । ये ही राष्ट्र बीर क्युं हमारे देशके पुष्पन हो रहे हैं । ऐसे ही समय ऐसे महान् साहित्यिककी जरूरत होती है जो इन दोनोंको मिला दे । आजका सहराती धारणाओंकी मिश्रण कथक या कटुतासे बननेवाले साहित्यके जापानी खिलौनोंपर बैठकर कोई बात कैसे बीरन-बाधा कर सकती है ।

सोच कहते हैं - राष्ट्रभाषा बड़े कैसे ? उसके मार्गमें उसकी पुष्पन बनकर उभू जो बड़ी हुई है । लेकिन बात कुछ और है । हम देखते हैं कि हर सातनने अपने ही देशकी भाषाको राष्ट्रभाषा चुना लेकिन जब अँगरेजी शासन इस देशमें आया तो उसने वहाँकी किसी भाषाको राष्ट्र भाषा नहीं बनाया । उसने अपनी भाषा हमपर बबरवस्तां छाड़ी । नतीजा यह हुआ कि इस देशका सारा कारबार एक सार समुह पारसी भाषामें चलने लगा । इसलिए हमारी राष्ट्रभाषाकी पुष्पन उभू नहीं उभिल नहीं मचठी नहीं गुनघाती नहीं । हमारी पुष्पन अँगरेजी है । इसलिए नहीं कि वह अँगरेजीकी भाषा है इसलिए नहीं कि वह शासनसे छासी है किन्तु वह इसलिए कि समन हमारे राष्ट्रकी वासियोंके भासनको सुर इज्जतकर राष्ट्रका अपने ही घरमें अपनी ही इज्जतमें निरूपयोगी बना दिया है । अब हम शासनसे माँग करते हैं कि राष्ट्रके अठेम्बली छासी करो प्राप्तीय अठेम्बली छासी करो और वहाँ हमारी भाषाको स्वात हो । हमारा श्रमाना है हमारी रेलें हैं । वहाँ हमारी ही भाषा चलियो ।

कुछ सोच भाषा गढ़नेकी बात कहते हैं और कुछ भाषा बनकी आवश्यकता नहीं बताते हैं । सबसे आवश्यक बात यह है कि हमारे साहित्यिक बन-संगठन स्थापित करें । साहित्यिक नामपर बहुत बोड़े

सोर्षोका एकत्रित होना भाषाका विवाचित्वापन नहीं स्थानीय साहित्यिकों-की प्रभावहीनता ही साबित करता है ।

प्रचार इस देशकी स्वामाबिक परम्परा नहीं है । हमारी परम्परा तो मन्तव्य है । हमारी भाषाको उत्तर भारतसे दक्षिण-भारत तक और दक्षिण भारतसे उत्तर-भारत तक के जानेवाले सन्त से व्यापारी से और भासक से । इन्हींकी ही हुई भाषा हमारी जाबकी राष्ट्रभाषा है ।

इस भाषामें हम खबरदस्ती संस्कृत शब्द न ढूंढें क्योंकि अपन जिन गुणाके कारण संस्कृत स्वयं मरी जन्मीको अपनी भाषामें लाकर उसे हम जिन्दा नहीं रख सकते । साथ ही हमें यह भी न मूख जाना चाहिए कि संस्कृतकी बातुओंके आचारपर ही हिन्दुस्तानकी ही भाषाएँ बनी है ।

यह गंगा-जमुनाका मुक्तप्रान्त और बुढ़का बिहार । यहाँ तो संस्कृतिक जन्म लिखा है, इसलिए यहाँ प्रचारकी आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए ।

हम भाषाके प्रचनको देशका महान् प्रश्न समझें क्योंकि जिनकी भाषा मरी उनके आशय मरे और जिसके ध्यान मरे वह जाति भी नष्ट हो गयी । भ्रमका काम पुरानी भाषासे बल मकता है लेकिन आजके साहित्यको तो व्यासके बलपर नहीं मरिजोसरण प्रचार निरालाके बल-पर ही जिन्दा रखना पड़ेगा ।

भ्रमवान् कृष्णके नामको बडानेके लिए यधोदाकी गोद की इसपर बहस हो सकती है । मन्व यधोदाके न या न से यह प्रश्न विचारणीय हो सकता है, लेकिन जिन कृष्णको व्यासने जन्म दिया उसपर बहस नहीं हो सकती ।

यों तो हर जगमें बच्चे पैदा हुए से लेकिन कलमके मनीन जिसपर लिख दिया वह युगोंकी छाती जोरता हुआ जाये बढ़ गया ।

आजका साहित्यिक जबतक आजकी समस्याएँ नहीं जिसेया तबतक समाज उसके साथ नहीं रह सकता । यह समाज एक समुद्रकी तरह है ।

समुद्रम छोटी-छाटी गाँवें स्टीम-बोट बड़े-बड़ जहाज ठहरते रहते हैं। लहराकी मरजीपर यं दूब सजठ है। चुर चुर हो सकते हैं लेकिन समुद्रमें ही एक और वस्तु गड़ी रहती है जिम्का सिर लहरोंकी मरजीपर नहीं झुबता जा डीबाडोक होना नहीं जानता बहु है - प्रकाशस्तम्भ - वो मुमराडोको रास्ता बताठा रहता है। समाज अपने साक्षित्विचने भी वही जाया करता है कि बहु क्षणिक लहरा और परिस्थितियास ऊपर उठकर बासे।

हमारा एक बेवता है। समाजका कोई व्यक्ति उससे नहीं बच सकता। वो बच बहु बदायातक है। एसा जावमी हमारे बेणम कोई स्वान नहीं पा सकता। बहु बेवता कौन है? बहु है हमारो मातृभूमि - हिन्दु स्तान - जो उस बेवतापर समर्पित नहीं हो सकता बहु नष्ट कर दम पोष्य है। इसी बेवताको बाबी हमारी राष्ट्रभाषा है। मरे सम्पद्य होवस कोई फ़मशा नहीं जबतक जाप स्वयं न साबे कि हिन्दोका उन्नत करनेक छिठ क्या-क्या उपाय करन चाहिए। क्याकि शक्ति आपमें है मुस तो लंकुठ-बहन और लंबेठ-निरुठ हो करता है। हमारे का प्रस्ताव का मकस्य उपयोगमें न उतर पायेंगे ब हमपर हमारो पीढ़ीके द्वारा उचार हागे और हमारा जावन हमारी पीढ़ीके सम्मुख मातृभाषाके ग्यायालयम दिबाकिया चारित हावा। जाइए, हिन्दी प्रेमियाकी समुत्त वास्तवता मस्तक तुबाकर हम जानो काटि-काटि कण्ठीकी बाषाका लहरउ पय मनन कर। असीतक हमारा राष्ट्र का सजठ है। बहातक हिन्दीको बिजयिना दग।

हिन्दी साहित्य समिति

मुराराधर

१९४१



गोस्वामी तुलसीदास

समापति महाशय

कल हा हम तिलक-पुष्प-तिथि मना चुक है और आज तुलसीदासपर
 चर्चा कर रहे हैं। आपके कलियुगमें पहली बार में सन् १९१३ में श्री
 बी० जी० बिन्दोरकर साहब आया था। उस समय में हिन्दी साहित्यपर
 बोला था। प्रिन्सिपल मि० चम्बरसेक आश्रममें स्वनापन्न प्रिन्सिपल मिस्टर
 सीधी उस समाके अध्यक्ष थे। फिर मैं १९१७ में आया फिर हम समयमें
 मरा प्रथम विशेष कर दिया गया अतः न आ सका। आज मैं हम समाके
 स्वयं समापति हूँ।

जब हम विद्यापिपोंके बीच साहित्य चर्चा करें तो या आचार्य साय
 माय प्राप्त होती हैं। अध्ययनका पैलापन और आकलनकी शक्ति
 मानक इन दृष्ट-मन्दिरमें अबद्वय रहती चाहिए। कुछ धर्म एम होते हैं
 कि जब हम जानने बहुत पादा है किन्तु निष्ठाते बहुत है। सगता है जैसे
 जीवन माउक स्पोकराके बगवाजे बैठ गया है जैसे बुद्धि बकलर आसकर
 बैठ गया है। जैसे मौम आत्म-संकीर्तनका ही आत्म-प्रवर्णकरण समझन
 सगी है। एम समयका मनुष्य जो कुछ बोलता है जिन बातकी वह
 समय मना है उसपर उसका स्वयं विश्वास नहीं हाता वह निरा
 प्रचारक हाता है। किन्तु कुछ धर्म जीवनमें एम भी होते हैं कि जब
 बलम एकात्ममें साधनबाण अगत सामन होता है या आत्मिक सामन
 होता है उस समय वह प्रचार नहीं करता आत्म-देवताकी अध्ययना भी
 नहीं करता उस समयका साधन-बोधकर बोली हुई और बाल-बालकर
 मापी हुई आत्मिकी जैसा कि स्वामी रामदीप कहते हैं यदि किमा अंधरी

पुष्पमें आकर बोसा बाये और उस पुष्पके दरबाजेको चट्टानसे ढीपा पिछाकर बन्द कर दिया बाये ता भी बोली हुई बोली चट्टान ठोड़कर जन जनके हृदयमें पहुँच जाती है और युगो-युगमें दोहराती जाती है। प्रचारक और साहित्यिकमें इसका ही खल्लर होता है कि पहला वह बोबता है जो उसकी रोटी बुझाना चाहती है दूसरा वह बोबता है जो उसके अन्तरके आराध्यकी रचि होती है।

पानी बरसा कि हरी घास उग जाती। चारों तरफ़ हरा हरा हरा किन्तु रूपकको बलिष्ठ उसने बिघाटाकी हरियाली छोड़कर खमीन बना ली और बनबाहो ऊगको उखाँकर मगचाही फसल बो बी। इस तरह रूपकने व्यवहृतिमाती म बच लगा लिया। निर्माता यही उँवस्मिँ किताना और कमधीबोसि उचार केठा है और समुद्र आकाश बसन्तपी और मूसोंके जनमत्त निर्माताको बापी प्रदान किया करता है। साहित्यिक इतिहास और कलात्मका सम्मिलित रचनाकार है। वह यथावकी कमीबा कल्पनामे पूरी करनबासा मात्र-बताक है। रूपक व्याप्तका केवल रचनात्मक कल्पना-कोशल मात्र नहीं है इसीलिए युगो-युगके रचनाकारके हाथों बह-बह रूपक राम अथवा कोई और पुराण-पुरुष पढ़ गये तो आप होंगे कि साहित्यिकने अपनी युवती आभयकृतामोमि उन्हें बास लिया है। युवती मूसोमि उन्हें संभाल लिया है। इस तरह साहित्यकार वह है जो बिघाटाकी रचनाका अपन हाबम केठा है और रचनाकी उँसे लगनबाती कमीबो अपनी मूसासे टीक कर देता है। रूपक कुछ मुहम्मद ईमामसोह पाखो म युवती अबरररत मोमिके नाम है माना किन्तु इनके आगमनके लिए खमीन पदा करनबासा और फिर इनके आ आनक बाद इनका नाम सम्मान अथवा विस्मयक करनबासा साहित्यिक है। इनीलिए एक ओर युगका चरित्र निर्मात्र कर वह अपनी रचनाकाके द्वारा वर्तमानका शिष्टा-वर्तन भी करता चलता है। यह उँमही कलमका बरदान या अभिप्राप है कि राज्य बहने सिद्धामन डगड़ राजा भाये बाग किरै जन जीवन उँबल-गुचल हुए और

बगल जहाँ या बहसि कुछ कदम आगे बढ़नेके लिए बाध्य हुआ। वेस ही गस्तिबस्तो तुम्हें और गाँवोंको छोड़ मों ही नहीं जानने देने। मोमबस्तो उनके रूपमाके पात्रोंमें अपनी युगों-युगोंकी बावस्तवताके अंकितोंके द्वारा किये हैं।

तुलसीदास सौलहवीं शताब्दीमें सीता लिखी और जाय देख रहे हैं कि आज हर हिन्दू मत्ता पिता अपनी बटोको सीता बनानेमें यत्नशील है। कौटी विपत्ता है कि तुलसीदास अपनी पहुँचमें गजबोंकी तरह ठँका है जहाँ हमारी पूजाकी उँसकियाँ नहीं पहुँच पायीं किन्तु बाजारय विक्रम वाली एक पैसकी मोमबस्तीकी तरह वह कितना हमारे पास है। अपनी कच्चीके रूपमें माना वह हम ही से बाक रहा है। वह हमारे पास ऐसी मोमबस्ती बनकर रह रहा है कि जब सुप्ता बँ प्रकाश देने लगे और जब बुझा बँ बुर हो जाये। विपत्ता ही इसलिये कहता हूँ कि सावधानका मतलब कमी ही आपके बुझाये कमीनपर नहीं आता किन्तु तुलसीदासका और साहित्यिकका कमल आपकी मरजीपर बायें-बायें बोल रहा है। यह तो आपपर अवलम्बित है कि मनुष्य स्वभावकी विपत्ताब्राम संमतकर रहे। जब अनन्त मूय छिपर रहता है तब उसक यज्ञान् प्रकाशकी हम कोई झर नहीं करते उस प्रकारमें हम अपने काय-द्वारा बुझताक भाव नहीं मछे किन्तु क्यों ही मूय बुझ जाता है त्यो ही तीन पैसकी टिमटिम टानी केकर अपने प्रकाशमें जीवनेके काय पूर करने बैठ जाते हैं। मानो यह हमारी इच्छा बीभत्त रूप है कि हम मूय और टिमटिमटानीका सवाल रूपम ठग-जुवर दी बलङ्गोंमें रहत कमी संकाश नहीं करते और तुलसी-दास-राम साहित्यिक जपादा शताब्दियोंसे अपनी उपजाक हय अपमानको घइत बने आ रहे हैं। कहते हैं जब तुलसीदासने अपनी और बसबाईमें रामायण लिखी तब काशीके पण्डितोंमें उनका ठिरस्कार किया कि सम्झान अपनी रचना देवदासीमें क्यों नहीं की? किन्तु विद्वताक उस प्रहारसे सुप-निर्वाता तुलसीदास बरझाया नहीं उक्त स्पष्ट मापना को कि

अम भाग्या का संस्कृत
 प्रेम वाद्विपत्तु भाँप ।
 काम जो भाषे कामरी
 का छ करिब कामाँच ॥

एसे अपमानाके बीच लिखपिथा बिचसाइ क्या कभी ऐसी बहता रिधा सकता है ?

एक बार अपने गिरधरनाथके सेवा रसम तस्वीन अन्तिकारिणी मीराबाईने कहा जाता है कि युग-कवि-तुलसीदासकी पत्र लिखकर पूछा कि छार परिवारके लोग बीर पडे हैं कि मी अपना माथ छोड़ दे, बताना मी क्या करे ? तुलसीदासन पैसों और प्रभुतामोधि पबराकर मरुत माय-दशम नहीं किया और बड़ भी लीकहूषी घटाधीमें अब टपवा और राजा ही कितीका सर्वनाथ कर देनके बलवान् साधन से कहते हैं मीराबाईके पत्रके उत्तरमें तुलसीदासका स्पष्ट जबाब यह रहा

जाक प्रिय न राम बैइही ।

तजिण ताहि काटि बैरी सम

अपपि परम मनेही ।

पिता लज्जो प्रहलादु बिभीषण बन्धु

मरत महतारी

मत्र - बनिनन बिज पति तजि दो हैं-----

देना आपन जगने मन और सतका पक्का साहित्यकार कैसा होता है ? गाँवे लीग-मी चार-मी बच पहलेके युगकी कल्पना कीजिए और तब तुलसीदासका मूल्यांकन कीजिए । कहतें हैं एक बार गोस्वामी तुलसीदास इन बेगके तत्कालीन बादशाह अकबरकी समामे आमन्त्रित किये गये । तुलसीदासकीक प्रिय मवाब पानतानाके आयहूँसे ब बर्राँ जसे गये । राजाजीकी कबिके अनुकूल बड़ी सम्पादके दरबारी कवि एकत्रित हुए थे और मममा ही गयो कि करो मिस काम अकबर की ऐमे समय भी सन्त

कवि तुलसीदास नबाब आनखाना-जैने महान् व्यक्तिकी मुरझाहका
 अमर अफनपर नहीं होने दिया । उन्होंने समस्या-सृष्टि की प्रिसमें उल्लासना
 दिया है कि इन आनखानमें हुमायूँ और बाबर भी पैदा हुए किन्तु उन्हा
 अपने लोकको नहीं छोड़ा ऐसी समस्याएँ नहीं दी । और अपनी समस्या-
 सृष्टिके अन्तिम परचका यों समाप्त किया

जिमका हरि की परलोचन हा
 ना करा मिक धाम अकबर की ।

सभ कवियोंका यह बात विश्व मरमें और भारतमें भी अनुपम रहा है ।

जिम मदीमें तुलसीदास पैदा हुए उस समय हिन्दुओंके मतमें अरम
 भीमारर थे । दोष धारण और शेषक और न जाने कितन रूपमें भारत
 का हिन्दुत्व विभाजित था । दोष शेषकको माकी पैदा और अफनक मिश्रण
 की । तुलसीदास इस परिस्थितिमें भी डोषाडोष नहीं हुए । रामायणमें
 उन्होंने रामक द्वारा शिवकी पूजा करायी और शिवके द्वारा रामका
 उन्मान दिया और भेद दालनबासाकी उन्हीं बहुत ही जाड़े हानों किया ।
 उन्होंने रामचन्द्रके कहलबाया कि

हाकर प्रिय मम छोड़ी
 शिवदाहा मम दाम
 त नर करिहैंहि कवन हात
 धार मर्क में बाय ।

एन तरह तुलसीदास उन कवियोंमें रहे किन्हीं १६वीं शताब्दीमें
 संयुक्त भारतवर्षका स्वप्न देखा जा कि भारतीय संस्कृतिक प्राचीन
 साहित्यम विद्यमान था । उन्होंने अपनी अरिस्त-नायक ही एसा युवा जिनम
 ईश-निष्ठाका केन्द्र गत्यस्व छोडकर पदम बाबा की और गरीबकी
 विन्दको बितायी । किन्तु मममल भारतवर्षको अपने स्वरक व्यवहारों-द्वारा
 अपने मिश्राबा अन्तमें डोष-लोचके त्रेशोंकी अलग हटाया छोटी-बडो
 बातियोंकी समाज रूपमें स्नेह किया निपादकी अन्तम अधिक प्रिय बताया

और अपनी दिग्बिजय-द्वारा तथा ग्राम-जीवन और वन-जीवन के लोपके प्रति अपनको समर्पित करके संयुक्त भारतकी स्थापना की।

रामायण पढ़ते समय एक पाठक यह होता है जो पढ़ता है कि रामायणक पाठ बोल रहे हैं किन्तु एक पाठक यह भी होता है कि जो यह देखता है कि तुलसी कैसे बोल रहे हैं ?

तुलसीदास अपनी रचनामें बगताके बहुत निकट रहे इसीलिए सोल-हवीं शताब्दीमें भी हिन्दी भाषाके छात्रोंने अपन जन्मके शीघ्रमें ही अपना अन्त-दान किया। अब तुलसीदास बोलते हैं तब माना उनको सैखनी उनक पात्रोंकी बीच बग जाया करती है उनको काफ़ी स्वाहीये जाने कितनी उन्नतकता बरस पड़ती है। राम संघाके तटपर है गरीब केवट सामन लड़ा है राम उससे कहत है पार बहार जो केवटन कबा मुन ली है कि रामके पैर छू जानेसे एक बड़ी भारी अट्टान स्त्री बन गयी बहुस्याकी उस कमासे रामभक्त बान्हे जितने सुखी हों किन्तु रामभक्त तुलसीका केवट भयभीत है तुलसीको रचमान यह जो कुछ कहता है परा उसे देखिए और कहिए कि ये तुलसीकी इच्छा है वा केवटकी शोभ ?

यह छोटा और अस्मयको सात्र लिये हुए भयवान् रामसे कहता है, भावमें क्या ईश्वर हो महाराज जो दूसरा किनारा रहा कमर भर पत्नी है मे बाहू दिखाता चलैना...सीविए अब तुलसीका अन्त ही मुनिए। यह उनकी कवित्त रामायणकी रचना है

इहि चार पै मारिक दूर आई
कटि ली जस, पाह दिगाहिहों जू
परम पग बूरि तर तरनी
धरनी भर कहीं समुझाहिहों जू
तुमनी अचकन्ध न और कए
करिका कहि भौंति जिबाबिहां जू

बढ़ मारिण मोंहि बिना पग घोष
हौं नाव न नाव बढ़ाहिहौं जू

उस भापाकी और केबटकी दोनोंकी सरलता देखिए । मानो एक ही सरलता दूसरेका मात दे रही है और उरीब केबट हथरपके राज कुमारका चुनौती दे रहा है । कहता है - तुम्हादि अरग भूमिके छू जानेस मेरी नाव तर जाने तो अपना औरतका बीस समझार्ज्या । तरब यह कि वह लड़ पन्गी और सबमुख मुसे और कोई सहाय तो है नहीं तब बच्चोंका पालन-पोषण बीस करनेमा ? इसलिये उरीब केबटकी अनुपकारी राजकुमारको चुनौती है कि चाह मुसे मार डालिए किन्तु मे बिना पाँव बोध नावपर नहीं बैठार्ज्या । कठिन परिस्थिति अपनी बतमान अमरुतका छिनानबास हम जोय तुलसीदासकी सरलता वहाँ पा सके ? केबट यहीं चुप नहीं हुआ कि यह राजकुमार है और म क्या कह बीटा । वह कहता है कि बानक कुछ बोध नहीं है महाराज । आपकी अरग-रजका प्रभाव ही ऐसा है आप क्या करें, फिर जब पत्थर तर गया तब मेरी नाव तो लकड़ोकी है वह क्यों न तर जायगी ? एक तो नाव पन्धरमे कोमल और फिर पानीमे भीयो हुई । पत्थर ठारनबाके रामचन्द्र केबटक इस बोलने पानी-पानी हो गया किन्तु केबट अपना मुहमा नहीं भूला । वह बोला आपके पक्षि पाँव बोकर मावपर बढ़ा लूँगा । सोलिये क्या आज्ञा होती है ? पूरा छन्द हम प्रकार है

रावर शाय न पाँयन का
पग-भूरि का भूरि प्रभाव महा है ।
पाहन तें बन-बाहन काठ का
कामल है अरु गाय रहा है ।
तुलसा मुनि केबट क बर बैन
हैये प्रभु जानकी भीर रहा है ।

पावन पाँच परगारि के नाव चढ़ादिहा
 भायसु हात चढ़ा है ।

त्रिम तरहु अक्षरक बीषम बारात ठहरान योग्य अमराइयां बनी
 बीषित है दुस्तरनक सिगपर हुन्ना-दाप सेन्दुर भरना अभी बीषित है
 भाँवर और परिहृता अभी बीषित है उमी तरहु दाहराता सम्पठाके
 बनकों सफ्ट-फेरोक पदधान् वंगाके किनारे तुलसीका कंवट अभी भी
 बीषित है कबल उसे देवनके लिए साइ तीन मो बपोंकी दूरीको चीरकर
 देवनबाणी जालें चाहिय ।

रामचरितमानस-बीम महान् प्रायको रचनाय यद्यपि तुलसीदासने
 अपन दोरको मो व्यक्त किया है -

कवित बिबेक एक नहि मोर
 माय कहै किगि कागद् कार ।

तो भा रामायणक रचना-बीमकी विशेषताओंमें हम जितनी ही बार
 दुबधी समायें हम मयसे नय रत्न मिल सकते हैं भोग अपनी रचनाओंको
 माणयने प्रारम्भ करते हैं किन्तु रामायणकी सम्पूर्ण रचनाय आप देखें कि
 प्रथम परिधिपिन्दी विषमता सामल रही जाता है फिर कथा भावको
 कोमन्ठाक रगन हाते हैं और इतन बड़ प्रथम परल विषमता और फिर
 शमता यह क्रम कही भी टूटन नहीं पाया । प्रथका प्रारम्भ संकरको
 मार्या पम्बो मनीकी मन्त्र-कथाय पारु हुआ है । पावनीक विवाहमें संकट
 है रामक अग्रम संकट है रामके पुबराज श्रोतपर विरचामित्र ल जाते
 हैं ताइबाकी कथा है । गरज यह कि सम्पूर्ण रामायण संकटापर सुनोकि
 बेमकका एक अयुष्म उगारन है संकटाग सैव भयभीत रहनेवापी
 जातिनी कापर जन-मंया सुम्भोशय और राम-कथाको विदेयताका बीम
 ममन ?

राम तुलसीदासक लिए ईश्वर थे । रामा ही महा प किन्तु उद्दीने
 पुरुष बीम रामक विराधीके पीषमका निष्कर्षक बिजिन दिया है

सोच सपन चरित्र-भावकके सुन्द-मर चरित्रका नी त्रिषु निर्भीकताये
 व्यक्त किया है उससु देगों और सुगोवा अनता ही मरिण न शयी कष्ट
 और निम्ननकी निगामे निर्भीकताके म चर्य चार चोद स्या रोग ।

भरतक चरित्रके निर्माणमें तो तुलसीदास अनक पूरवर्ती मनीषियाय
 बहुत भाव बर गय है । महुरि बाष्पीकिका जयाप्याका दूत जब रामके
 बन-मननपर अरने मामाक घर भरतका बुलाने जाता है और जब भरत
 दूष्ट है कि जयोप्यामें सब बुष्टके ठो है ? तब बर दूत भरतको पचाव
 रता है कि बुमानाये महाबाहो यथा बुमानमिच्छामि किन्तु जब तुलसीक
 कथकक दूत भरतका बुलाने जात है ता तब व इतना ही कहत है कि
 चामिण् आपकी सुन्देवन सोझ ही बुलाया है ।

तुलसा जननी रामचरित्रमालवका प्रारम्भका बन्दनामें ही मानी
 साहित्यके मर लक्ष्य कह बडे है । व काहते है कि कविनाय वन हो
 अब-मंथ हो रस हो अर हो किन्तु व सबक सब 'मेवमाता व कर्तरी
 शाना चाहिए । इस अनुष्टुप्की रचनामें ही तुलसीका वरम कीयन व्यक्त
 शाना है । क्योंकि वन अररोंका भी कथत है और चारा बनोंका भी
 अब-मंथ साहित्यके अब-मंथोंका भी कथत है और जगियाकी भी कथ
 मकत है रम छद् भी शाने है और भी भी और अर्य्य मान छिरकर
 र्थनकी प्रकृति बर्षोंका प्रकृति सररामे हाया है और इच्छावाची
 रात्रनीनिमम । किन्तु तुलसादासके नायकें अनुसार इन मरका मगअकार
 शाना चाहिए । नायिकमें अब छिरकर केंटा है रात्रनीनिम इतर छिर
 कर केंटा है । तुलसीदासक निरचयक अनुसार छिरकर बानों केंडे किन्तु
 वे मंगलकाय अरर हो ।

अरनी रचना बुमानाये भा तुलसीनाम अद्वुन वागुम व्यक्त करन
 है । अनवका मरम है चरामे मीना अरनी मनीषोंका लेकर जमकक
 बापमे गौरी पुत्रनके शिवा गयी । धनुष-ब्रह्म शानेकाया है अभी हुवा
 गरी है । चरि अनककी उर बाटिकायें छोटा रामका देव लयी है और

सबिपोंके लानोंसे भयभीत होकर गौरीपूजनको मन्दिरमें आ जाती है, तुलसीदासजी को पक्षियोंन मानो यहाँ आकर सारी समस्वाको निहाल कर दिया है :

जय जय जय गिरिराज किशोरी जय मईस मुख-बग्ग-बन्धारी
 जय राज-बन्ध पद्मवन-माता विश्व-जननि दामिनि धुनि-गाता ।
 किशोरी सीता अपने बाराभ्याको भी किशोरी कहकर पुकारती है जिससे वह किशोरीको कठिनाइयोंको समझ सके और राज-किशोरी सीता दूसरी राजकिशोरीसे निवेदनकर रही है कि वह उसकी कठिनाइयोंको समझे तिसपर सीताने अभी बाटिकाम मुखबग्ग देल लिया है और वह मईस मुख-बग्ग-बन्धारी गौरीकी आराधना करने लगाती है फिर गौरी भी सीतानेमें घेष्ट है, और उसके बाद जन-माठा कहा गया और सोचाने भी अपने जीवनमें यही पाया । गौरीके भी दो पुत्र थे सीताके भी दो ही हुए, लक्ष्मणा होता है कि तुलसीदास किशोरी हृदयकी इस कलापून कोमलता-की दृष्टे लिल्ल मक अब कि उनके जीवनमें विषयन अनन्त जनकोंकी उत्पत्तिके सामान उपस्थित कर दिये होमे ।

महीं आकर यह कहनेको भी होता है कि 'इसमसे निस्सन्देह कम पपञ्चित होताई "

बास्वामी तुलसीदासने अपने कथा माग और बचनक बीमबमें संस्तुतन प्राचीन साहित्यमें तो लिया ही उन्होंने अपनी समकालीन भावामाने भी रच-ग्रहण किया । अपने घरर वा धीन या मन्तव्यपर जानेवाले व्यक्ति को त्रिम तरह जनेकों गाँवों और शहरोंकी सोमार्ण लाँबनी हँसो है और जन गौमात्राम-भे हीकर पुञ्जरा होता है वसी तरह पोस्वामी तुलसीदासजी कलाकार जन भावामी और ज्ञान-सन्नुबास-से होकर पुञ्जरा-सा कनता है अहीतक उनकी पानकारी पहुँच मजती थी उनकी रचनाम उद्गु, प्रारसी और हिन्दी प्रपत्तों मिस-भिन्न स्वानाको जिन्य-निग्न बोलियोंका अवधी करपईया वा लकता है क्योंकि उनका लक्ष्य अपनी बातको अपने पाठक

के पास मरणात्प्रेम पहुँचाना या अपनी जित और बकड़का मौड़ा प्रस्तुत करना नहीं इमीच्छि उन्हींमें रामचरितमानसमें स्पष्ट स्वीकार किया कि उन्हींमें बंदा सास्त्र पुराणकी सम्मत् बाणीसे तो रामचरितमानसकी रचना की ही कुछ अल्पमे भी किया विद्यापिपिकि किण यह बात विशेष जानन योग्य है कि ज्ञानको मुईब किमी मापाके द्वारसे पाया जा सकता है और ज्ञानपर मूर्ख-करिणी और भायुके भायुकी तरह स्वैपी और विदेसीका आरोप नहीं किया जा सकता किन्तु यह लोग भयराधी हैं जो विदेसी ज्ञान समस्त समय अपनी भाषाको भूक जाते हैं ।

मन्त्र विनीशाके अक्षानुसार तो तुलसीदासक रामचरित मानसका नाम रामायणके स्थानपर 'भरतायन रामा चाण्डिण' इममें कोई सम्बन्ध नहीं कि सत्तबर विनीशाका यह कवन बिलकुल ठीक है कि भरत अक्षर तुलसीदासके ध्यान-मूर्ति-पात्र थे । भरत रामके मन्त्र व और तुलसीदास मौल नीरम्य और आराधनामें भरतक विषय बननका प्रयत्न करते थे । भरतका चरित्र मौस्वामी तुलसीदासक इस प्रकार चित्रित किया है कि बिस्वके अन्दर संक्षर्पके बीच जाय भी यदि नहीं भरतत्व प्राप्त हो जाये तो मौ-मौ रघुवंशीका मन्त्रान्त आत्र भी बचावा जा सकता है । यदि ब्रह्म बग चलना ता में कश्चित्के विद्यापिपिकि दीक्षास्थले उन्हे रामचरित-मानस दिए जानकी दिनायत करता । पही-ठाक्यापर पड़-गटे राम-बन रूपक या सीता-हरणकी कथा सुनकर रो बहनबालके अकमप्य औमुश्रीवा अथ तो मरो मननमें नहीं जाया न जानका । देम निकाला कटिकाइयाँ मीलाहरम संपर और इन सबके परे दुःख-मापिपिकी रत्ना और सोलका निर्वादि यदि यह जीवन नहीं है तब तो जीवन केवल राष्टीके लिए, माकिडकी ओरसे नष्टपर मौस्वामी हो क पाम रह जायेगा । मरे निकट तुलसीदास केवल साक्षरुकी छात्रारीय ही नहीं हुए, व ध्यान भी अर्थके-यों है । कमी कमीमें ब्रह्मस्वमेव चाटपर भूमि-से और कमी अयाप्यामें अपनी बोधी-गवे स्थि वैवमन्दिरके द्वार ब्रह्म उतरते-स ।

किन्तु छोट-छोटे गाँवोंकी यात्रा करते और लोक-जीवनसे प्रेरणा लेकर लोक-जीवन हो म रामचरितमानसको प्रसारते-स - तुलसीदासके चरणीसी बन्दनास में अपने हाथ धन चरना तक भी पहुँचा पाता हूँ जो आज भी प्रतिमाक पीयाजा अपना हुजम धान कर रहे हैं ।

भापत मरी बातें छान्दिस तुन की इसक किय् में आपका बन्धवार देता हूँ । विद्याधियाक सामने बाकते समय में वह नहीं लोक पाठा जो मैं तुलसीदासपर कहना चाहता हूँ मैं केवल वही बोलता हूँ जो मुझ भापसे पोस्वामी तुलसीदासपर संक्षिप्त रूपमें कहना है ।

इन्द्र मन्दादिपालक इन्दौर

१९१०

■

पत्रकार संघप और सम्भावनाएँ

देशके उपदेशक सम्पादक सञ्चालो और पत्रकार बन्पुत्रो !

मेरी अपेक्षा श्राव-बूढ़, बयोबूढ़ और तपोबूढ़ व्यक्तियोंके होते हुए, जानने मेरे-जैसे अनुभवहीन व्यक्तिको इस संस्थाके समानाधिकार्य और अनूप पत्र प्रदान किया इसके लिए मे घिष्टाचारका ही भावको सम्भार दे सकता हूँ हुदयते नहीं। सम्भारनका यह दृश्य शय है। संस्था नववा बाह्यावस्थामें है ऐसे समय सम्पादन बना सावधानता जानन और राष्ट्रिय स्फूर्तिके साक्ष्य-यामनमें श्रमके हाव अधिक अनुभवहीन अधिक सावधान होने उम्मीदो यह कार्य सौधना बचित वा। एक बपके नियुक्तो बसोब नउर और चलन कर के जानेके लिए, नियु संतोपनमें नियुक्त हावोही बकरत वो। मेरा तो इस कथामें कोई स्वान ही नहीं किन्तु मे साधता हूँ जानने अपने तेज पानीके बरते हुए इतिवारोको इस संस्थाके किती बकरतान् श्रमधारीके समय सँभारनके लिए रस छोडा है और इसलिये मुस-बैवे जादमीको अपने बाडा दी है कि मे प्रारम्भिक समयकी परिमित श्रमैनाटियोमें आपकी आज्ञाका पालन कर हूँ। यद्यपि मे इस प्रदान किने हुए गीरके लिए आपकी बग्नार देता हूँ किन्तु मे साधता हूँ कि एनी श्रमधारियो गीरबका कारण नहीं होतो बह ता एक आपरा एक संकट होता है जहाँ अपने व्यक्तियों-से बलप बैठकर अनुभवको अनुगायन और सावधानताके अनुकूल समाका पचालन करना होता है। असु, सञ्चालन अपने चाहे वो मोचकर मने यह पत्र प्रदान किया हो मे तो इस पत्रके सवधा योग्य श्रीमुन् अभिवाप्रवाह सावधैयी श्रं मुत्त नदयननारायण बरे श्रीमुत्त बपोचरकर

पत्रकार संघ और सम्भावनाएँ

विद्यार्थी और उन सब संस्करणोंके एक नम्र प्रतिनिधिके माते कार्य नईवा
 जिनके ज्ञान अनुभव और तपको आजके समापत्तित्त्वक पाठका मुख्य
 अधिक अधिकार था ।

संस्करणों भारतीय उपवनमें कितने ही फूल और फल ऐसे हैं जो इत
 देशकी उपज नहीं उनका आशय ज्ञान देशोंसे इस देशमें हुआ है ।
 समाचार-पत्रों और समाचार-पत्रोंका व्यवसाय भी इसी ज्ञानका एक
 अंग है । इसीलिए समाचार-पत्रोंसे सम्बन्ध रखनेवाला प्रचलित ज्ञान
 भी हमें उन्हीं देशोंके साहित्यमें मिलता है और यही देशकी परिस्थितिके
 अनुकूल हमें उसका उपयोग कर लेना होता है । पाठ्यालय देशोंमें
 समाचार-पत्रोंका कार्य बहुत महत्वपूर्ण है और उसमें कार्य करनेवाले
 लोगोंका समाजमें बड़ा आदर है । गत सौ बरसों से अन्ध, अंधारमें
 जो लड़ाइयाँ जो महामुठ जो सन्धिवाँ जो समझौते और जो सामाजिक
 राजनीतिक और औद्योगिक हलचलें हुईं उनका महान् यत्न अधिकतर
 समाचार पत्रकारों और समाचार-पत्रों ही को देना पड़ेगा । मुख्यतया
 अथवा सन्धिवाँ अर्थ-जीते कार्य यद्यपि प्रत्येक राज-संघटका
 संवाक्य करनेवाले राजनीतिज्ञ ही किया करते हैं किन्तु मुठ या सन्धिवाँ
 परिस्थितियों उत्पन्न करने अथवा उन परिस्थितियोंको जिला रहने देने
 और मार डालनेका कार्य समाचार-पत्र ही किया करते हैं । इस बातसे
 समाचार-पत्रों और उनके संवाक्यकोकी कतुम् अकतुम् अथवा अनुम्
 शक्तिका अन्वेषण लगाना जा सकता है । इन्हींमें साम्राज्यके जो बार
 आचार स्तम्भ माने जाते हैं उनमें एक समाचार-पत्र भी है और इनके
 इन्हींमें और उनसे भी अधिक आशयमें समाचार-पत्रोंको 'फ्लोय स्टेट'
 कहा जाता है । इन्हींमें आपान और अमेरिका-जीते महाशक्ति नई
 जानेवाले देशोंमें कठिनाई किन्तु साइबेरिया बुद्ध और जोशी के
 उत्पादक प्रसिद्ध आपानो फूफूवावा-जीते व्यक्तियोंको यह शीघ्र प्राप्त है
 कि उनके देशोंको ठीकी पथमें चलना होता है जिस पथमें वे चलना

साहते हैं ।

बन्धुओं यदि समाचार-पत्र संसारकी एक बड़ी ताकत है तो उनके लिए बोलियम भी कम नहीं । पत्रपत्रकी जो शक्ति है हमसे कमकी और राष्ट्रीय रक्षाकी महान् बीमार बनती है उन्हें डँबी होना पड़ता है । हममें समाचार-पत्र यदि बहप्यन पाये हुए हैं तो उनकी जिम्मेदारी भी भारी है । बिना जिम्मेदारीके बहप्यनका मुख्य हो क्या है ? और वह बहप्यन तो मिट्टीके मोल हो जाता है जो अपनी जिम्मेदारीको संभाल नहीं सकता । समाचार-पत्र तो अपनी गौर-जिम्मेदारीसे स्वयं ही मिट्टीके मोलका नहीं हो जाता किन्तु वह देशके अनेक महान् जनकोंका उत्साहक और पोषक भी हो जाता है । इस समय एकाधिकार या अत्याधिकार प्राप्तिके विहासन बोल रहे हैं और जन-सत्ताका सूर्य धीरे-धीरे नभो पच्छिमके पक्ष माणको सुना जा रहा है । ऐसे समय जनताके हृदयकी ध्वनि उनके संकटके घटन उनके एकान्तके विस्तार उनके जन-समूहके प्रबोधक समाचार-पत्रोंका महत्त्व और भी अधिक है । और चूंकि निर्दुषठाये समाजताकी ओर जानेका जगत्का एक बरतनेका धामर्ष्य वह अपना काम नहीं कर सकेगा अतः समाचार-पत्रोंका प्रभाव उत्तरोत्तर बढ़ता ही जायेगा । इसलिए धार्मिक पत्रोंके अपना सम्बन्ध हमसमे उभे अनुभव करने और उनके बूने परिस्थितियों परिवर्तन करनेके उपायोंको अपने नगरीर उत्तर-दायित्वकी शान-शान अनुभव करना होना और जानेवाली परिस्थितियोंका सक्रिय प्रभाव देनेके लिए सर्वत्र प्रस्तुत रहना हीगा ।

बदलती समाचार-पत्रोंका प्रभाव काम है लोकमतका निर्माण और हनोक्ति, इस व्यवसायके व्यक्ति विस्तृत करते हैं कि देशकी भाषा के स्पष्ट, बय पुन और उगुक्त करनेसे देशकी भाषाओंको काय-शाल, विस्तार और बलिष्ठ-पुन बनानेके उनका कोई कार्य अपकपका कारण न हो जाये । बी देश स्वतन्त्र है, बहूँ ताहस और महत्त्वपूर्णताओंमें, अतः

पत्रकार सर्व्व और समाजकार्य

और अजीब-जीसे बिप-युक्त पचासोंकी तरह बन्द्यन नहीं रखे जाते वे शिष्ट
 तरह अपनी बम्मीर जिम्मेदारियोंको 'विनोद' की तरह गिपटाते हैं उन्ही
 तरह अपने और समाजके विनोद और छोड़के लिये राष्ट्रीय-हितको
 कभी-कभी नीच बना सकते हैं। किन्तु जो देश भारतकी तरह पराधीन
 है उस देशके सम्पादकोंको अपने देशके भाग्यके साथ लिनाही मितकी
 तरह बरतनेका अवसर नहीं रहता एक बोलिम मरे रोगी आत्मीयकी
 तरह बरतना पड़ता है। वे अपने बीमार देश की उसके कमजोर धामके
 साथ मजाक नहीं कर सकते देशकी किसी भी घटना और अपने किसी
 भी साधनका उपयोग सामाजिक और व्यक्तिगत विनोद और छोड़के निए
 नहीं कर सकते। पराधीन देशोंके पत्र सम्पादकोंकी जिम्मेदारियाँ स्वाधीन
 देशोंके पत्र-सम्पादकोंसे कहीं अधिक और बोलिमसे भी हुई होती हैं।
 स्वतन्त्र देशोंमें पत्र-सम्पादन प्रोत्साहनका गौरवका और सुखका साधन
 होता है। परतन्त्र देशोंका सबका पत्र सम्पादन बिदेसी राज-वर्तियोंसे
 सीधा लोड़ा लेना उनके स्वाधीनता बिना सिनके पैर रखना होता है।
 सन् १७८ के कनकसेवे प्रकाशित हुनेवाले भारतके प्रथम पत्र द्वितीय
 पत्रक से लनाकर आज तकके हमारे देशके बिठने ही पत्रोंसे मिले हुए
 देशनिकाके बाराबार फौजो अमानुषीय बठार ब्यबहार मनुष्यता-हीन
 जमाप्राचना बड़े-बड़े जमनि कठिनाई और पिछले १५७ बरोंकी बठोर
 य मणार्ण इस बातका महत्त्व नुबुत है कि किसी पराधीन देशका पत्र
 सम्पादन प्राप्तका बाजीका ब्यापार है। भारतक समाचार-पत्रोंका उत्पादन
 और बिधान बिदेसी सरकारके कानूनके बस्थोंसे बार-बार रैता मया है।
 इस देशके समाचार-पत्रोंमें तीन बातोंको लनाठार सामने रखा है—
 १ हम इनके बचकर जिरों कि कानूनना रैय हमें गियल न बाये।
 २ कानून द्वारा लियेके लावन अमनी स्फूर्ति जिन बालके बार भी ऐसी
 कौन-सी बात है कि जिहें लिखकर, छप्टुकी छटा करनेका बल उठने
 ला नके। ३ एने कौन-से साधन है जो ब्यबसायकी बुदिते समाचार-पत्रों-

को खिन्ना रख सकें ।

हमके सिवा पत्र-संवादनकी कला हमारे देशमें मखबा मया होनेके कारण और 'जगन्नाके बल की कहर' देशमें अभी तक प्रवृत्त न कर सकनेके कारण देशकी औरसे - देशकी जनताकी योग्य - जो समबल का सहायता जो सन्धि हयें मिलनी चाहिए, वह हमें नहीं मिलती । जनताकी सहायताके अभावके दुर्दैवसे हम कठिनाईम पय पा रहे हैं । समाचार पत्रों की अपमा उस स्वीस हो जा सकती है जिसके गुण और बनावट मयभीत कार्याचारियोंके आक्रमण हो रहे हैं किन्तु जिसके पोषक और प्राणाधार अज्ञान हों । हम तरह आनकार ग्रन्थ और अज्ञान-सहायकके बीच सहायकके स्थायीकी रक्षा करते जाना एक कठिन तास्या है ।

ऐसी ही परिस्थिति जिसमेंसे समाचार-पत्रोंकी गुजरना होता है । किन्तु एनी अनेक अड़बटों और विकट परिस्थितियोंमें भी भारतीय पत्रों और उनके संवादनकाले अपन अस्तित्वको कायम रखा और पिछली घटाओंके पक्षीय वर्णोंमें समाचार-पत्रोंकी संकटा बड़ायी यह देख-भुनकर किसे अचम्भा न होगा ? और कौन यह न कह उठेगा कि इन कायको कायेपर लेनेवाले अभावकार बहू-मोयियोंके र्वय उनकी लगन उनक हीर्षोष्मीयता ही यह परिणाम है । कौन नहीं कहैगा कि आज समाचार पत्रोंको जो बल जो अहस्या प्राप्त है उसका पय इस देशक स्वर्गीय लोकधाम्य स्वर्गीय मोती बाबू श्रीपुत्र शफानन्द बटवों और श्रीपुत्र बुद्धश्यामम् अम्बर-बैले व्यक्तिवाका हो है । मुझे विश्वास है कि यदि हमने अपन र्वयका अगली पीढ़ीके बिलको ध्यान रखत विमुखापर विभिन्न हो जाने दिया यदि हमने भी बहू-मो-सी लगन उसी त्याग और सही अध्यवसायसे अपना काम किया तो हक करने पीछे आनवाली पीढ़ीके द्वारा एक वर्ष करने योग्य परिस्थिति दे जानमें समय हा सकेये । स्वतः-उत्पन्ना उपयोग्य करनेवालोंकी अपेक्षा उन साधकोंकी कीर्ति नि अंशय अधिक उज्ज्वल उनका प्रयत्न अधिक आरणीय उनका पुत्र अधिक है

जिन्होंने अपनी मुद्रामार्फ़े बलसे राज्य कमाया और अपनी जायदर शोधियों-के हाथोंमें बरोहरकी तरह छीप दिया ।

मैंने यह बात कई जगह पढ़ी और सुनी है कि राष्ट्रकी अथवा मानव-हृदयकी कमलियोंको फड़वा देनेवाले कवि अपने-आप ही बलम केठे हैं वे बनाने नहीं जाते । इस विषयपर निश्चित रूपसे मुझे कुछ पता नहीं किन्तु पत्र-सम्पादकके विषयमें मैं इस बातको मानता हूँ । मैं पत्र-सम्पादन-के विषयके जानकार अंगरेज केजाक मि० जीन वेघल्टनके इस कथनसे सबका सहमत हूँ कि आपसझोझका पीरक कैम्ब्रिजकी कौटि और बैरिस्टरीका बहूपन पत्र-सम्पादनमें अधिक क्षीमताका नहीं ठहरता । यहाँ तो स्वमान-जगह बेचैनी ही अधिक यद्यत्विनी होती है । यह कला असंकारी-वाले शौन्दर्यकी उपमाग नहीं इस कलाके बाह्यांगको क्षय-क्षय बरकमेवाली गभीरताकी उपमा ही या सफ़टी है, और इस कलाकी आत्माकी उपमा है वह शौन्दर्य जो प्राणोंके मूत्रका है बूँक वह मयकी गोदमें निवास करता है । सबकी गोदमें निवास करमवाला शौन्दर्य सजावे हुए राज-महलोंम नहीं रहता वह प्रकृतिक हाथों निर्माण हुई शोषिमकी जगहोंमें निवास करता है । उठी तरह पत्र-सञ्चालनकी कला युनिवर्सिटीकी पत्थर-की पसबोरोके भूते कीवित नहीं रह सकती उसके लिए हृदयकी लज्ज ही आवश्यक है । इस कलाका जीवन है सहृदयता औरक सतत बेचैनी और स्वाभिमानका स्वभाव-सिद्ध होगा । धिया और धम-दारा विडला और बहुमतताको भीता जा सकता है अगर कित्ते स्वभावसिद्ध बुद्धोंको नहीं । स्वमान-सिद्ध गुण जिनका ज्ञान नहीं उनका इस कलाका द्वार लटकायाना अपन भविष्य जीवनको बरबाद करना और देशकी हतबकों-पर बुधा बीदा बढ़ाना है । यह सब है कि मानव-पहुँचके लिए अतन्त्र बुद्ध भी नहीं किन्तु यह भी सब है कि हर काम हर आदमी नहीं कर सकता । मैं नहीं मानता कि ज्ञानके ही समान मानव-पहुँच और विद्येपत्ता मानव-वृत्ति दपलासे सबका परे है । प्रत्येक बात मानवीय दधिकी स्वाभा-

बिबलापर अक्षयम्बित होती है। अतः मेरी नज़र सम्प्रतिमे तो मनुष्य अपने मनका ठोक देखकर ही अपने लिए कार्य वृद्धि। समाचार पत्रोंके जोखिम-भर पत्रोंमें ता यदि ऐसे ही स्वभाव-सिद्ध बचिबाके लोग आयेंगे तो यह कला अधिक बढ़ेगी और अपेक्षित फल देगी।

संस्कृतो समाचार-पत्रोंके उत्तमन समस्त जनतको पाठशाला बना वाला है। 'विषयस्तइहं सामि मां स्वाम् प्रपन्नम्' कहकर, बर्मादेशोंके बरबोपर मस्त्रक मुकामेकी परम्परा सब देगोंमें रही है आज भी है किन्तु बिना काम हो समाचार-पत्राके ज्ञानकी उमकी सूचनाओंकी उन्मुक्ततासे माय प्रतीला करनेवाके सिध्योंकी जितनी बड़ी संख्या आज जपत्में है, उतनी बड़ी संख्या संसारके सब पत्रोंके जातुर्गोंके समुचे बोड़की भी नहीं है। यह सब है कि समाचार-पत्रोंकी किमीने सिद्धक नियुक्त नहीं किया, किन्तु यह बाण कहकर वे एक पिडाकके नाते पढ़नवाली जिम्पकारीस सब नहीं सकते। अपाबित और स्वयं-स्वीकृत सेवा अधिक उत्तरदायित्वपूण हो जाती है। विद्यार्थी अपने विद्यार्थीसो ताकीम पाते हैं वह ऐसे ज्ञानक रूपमें होती है जिसे उन्हें मरिप्य-जीवनमें आजमाना होता है, आज नहीं। और उन्हें अपने ज्ञानके जनक विद्यार्थी-द्वारा परिमार्जित करनेके लिए काओ बदतर भी रहता है। पत्र-सम्पादकोंके धीलाओं वा पाठकोंका यह हाल नहीं। जिस बातके लिखनेमें सम्पादकको बोड़ा ही कष्ट उठाना पड़ता है केवल करा मोचना और कुछ संदर्भ पुस्तकाको देखना पड़ता है, यदि बड़ी बात परिनिर्वातनी देखकर या हानि-नामका लुपान कर न लिखी जाय तो वह पाठकोंको खिन्न बन गौरव और ज्ञानक रूपमें महान् हानिका कारण होती है। इसीलिए कि समाचार-पत्रका पाठक जीवन-मुद्धमें लगा हुमा बीब होता है समाचार-पत्रोंसे पावे हुए ज्ञानको परिमार्जित करनेके लिए विद्वान् विद्यार्थी और उचित मरकायका उमके पाठ अभाव होता है। यह बात ठीक बँती हो है कि इतिहासक केवलक या मरिप्यवासीकी प्रकटी केवल पढ़नेमें कष्ट देतो है और पिछली परम्परा या भावी जीवनकी खर्च

करती है, अतः मनुष्यकी प्रत्यक्ष हानि नहीं करती किन्तु क्रान्ति बवाल
 बालेकी एकती सुरम्भ लोकोके बल-बलका नाश करने लमती है । अतः
 समाचार-पत्रोके सेवकको अपनी कृत्तम तत्कारसे कहीं अधिक सावधानीसे
 उठानी पड़ती है । तत्कारकी पीड़ा प्रारम्भमें ही होती है । अतः धानके
 पूरा होनके पहले ही बार बचानेका यत्न किया जा सकता है । किन्तु
 पत्र-सम्पादकके प्रहारका अनुभव, नाश और हानिके साध होता है । इण-
 क्रिय, इस विषयमें कृतम कृतमबालेकी बुद्धि, परिणामपर उठत लगी रहनी
 चाहिए । निमुक्त सिलक केवल अपने निमुक्त करनेबालेके सामने उत्तर
 बायी है किन्तु पत्र-सम्पादक समयसे देखके सामने उत्तरबायी होता है,
 क्योंकि उसके हाथमें देखका हित और अहित होता है ।

सम्मान्य बन्धुगण स्वभाव-हित सम्पादकोंकी बर्षा करनेसे मेरा
 कृतम ज्ञानको नीच स्वान देनेसे नहीं । मैं मानता हूँ कि सम्पादकके
 स्वभाव-हित गुणोको जिम्बा रखनेके लिए, ज्ञान ही एक महान् साधन है ।
 किन्तु हीरा कीमती वस्तु मझे ही हो बाजारमें रखे जानेके पहले
 उसे करारि संघर्षकोका सामना करना होता । इती तरह सम्पादकी
 बधावकारी संभाजनबाले व्यक्तिके भाग्यमें क्यातार विचारके ज्ञानका
 संपपन बदा होता है । सम्पादकों या पत्रकारोंके लिए आवश्यक ज्ञानका
 प्रश्न अभी विश्वके कोई भी विद्यापीठ पून कपसे नहीं सुलझा पावे बने
 रिया इन्वीरुड आदि देशोंमें अभी मोड़ें बयोसे पाठ्य-क्रम बनी है, किन्तु
 ज्ञान अभी निश्चितता नहीं जा पायी । भारतमें हमारे अज्ञानपर जोने
 बाला साधन हमारे कारण हम सर्वत्र विश्वके ज्ञानको बहुत देर बाद
 पाया करते हैं । किन्तु सम्पादन-कलाके ज्ञानके विषयमें मह दिग्गम
 ज्ञान्य अपराज होता । हमें एसा प्रयोग करना चाहिए जिससे समाचार
 बर्षा और सम्पादन-कलाके ज्ञानकी बड़ जने । मैं सोचता हूँ, आप सब
 संयुक्त हत बातपर अवश्य विचार करेंगे कि ब कीन-कीन-से प्रबाल उद्यम
 है, या समाचार-पत्र और सम्पादन-कलाके लिए अधिक उपयोगी छिड़ हो

फते हैं ।

महामयो हमारे देशके समाचार-पत्र संघटित नहीं हो रहे । श्रीपुत्र
टरावनक समापत्रित्वमें बम्बईमें श्रीमान् रामस्वामी शास्त्रीके समा
पत्रित्वमें मद्रासमें 'आरबड'के एक भूतपूर्व मन्त्रालय मन्त्रालयके समापत्रित्व-
में बंबाईमें और इसी प्रकार मिम्बईमें, एक-एक पत्रकार-संघ स्थापित हैं ।
बम्बईके भाष्यशाली संघके समापत्रि तो कुछ समय तक महात्मा गांधी जी
रुके हैं । किन्तु खेर है कि शिवा कमी-कमी मित्रा और विरोधके
प्रस्तावोंके पास कर लेनेके इन संघोंका कोई विशेष उपयोग जहाँ
तक वेरा सुख सुखना-मान पहुँचा है, नहीं हुआ । इन पत्राल निकलकर
यह उद्योग नहीं किया कि एक बार देशके समस्त पत्रकारोंके रूपमें अपनी
राष्ट्रीय पत्रसंस्थिता बन लीजते और पत्रकारोंको संघटित करते । हमारे
संघटित न होनेके अनेक कारणोंमें दो प्रधान होते हैं — एक तो समा
पत्रकारों या संघालकरण स्वयं अपने अपने पत्रोंके जीवनविधाता हैं फिर
महा न किमीक अनुशासनमें कैस रहे ? हमारे दिन पूर्वापत्रियोंके हाथमें
देशके कुछ प्रभावशाली समाचार-पत्र हैं, वे चाकर इन बातका भय मानते
हैं कि यदि ताइनी प्रीव 'अपकरभ' पत्रकार संघमें बहुरान हो गया तो
निर्भ्रुयताको एक महरी टोकर लगी और उसके टोकर लगते ही पूर्वा-
वादी इमारतकी नींव टूटने लगेगी । इसका एक तीव्र कारण भी चाकर
हो । संघटनका काम बिना बनेके नहीं बन सकता, और बन तो मन्-
पत्रियोंकी बेबन है । प्रीव अपनी आपसी ताइतकी भी संघटित नहीं
करना चाहते चाकर उनका यह खगल है कि केवल समाचार-पत्रका
उपदेय ही समाचार-पत्रका काशी बसगली बना देगा इधर जन-पत्रियों-
की इधर चलनेवाली संस्थाओंमें यह सार्वजनिक-बल नहीं आता या
किया देशकी हलबलको यथस्वो कर मना बलके वीरोंको उसके अत्यंत
संज्ञानमें महबुत बनाता है । तब संघटन कैस हा ? देशम यदि बार-बार
एकक कानून जारी निते गये और समाचार-पत्रोंकी कुचका मया तो

बहुरान सचय और समाचारभापें

इसका कारण समाचार-पत्रोंका संघटित न होना ही है। इन समाचार पत्रों और समाचार-पत्र-संघालकोंका तो प्रायः कुछ नहीं विपक्षता जिन्हें अपना व्यापार या सरकार सरकारमें अधिक पानके लिए पत्रोंका संघालन करना होता है किन्तु बिना समाचार-पत्रोंके सम्मुख ओक-मतका सरल होगा ही उन्हें है उन्हें कानूनकी रूपासे कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं। इसका पता उन्हें ही है कि उन्हें समाचार-पत्रकारके नाते नित्य सरकारी नियंत्रणमें रहना और जैसे बिन सरकारी प्रहायोंको सहना पड़ता है वर्यपि सब देशोंके दरवाजे हमारे देशवासियोंके लिए प्रायः बन्द-से हैं किन्तु व्यापार कला मरबुरी विद्याभ्यास तथा अन्य अन्य कामोंके जो लोग देशसे बाहर गये हैं या जसे जाते हैं, उन्हें देशमें औरनेमें कोई बाधा नटिनाई नहीं होती। किन्तु जो लोग बान्दोलनके नाते समाचार-पत्रोंमें लिखनेका पाप करते हैं या जो समाचार-पत्रोंसे सम्बन्ध रखते हैं उन मारत-वासियोंको इस देशके शासनकी आरसे बरबात दिया जाता है कि वे अपनी मस्तुभमिका पुनः मुख न देखें। जामा काजपत-राजकी बाँध बचों तक अमेरिकामें जाओ-बीबन स्थीत करते हैं स्वामी सरपदेव कठिनाइसे पासपोर्ट पाते हैं और कितने ही साहित्यसेवी पासपोर्ट नहीं पाते ऐसे व्यक्तियों ही में-से होनेके कारण भीमूठ सापुरकी सकलातबाला एम० पी० पालमेष्टके सरस्व हीकर भी भारत जानसे रोके जा सकते हैं। क्या हम उन लोगोंके लिए सहे हुए बहोको मूल सकते हैं, जिन्होंने देशसे बाहर समाचार-पत्रोंमें अपार आम्बोलन कर संसारके ओकमतकी देशकी स्वाभोगताके अनुकूल बनाया है? सज्जनों यदि आज अमेरिकाकी आयोवा बुनिवर्सिटीके विज्ञान प्रोफेसर सुधीन्द्र बोस बार-बार प्रवक्त करनेक पदवात् भी भारतमें नहीं जा सकते और यदि भीमूठ बहाल कुपार राय राजा महेंद्र प्रसाद भीमूठ हरिद्वार विद्यासंकार भीमूठ एम० एन० राय भी कानिदास नाथ लाला हरदनाक भी सारदनाथ दास भी रासबिहारी बोस और भीमूठ सैयद हुसैन आज देशनिवालेके

इतनी बचपन-पिबोकी तरह देखते बाहर है और अपनी मातृ भूमि में
 ही बाते तो इनका कारण है - बच्चे पत्रकारों के संगठन का काम। उन
 बच्चों के बारे में बचपन नहीं जिसका हमारे देश में शासन है। उस
 बचपन में तो बचपन को बौद्धिक और समाजशास्त्रीय साम्राज्यशासन
 का रह सकती है, किन्तु इसी इंग्लैंड के शासन में हमारे देश में बचपन
 ही का सकते हैं। समाचार-पत्रों-पत्रों निर्भीकतापूर्वक भारत की
 शासन साम्राज्य विरोधी है। इसके सिवा कष्ट सहकर या बिना कष्ट सह
 का शोक प्रसिद्ध लेखक या सम्पादक बन गये हैं और बिना पढ़ी-सी
 शासन बाते ही लोक-मन को प्रसन्न हो पड़ता है। इनकी बात जान
 लेखिए। बचपन प्रसार करते समय, तो सरकार भी जो बार लोक लेखी
 किन्तु दिन अमागोनि प्रसिद्ध लेखक या प्रधान नेता का शौर्यपूर्ण फल
 ही पाया, किन्तु समाचार-पत्रों के साधारण लेखक उप-सम्पादक या
 शासन कापकलाको (सिपयसे अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है,
 कि बचपन कभी कानून को कृपा हो जाती है। तो उन्हें बचपन में तरह
 तरह के कष्ट मिले जाते हैं, साधारण और और शत्रु से भी बरतार रखा
 जाता है, और जान पीने तथा जीवन में इतनी कापार्ण पैदा कर दी जाती
 है कि वे बेचारे कब इतनीका संवरण कर पय इसका उस बचपन का पता
 ही नहीं चलता जिसकी सेवा करते-करते उन्हें बचपन में उपहार पाये। एष
 बचपन में बचपन के शोषों के शोषों माता-पिताओं भाई-बहनों और बच्चे-
 बचपन की जो दुरवस्था होती है उसको तो कल्पना ही बस है। वे भूलों
 गते हैं सरकार के सम्बन्ध-मात्रक होनेसे प्रभावशील लोग पृष्ठ ही नहीं।
 बचपन उनसे परिचित न होनेक कारण सहायता नहीं करती परिणाम
 यह होता है कि उन परिवारोंको भीषण भी नहीं मिल पाती। मुझ समा
 कीविए इन बचपनोंकी इस दुरवस्थाका कारण और कुछ नहीं बचपन
 देशके पत्रकारोंका सचित संगठन न होना ही है। भारतके बचपनोंके
 समाचार-पत्रोंके विद्वान् सम्पादक और पत्रकार अपना चाहे जो स्व रत्न

में बाधा करता हूँ कि हिन्दीके पत्रकार अपने संघठनको ऐसा स्वरूप देते जिससे वह संघठन कष्ट-भोगी पत्रकारोंके लिए सहायक भी हो सके ।

संघठनो एक बार एक अंदरूनी दैनिकके सम्पादकीय विभागमें काम करनेवाले मित्रने पूछा पत्रकार कौन है ? क्या भारत सरकारके बोज बाब इनफार्मेशनके भू पू० डाइरेक्टर प्रोफेसर रघुचक्र बिलिबन्ध और भावकमलके उनके उत्तराधिकारी मि० कोटमन पत्रकार बहूँ या सकते हैं ? क्या बम्बईके इण्डियन मेलके स्वामी सर दिनसा पत्रकार हैं ? यदि देशके प्रधान स्यापाठी टाटा या भीमान् बनबाम्बासजी बिड़का कल कोई पत्र प्रकाशित करने लगे तो पत्रकारोंकी मजदामें या जायेंगे ? अथवा किसी देसी रिमासतके महाराज अपन राम्मम पत्र प्रकाशित कर उसमें सैख लिखने लवें तो वे पत्रकार हो जायेंगे ? सम्भव है इन प्रश्नोंके मेरे जबाबका लोग मजबूत लड़ायें । पर संघठनो मेरा तो स्पष्ट मत है कि वे संघठन पत्रकारोंकी श्रेणीमें नहीं गिने जा सकते यदि देशमें कोई पत्रकारसंघ काममें हो और उसमें सरकारी नौकर, बनिफैलि सेवक और एस कोमोडी तादाद अधिक हा जाये जिनके जीवन पत्रोंकी आम-दनीपर अवलम्बित नहीं या जिनके पत्र किसी कमाईके बिज्ञापनमात्र है तो मैं ऐसे संघको देसी संघको एस सम्मेलनको निहायत जरूरके साथ 'पत्रकार संघ' कहनेसे इनकार करूँगा । पत्रकार ता श्रेणल नहीं है जिसका जीवन पत्र और सम्पादन-कलापर ही अवलम्बित है और जिसके सुपोंका ज्ञान और बुजुर्का सहारा समाचार-पत्र ही है पत्रकार हैं वे लोग जिनका मूल्य थाई उनके पत्रोंके संस्करणकी तरह कम अधिक कूटा जाता हा जिनु कबल पत्रकार होनेसे जिनके प्रभावको कम नहीं कूटा जा सकता ।

संघठनो यह लख है कि भारतमें पत्रोंका जन्म उतना आकषक नहीं । अच्छे मस्तिष्क परिपुष ज्ञान और शीष्टिमात्र कलाके लोग समाचार-पत्रोंमें अपना जीवन पपाना नहीं लाहते इसका प्रमाण कारण ता

यह है कि यह व्यवसाय राज-कर्तारों-द्वारा भारतकी दृष्टिसे नहीं देखा जाता इपीकिए जो लौप-जुर्मनि जैव-यातना या कछुमरों तथा राजाओं-की नाराजोंसे आती थीहीन अनुभव करते हैं। वे इस रोजपारमें अपने जीवनको बरबाद करना नहीं चाहते बुरे समाचार-पत्रोंपर रहनेवाली क्लकटोंके कारण पत्र अपने पुरानेका पुन विकास नहीं कर पाते और ऐसी ब्यामें वे शरीरोंमें अपना जीवन व्यतीत करते हैं। तब यदि कुछ तक्षण निर्भीकतापूर्वक अपने दमकते हुए अस्तित्वको लेकर पत्रोंकी सेवाओं-में प्रवेश की करना चाहते हैं तो पत्रोंकी ऐसी स्थिति नहीं होती कि वे इन भविष्यके उज्ज्वल स्वप्न देखनेवाले तर्कोंका स्वयं-मुद्राओंकी कोमल-पर प्रामाण्य कर सकें। यह देखा गया है कि जब-जब समाचार-पत्रोंके सम्बन्ध विचिन क्रिये गये हैं या देशकी व्यापारिक अवस्था अच्छी रही है और समाचार-पत्र अच्छा बेतन दे सके हैं तब-तब देशके तर्कोंमें समाचार पत्रोंके बीजिप-मरे रास्तेसे अगल भारतको पीछे नहीं छोड़ा किन्तु इन सालसे इनकार नहीं किया जा सकता कि सरकारने अपने विरोधसे भारतके पत्रे सिधे तर्कोंको पत्रकार नहीं बनने दिया।

संभवतो हम विश्वासमें एक कठिनाई और है। समाचार-पत्र सम्पादन कलाकी गिरावट इन देशमें नहीं समुचित प्रबन्ध नहीं है। अभी कुछ दिन हुए जबई विश्वविद्यालयने इस विश्वासमें कुछ उद्योग करना चाहा था किन्तु अचिर कुछ नहीं हुआ। देशके तर्कोंको सम्पादन-कलाकी पिछा देनेके पथमें हमें भारत-भगानी संगठनका बन्द-बिन्दोना मिलने तक नहीं टकुरना चाहिए। यह सुतोपची बात है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन की शरीरार्योंमें एक विषय पत्र-सम्पादन भी है किन्तु उस पत्रेधामें पास होनेवाले तर्कोंका पत्रोंके कार्यालयमें जब वे नियुक्त किये जाते हैं कोई कामका उपयोग नहीं हो पाता। केवल पत्रेधा ही से सम्पादन निरर्थक भी नहीं। हिन्दी समाचार-पत्रोंके कार्यालयोंमें योग्य व्यक्तियोंके प्रवेश करानेके लिए, एक पाठशाला या व्याकरणक नये नामोंकी आड़में-से

कोई घण्ट बुनिए ठो कहिए एक सम्पादन-कलाके विद्यापीठकी आवश्यकता है। ऐसा विद्यापीठ किसी योग्य स्थानपर बुद्धिमान् परिषदी अनुबन्धी सम्पादक गिहार्डो-द्वारा संघालित होना चाहिए - परन्तु पीठमें सम्पादन विषयोंका एक प्रकारका प्रबन्ध संग्रहाम्य होना चाहिए। बड़ी सरकारी घर-सरकारी रिपोर्ट प्रस्ताव आदिकी व्यवस्थाबद्ध आइनें होनी चाहिए। पीठकी तालीममें इतिहास भूगोल अर्थशास्त्र राजनीति और साहित्यके परस्परसम्बन्धी ज्ञानके रूपमें पत्र-संवादनकी विविध बाहुओंका समावेश होना चाहिए। बड़ी बठायी जाना चाहिए कि प्रत्येक विषयका सम्पादन कैसे किया जाये विषयमें प्रवेश कैसे किया जाये साधन-सामग्री कैसे जुटायी जाये और उसका किस तरह उपयोग किया जाये एक भाषासे दूसरी भाषामें अनुवाद दिन-दिन पद्धतियोंसे कैसे जायें बटनाओंको काव्य कहानी कुतूहल सम्भीरता विरोध सज्जन और उपेक्षाका स्वरूप कैसे दिया जाये संसारकी घटनाएँ कैसे बुनी जायें और उनका विविध तैयारी रूपोंमें पृथक्करण कैसे हो बड़ी-बड़ी बातोंको छोटा स्वरूप कैसे दिया जाये और कोई भी ज्ञान समस्त स्थितिके परचाहू समाचार पत्रोंमें कैसे दी जाये आलोचनाएँ कैसे की जायें आलोचनाओंके अभाव कैसे निवे जायें कि आलोचनाओंमें विषयकी मोमोता करतै हुए व्यक्ति-की उपेक्षा की जाये और निम्नमें नहीं - आदि बातोंकी धुंध और उपयोग प्रिया देनकी व्यवस्था होनी चाहिए। इसी संस्था-द्वारा प्रयोगके लिए, एक साप्ताहिक पत्र और एक मासिक पत्र भी प्रकाशित किया जाये। इस संस्थासे उत्तीर्ण होकरके परचाहू विद्याविषयोंको देखके कुछ प्रसिद्ध और उत्तम समाचार-पत्रोंके कार्यालयोंमें कुछ मनस्वी सम्पादकोंके पास प्रत्यक्ष ज्ञानके लिए रखा जाये। इस तरह अन्वेषी पद्धति-निर्वाह और समझनेका निश्चित ज्ञान वा बुझनेवाले तदन्य चार-पाँच वर्षोंमें सम्पादकके कामकी शीघ्र हो नर्नेने। और रिपोर्ट प्रूफ मेट तथा अन्य विभिन्न-विभिन्न सम्पादनके कार्योंसे मुक्त कर उनमेंसे कुछ व्यक्ति परि

उत्तम स्वभाव मित्र लगन हुई तो हमके अच्छे पत्रकार हो सकेंगे। इनके
बाद भी अधिक महत्त्वका काम तब हो जब हम विद्येय होनहार तकर्मोंकी
इन कलाका ज्ञान प्राप्ति करनेके लिए विदेशोंमें भिजवा सकें। महाम्
निष्ठ हूँ देश अफगानिस्तान टर्की और चीनके सैकड़ों तबान युरोपीय
ज्ञान क्षेत्रोंमें है। तब क्या हमारे सम्पादन-कलाके कुछ तक्षण भी न हों ?
बल्कि, ऐसी विद्यार्थियों, एक माय सम्पादन कलाकी टायीम देनेवाला
तथा हमारा माय व्यवस्थापक तैयार करनवाला होना चाहिए। छात्र
ज्ञानोंका आर्थिक और व्यवसायकी दृष्टिसे संशोध्य हमारे पत्रोंकी एक
भाषी बकरत है। उत्तम व्यवस्थापकके अभावमें उत्तम सम्पादनक अकेला
कुछ अधिक नहीं कर सकता अथ विभाग होना ही चाहिए। राजाके
मन्त्रीकी तरह सम्पादनका व्यवस्थापककी बकरत है। कई होनहार
पत्रोंके दुबानके प्रबान कारणोंमें एक कारण था उत्तम व्यवस्थापककी
अवनी। अन्तु सज्जनो ऐसी विद्यार्थीकी स्वारनाकी ओर मुझे आशा है,
आपका ध्यान नय बिना न रहेगा। किन्तु "भूखे भजन न होय मुगला।
ऐस विद्यार्थीका निर्माण पत्रोंके मुख्य-अवसाधियों-द्वारा नहीं स्वयं
मुगलों-द्वारा ही हो सकता है। हिन्दा यापी जनताका अिजना विस्तृत
पत्र है उसमें रिक्त ही बनो-मानो और राजा-महाराजा पढ़े हुए हैं। यदि
वे मैत्रुता ब्राह्मणओर और बड़ीयके अज्ञस द्वितीय-अवतुका हम कर्मोंको बस
एक विद्यार्थीके ज्ञायम होनमें डेर नहीं कर सकती हम तो हिन्दू
मुनिवर्षिणीको अग्र सरकारी पुनिवर्षिणियोंकी तरह विन-बुने विपरीतको
टापीम देते ही नहीं देखना चाहते। हम चाहते हैं कि उसके संशोध्य,
बाने पाठ्यक्रममें सम्पादन-कलाकी भी स्थान दें। मरा विरनाम है
आपके प्रयत्नोंका सब हम कल की टायीमकी इन जिज्ञासोंमें अवदान
बुद्धका। यदि कुछ अतिरिक्त सज्जन एक-एक विद्यार्थीको अपनी महापतासे
विदेशोंमें सम्पादन-कलाका अध्यास करन भिजवायेंगे ता ब देसक भाषी
लोकनको आशु करनी ही एक अच्छी सेवा करे।

पत्रकार सचच और सम्पादननाए

सम्मान्य सज्जनों के उनके अँगरेजी पत्र लिखते यह कहकर मजाक उड़ा दिया करते हैं कि देसी भाषाके पत्रोंमें कुछ नहीं होता और हमारे दुर्भाग्य से अल्पसंख्यक मराठी गुजराती और तेलुगु भाषियोंकी अपेक्षा ऐसे लोगोंकी तादाद हमारे यहाँ अधिक है। जो लोग अँगरेजी पत्रोंकी महत्ताका स्वप्न देखते हैं वे यह नहीं जानते कि अँगरेजी पत्र नामी जनताके हाथों नहीं पहुँच पाते। वैसे कि माननीय बाबू गोविन्ददासने स्टेट कौन्सिलमें हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनानेके प्रस्तावपर बोलते हुए कहा— देशमें जो सरो बेड़ (१२) आरामी अँगरेजी बखरोंसे परिचित है अँगरेजी पत्र बन्द, अल्पसंख्यक शास्त्रीय ज्ञान और मित्र मित्र बाँधोंकी बर्बाद करते हैं, और कहा जाता है कि देसी भाषाके पत्रोंमें यह कुछ भी नहीं होता। अँगरेजी पत्रोंमें तार समाचार और देश-देशान्तरके संवाद रहते हैं देसी भाषाके पत्रोंमें नहीं होते। इसके सिवा अँगरेजी भाषाके पत्र हिन्दी भाषाके पत्रोंसे शोध प्रवर लेकर आते हैं। देसी भाषाके पत्र ऊँचे विषयोंको बर्बाद करने करें? अँगरेजीका आवाज आधुनिक लोग और आपसमें अपने देशकी भाषामें संवाद-पत्र पढ़नेके आदी होते हैं और हमारे पत्रोंके अँगरेजीवादी पाठक नहीं होते। हमें तो ऐसे पाठकोंसे बरचना पड़ता है जो देशके शासन द्वारा पढ़े-लिखे नहीं होकर दिये जाते और जो केवल अपना नाम-भर सिखाना-सूचना जानते हैं। ऐसी जगहमें हम देशकी सारी जनताके हितका साक्षर हैं या देशके बोध-वर्धक सज्जनोंको समुप दे? अपनी बुद्धिसे देखिए, तो अँगरेजी पत्रकारोंके सेनाक टाइप की हुई प्रतिपाद देने हैं तार समाचार अँगरेजीका आते हैं बड़े-बड़े राजनीतिज्ञोंके भाव्य अँगरेजी में होते हैं और सेनाकामिन्दर याक धायर पोस्ट टाइम्स तथा सिम्प्ले फ़राग्य हिन्दू कोरबड सब अँगरेजीमें प्रकाशित होते हैं और अँगरेजी पत्रकारोंको पढ़कर बोड़ी-सी काट छाँट करने और एक-दो परिचयों जोड़कर मिला कुछ नहीं करना होता। देसी भाषाके पत्रोंकी महत्ता कठिनाई है तारों और समाचार-पत्रोंके समाचारका अनुवाद करना

को मौलिक लिखतसे कहीं अधिक बड़ा हैनेबाका व्यापार होता है । इसके सिवा देशके कम पड़े लोग अपने दुःख-दर्दको बिल भाषामें लिखते हैं वह पत्रोंमें छाने योग्य नहीं होती उसे सभ्या नहीं और शुद्ध करके पत्रमें देना पड़ता है ऐसी अवस्था होनेके कारण थोड़े ही श्रमम अधिक योग्य पत्र बनानेका अवसर अंगरेजी पत्रकारको होता है देशी भाषाके पत्रकारका नहीं । तो भी गरीबोंके दुःख-दर्दको जो बातें देशी भाषाके समाचार पत्रोंमें देखनेको मिलती हैं अंगरेजीके समाचार-पत्रोंमें देखको सचची बननाका उदना साहित्य देखनेको नहीं मिल सकता ।

देशी भाषाके समाचार-पत्रोंमें जो भातक परम्परा देखनेमें आती है - वह है अंगरेजी पत्रोंकी बकरतसे अधिक बूझ समेटना । मैं यह बात तो मानता हूँ कि प्रत्येक सम्पादकका अंगरेजीका ज्ञान खूब उज्ज्वल होना चाहिए ताकि देशमें प्राप्त ज्ञानके द्वार उसके लिए खुले हुए रहें पर वह बाने ही साथी संवाद-पत्रोंको हीम बुझिये न देते । हमें देशी भाषाके समाचार-पत्रके अवतरण संवाद और सम्मतिपत्रा उद्भूत करने चाहिए और जिन काममें एक पत्र सिर खपा चुका है उसमें प्रत्येकको सिर न खपाकर, बानो औरसे कुछ-न-कुछ नया देना चाहिए, जिसका उपयोग देशी भाषाके अन्य पत्रों ही सके और उनका ज्ञान और समय बचे । देशी भाषाके समाचार-पत्रोंको नमन्य समझनेकी परम्परा होपूज है । तो भी हमें चाहिए कि हम अपनी परिस्थितियोंसे जमड़ते हुए अपने समाचार-पत्रोंको ऐसा बना दें कि जिससे हमपर ज्ञानकी कमीका सांछन न रह जाये । हम जानते हैं हममें जम अधिक कपेगा किन्तु यह काम इस देशमें हमी देशकी भाषाका सासन बढ़ानेके लिए करना ही हीया । समाचार-पत्रोंकी भाषा बननाही भाषा हीनी चाहिए । उसमें कठिन शब्दोंका प्रयोग सभी समय हीना चाहिए, जब किमी वैज्ञानिक शब्दको अन्य भाषासे हम अपनी भाषामें प्ररट कर रहे हों किन्तु अन्य बातोंमें समाचार-पत्रोंको भाषामें न प्ररटना बात जाना चाहिए न प्ररसोका बबाब बहु साधारणसे साधा-

पत्रकार संवप और समाचारवाप

राज जनकी ममत्वमें आनेवाली भाषा हीनी चाहिए। यह सच है कि जन
 बाव हमारे मामकी एक भाषी कठिनाई है। देखके सासुनकी रचना एसी
 है कि देखकी बुद्धिके साथ-साथ सिद्धा व्यवसाय कुवि रास-सभा स्वामीय
 स्वराज्य और सरकारी नौकरीके स्थानमें घनिष्ठ ही अधिक बढ़ सकेंगे,
 किन्तु इस कुविमताके खिलाफ एक संसारव्यापी जागृतात्मक चल रहा है।
 यह देखते हुए भी कि घनिष्ठ अपने जनसे बड़े-बड़े स्वतन्त्रताकी चीज
 हाँकनेवालोंको सखीर सेते है हयें हरगिज निरास नहीं होना चाहिए
 और यह करना चाहिए कि अरिजनीक सेहतियों और उद्यमक और
 प्रजाहितकारी भाषोकी ही बुद्धि हो। अभी भी हिन्दी संसारमें दुनियाकी
 उच्च जन मलबायेकी मसे ही अधिक हो जिन्हें अपने विज्ञान व्यापार
 और प्रभाव बढ़ानके नाते बनिफोंका निरिचयत छनछनयाने रहना पण्डा
 है किन्तु आज भी हिन्दी कैसरी कर्मयोगी प्रताप ऐतिक और स्वबेय
 जैसे साप्ताहिकोंका देखकी स्मृतिपर गहरा प्रभाव है। हितवादी का
 नाम भी इसी पत्रोंकी श्रेणीमें आता है। इनमें प्रताप' की लपसा बड़ी
 और उसकी स्थिति स्थायी ही बयी है। इसमें सन्देह नहीं कि जो लोग जन
 कार्यात्ममें काम कर रहे हैं उनकी सेवाशोका काड़ी मुख्य है तो भी यह
 हिन्दीका बुर्भाव्य है कि कान्ता काजपत राज जो व० मरनमोहन मास्त्रीय
 बाबू कामप्रभासजी बायसबास बाबू श्रीप्रकासजी बाबू राजेश्वरप्रसादजी
 माई परमात्मन्दी आदि सज्जनोंने हिन्दी पत्र-सम्पादनसे दूर होकर
 हिन्दी पत्रकारोंकी अथीको सखीर बना दिया। ये सज्जन ऐसी बहियाँ हैं
 जिनका सम्बन्ध भारत व्यापी राष्ट्रीय जीवन और प्रभावसे है। एसे सज्जनों
 के साहित्यकी प्रवृत्ता सेवा छोड़ देते हिन्दी समाचार-पत्रोंकी प्रतिष्ठाको
 हानि पहुँची है। मजे इस बातका पूर्ण पता नहीं कि भारतके कोम-नीम
 पत्रकार देखते बाहर सेवा कर रहे हैं। विदेशोंमें कह भावतयाने जिन
 सज्जनोंका मैं ऊपर उल्लेख कर चुका है उनके निवा प्रसिद्ध केन्दक सेवा
 विहाय मित्र और अंगुष्ठ पत्रिकारका हो नाम मृत पार जाता है। हिन्दी-

मादिपोंके या हिन्दी पत्रकारोंके गौरवको बाहरी देशोंमें बढ़ानेवालोंके नामोंमें मुझे गवपूबक एक तो सहृदय पण्डित बनारसीदास बतुबेरीका नाम देना चाहिए, और दूसरा नाम 'हिन्दीके उत्साही और कमछोछ सम्पादक बदरन त्रिवासी श्रीमूठ भवाजीरपाऊका उल्लेख करना चाहिए ।

उपरोक्त जिन बृहत् सञ्चनोंने आजसे दो-तीन तप पूरा इस धर्ममें मयी पीढ़ीकी पुकार की थी उनमें बाबू बासमुकुन्द गुप्त, स्वर्गीय पं० राधाचरण भोस्वामो स्वर्गीय धोराबाहूप्लव आस पूरुषवर स्व पण्डित माधवरावजी सप्रे आचार्य महावीरप्रसादजी त्रिवेणी और पण्डित अम्बिका-प्रसादजी बाबूपेयी आदि हैं । आजके हिन्दी भाषाक युगको पण्डित महावीरप्रसादजी त्रिवेणी-द्वारा निमित्त तथा लेखको पं० माधवरावजी सप्रे द्वारा निमित्त कहना चाहिए । यों सवाएँ सब सञ्चनोंने की हैं किन्तु सम्पादकीय व्यवस्था विचार-प्रवाह और भाषा-शैलीके रूपमें वर्तमान युगको त्रिवेणीजी और सप्रेजीका ही मुन कहना होगा ।

उपरोक्त इसके पश्चात् जबसे राष्ट्रके तेजस्वी भावोंका मुन शुक हुआ और निर्भीक भाषा-शैली और विचार-परम्पराका प्रवाह हिन्दीमें बहा तब बहुतांको आशा था कि कमयोगी की शैली युग-निर्माणका काम करगी किन्तु यह पत्र अधिक दिनों तक नहीं टिक सका नागपुरके 'कैदारी के बीर-पदको ज्ञायम रखनेका क्रम आई यनेघातकरकी केखनीने क्रिया करनेकी बहोमें से हिन्दी-द्वारा सामयिक जमानेके सप्रे-पुनजमें लगे ही रहे, जब हिन्दीको तेजस्वी भावनाओंके युगको धीमे-धीमे निर्माण करनेका ध्येय श्री० यनेघातकरकी ही देना होगा । हिन्दी पत्रोंमें विदेशीसे सतत ब्रह्मण करकेका ध्येय राजा महेंद्रप्रतापकी तथा उन सब सञ्चनोंको है जिन्होंने मरस्वती माधुरी आदि और मनोरमोंमें विदेशीसे अपने सेवक मित्रवाये । मासिक साहित्यमें 'प्रभा के न रहनेसे तेजस्वी साहित्यकी भारी क्षति हुई । 'माधुरी' की आजकलकी हालत इस बातका सुबूत है कि वहाँ साहित्य धनपतिपोंके हाथमें होता है और सम्पादक अपने भावोंके

सिम्ह स्वतन्त्र नहीं होता वही साहित्यकी चारा एक-सी नहीं बह सकती । 'सरस्वती' अपने पूर्व पक्षपर है और वह उसे कायम रखे हुए है । 'मनोरमा' अन्धरी रुचिसे प्रकाशित हो रही है साहित्यकी मिस-मिस्स बाबूजीवर प्रकाश डालनेका मतलब किया जाता है । बास-साहित्यमें 'विद्यार्थी' का बह स्थान नहीं रहा । उससे परिपूष उपद्रविकी आघात की वही भी किन्तु वह चाड़ा बढकर ठहर गया । चिन्तु में प्रिन्सु साहित्यकी स्वाभाविकता पूरा जायी और अन्धेरिवा सरायके बासक' ने तो बास-साहित्यमें देखकी अग्य मायाजीके सामने भी अपनीकी हिन्दीमें नाम देनेकी चीज बना दिया । यद्यपि देशमें स्त्रियोंको मताधिकार मिल रहा है और निर्धर्मपर देशकी बागुठिने साथ बढती हुई जिम्मेदारियाँ आ रही हैं तो भी 'दूरम्भमी' 'स्त्री-दर्पण' 'महिला-संवरण' तथा अग्य उत्सम्भामी पत्र पत्रिकाओंने अपने स्वरको युगके साथ परिवर्तित नहीं किया । इस विद्यालय उत्तमतर पत्र चर्च है । उनमें साहित्यिक रुचि है सीमी है और सबसे अधिक समयके सम्बन्धको पढ़नेका सामग्य है । इस विद्यालय नाम सेन सायड स्त्री सम्पादित पत्र है - 'बयोधि । डिम्बीके ईजिबोमें शीघ्रत पराङ्करबी-द्वारा सम्पादित 'मात्र का आसन उच्च है । बाबू चिचप्रसादजी पुठने हिन्दीको भेद्यनर सामयिक साहित्य देगन बटा बन ग्यम किया और वह उठाया है । 'हिन्दू संसार' का सम्पादन उच्च रुचि और जिम्मेवारीका पूरा विचार रखकर किया जाता है उसमें दलबन्धीको राष्ट्रीय भावना पर राज्य नहीं करन दिया जाता । 'स्वतन्त्र' की विद्येपता उसके पैपाड-सम्भामी सेप है । इस विद्येप विद्यालय उसकी दृष्टि रहना हिन्दीके सामयिक साहित्यके नाठे महत्वकी वस्तु है । 'अर्जुन' की विद्येपता 'नाथ' की तरी बातें और मुबारके लिए उनकी बुलन्द आवाज है । 'विश्वपिन' और 'बतमान' देशकी राष्ट्रीयतामें अडगामी मतके पत्र रहे हैं जिस मतका प्रहण करना बहमाध्य होता है और उत्तरेसे लामि नहीं होता । पुरान साप्ताहिकामें अंगवाती अपन अंगस बना आ रहा है वह स्वायी सनातन-

वर्नी पत्र है। बिस्केट्टर का सम्पादन आजकल विरहमनीय और दुःख
 हाथोंमें लोथ पड़ता है किन्तु ग्यागरी सम्पादन-द्वारा संवाचित पत्रोंमें
 राष्ट्रम जगति स्थायी नहीं रह पाती। आजका स्वरूप न जान किस दिन
 बदल जाये। द्विदैनिक पत्रोंमें सुष है जिसका बनना पत्र है हिन्दी
 जगत्की सभामें उद्योगी सञ्चारपर अविश्वास नहीं किया जा सकता।

देशी राज्योंमें काम करना बड़ी टेढ़ी खोर है। निरंकुश घासकोंके
 बोध काम करनेमें त्रिम धैर्य सहिष्णुता और साहसको जरूरत होती
 है, उसे कायम रखत हुए धीमुठ रामनारायणजी बीबट्टे और धीमुठ
 पंकराजजी बर्मा इस बीर मोठाकी ध्वनिको गूंजती हुई रखे
 हुए हैं या हिन्दीभाषियोंमें राष्ट्रीय पत्रिकक नामस परिचित है।
 आत्मियरका 'जपावा प्रताप' आत्मियर राजका पत्र है किन्तु स्वर्गीय
 माधव महाराजके जमानसे अपाकर आज तक धीमुठ मापुर महासभ उस
 सरकारी पत्रको बडे ही अच्छे ढंगसे चलाये सिये जा रहे हैं। 'भारत-बोर'
 का बिक्र बनी नहीं किया जा सकता अभी तो आमान् भरतपुर नरेचक
 मुबारको बूम है। यह दखना है कि जब महाराजका राज बदलपा
 तब पत्र कहाँतक राष्ट्रीय सभा या यों कहिए कि भरतपुर और राजनूताने-
 की एहीव प्रजाकी सेवा कर सकता है।

देशके अन्य पत्रोंमें त्रिनको सभार् मूख्यवान् ही रही है वे हैं
 बकमोहाकी 'घण्ट' और उनको अगाठार अपने खेबकी राष्ट्रीय सभार्,
 बिजारेके 'देश' और महाको' जापरका आय-मित्र आदि। 'प्रताप'के
 काब त्रिन पत्रोंका उत्कृष्ट होना चाहिए, उनमें 'सैनिक'की संवत्सिता
 और उनके सम्पादनक धामुत् अहृत्परत पाठोवाकक प्रयत्न हिन्दी
 भाषियोंके आनर करनेको बीब है। 'अभ्युदय'की सभा मठत जारी है,
 और जब स्वर्ण पं० हृत्पकान्तवा लिखते हैं तब इस पत्रको अग्रराष्ट्रीय
 पत्रा विधेय अछो होती है। हृत्प व्यापार कला और भिन्न-भिन्न
 वर्गकी पत्रोंकी हिन्दीमें भाटी कमी है। त्रिनके पत्रोंमें अन्य भाषिकोंके

पत्रकार सभ्य और सम्पादकों

साथ, पूनाके धीमुत बासुरेकर राजजी बोधीके प्रयत्नोके अन्तर्गत
 'चित्रमय जगत् का मी विशेष स्थान है।

उम्मीतो जिस प्रान्तसे मी जा रहा है उसके अतिरिक्त जिसेमें
 हिन्दी-भाषियोंकी बस्तो है, और ऐसा एक मी जिहा नहीं जहाँ हिन्दी
 भाषा न समझी जा सकती ही। उस प्रान्तमें अँगरेजी भाषामें नाम
 देनेको एक अँगरेजीमें प्रांतीय सरकारी उचित निकल रहा है और एक
 अर्द्ध-साप्ताहिक हितवाक निकल रहा है। इपर 'हितवाद'में बहुत कुछ
 उरझरी की है, किन्तु उसका प्रथम जनताकी जातिमसे मरी राजनीतिको
 साहसके साथ प्रकट करना नहीं है। इन दो पत्रोंकी छोड़कर प्रायः उस
 सूबे मरमें हिन्दी और मराठी भाषाके पत्र प्रकाशित हो रही हैं। मराठी
 भाषो पत्रोंमें नागपुरके महाराष्ट्रका दर्जा ऊँचा है, मरी सम्मतिमें हृदय
 की उन्नततामें उसका स्वर मराठी केसरीसे भी कभी-कभी ऊँचा रहता है।

महाशयों हिन्दी पत्रोंमें कुछ समय पहले उस प्रान्तमें प्रभा 'भी
 धारवा और 'हितकारिणी' प्रकाशित हो रही थी किन्तु इस समय केवल
 'हितकारिणी ही किसी प्रकार चल रही है। सागरके समालोचक को
 हिन्दीके सम्मान्य और पुरान मुकवि एवं सुखेच्छक सैयद अमीर अली मीरके
 आजीवार्थ और सहायताका सोभाग्य प्राप्त हुआ है। मीं मेरे दैद्यमक
 उद्यम अत्युक्त मनी जिस साहसके साथ हिन्दी-मुसलमन समस्याओंपर अपने
 विचार समालोचक में प्रकट कर रही है हिन्दी-जगतमें मुसलमान हिन्दी
 पत्रकारोंमें धामर से अकेले ही होने। ये जातिगत पक्षपातको राष्ट्रीयतापर
 कभी इन्कार नहीं करन देते। नागपुरके उत्साही और दैद्यमक धीमुत
 सतावासी मीरजाकी सेवासोके स्वरूप हिन्दी अर्द्ध-साप्ताहिक 'प्रबन्धन न
 हिन्दी-जगत्की अच्छी सेवा की है। यद्यपि प्रबन्धनके मुख-पृष्ठपर बयोबुद्ध
 भी राधामोहन बाबुलजीका नाम जा, और ब कभी-कभी उस पत्रमें लिखते
 भी थे किन्तु उस पत्रको यद्यपि इससे अलगनेवा मय धीमुत पत्रमोपास-
 की विचारधारा और धीमुत सिद्धांत मापन मापकरको ही है। और

वर माई विजय विहारी 'पत्रिक' का बंधनित चल गये तब श्रीमान् सेंट
 बमनाकाजीके आशय-प्राप्त बर्षिक 'राजस्थान कर्मवी का मीयुत सत्यदर
 भी विद्यालयकार बकात रहे । सत्यदरजीन नामपुरक हिन्दी साप्ताहिक
 'मारवाडी और अकाशक मये हिन्दी मासिक 'राजस्थान-द्वारा भी
 हिन्दीको सेवा की । यद्यपि मैं उन पत्रिक सञ्चालका कृतज्ञ हूँ बिनकी
 सहायताम उम प्रथममें माहिरव-सेवा होती रही किन्तु मैं अपना यह
 कटु अनुभव निहायत अरुचते प्रकट करना चाहता हूँ कि पत्रिक नित्रोंके
 सामयिक सामयिक पत्रोंका जीवन सर्वैव वाताकी लहरपर निर्भर रहा
 और भी धारवा 'राजस्थान कसरा', राजस्थान और 'मारवाडी'के
 रूपमें बनिर्कोकी बहु लहर आयी और बनी गयी । मध्य भारतक पत्रोंमें
 महात्मा गान्धीके हिन्दी 'नवजावन'के सद्बुद्ध सम्पादक वं० हरिभाऊजी
 जगन्नाथन हमार बंधनोंमें कौशलपर, 'मामवमपुर में अपनी सक्तिप्रा
 क्यायी । उसका सम्पादन बहुत अच्छा होता रहा है । अभी कुछ दिनोंत
 पीपुठ गोपीबन्धनजी जगन्नाथनके सम्पादनकस्वम मानव विद्यापीठकी
 मुन-शिका 'विद्या बड़े सुन्दर बंगसे प्रकाशित हो रहा है और यदि
 पत्रिक लहरन सम्पादनका मज्जाक न समझा ता बिरवान करना चाहिए
 कि यह पत्रिका हिन्दीमें अपना स्थान हूँकलका यम्न करयी । मैं तो हिन्दी
 केवरीके रूपमें मध्य प्रदेशत सबस पहले राष्ट्रीयताका यम्नार गजना की
 को । और राष्ट्रीय-सभाका सन् १९२०का निगम अगहा मत्याग्रह और
 मध्य प्रान्तीय सरकारपर प्रजापदक कार्योका जहर, यह बात स्पष्ट रूपसे
 प्रकट कर रहे हैं कि उस प्रान्तमें पुरानी जगतिष्क, हिन्दीके सामयिक
 पत्रोंमें दिग्दा रखा है ।

मध्यप्रदेशमें पत्रकारक नात्रे बिनकी सक्तिप्रा कोविमान रही है उनमें
 बमाबुद्ध पण्डित रघुवरप्रसादजी द्विवहो ठाकुर छेरीकाकवा ठाकुर सरमन
 त्रिद वंशज नर्मदाप्रसाद निध और वं० शारकाप्रसाद निधके नाम
 उल्लेखनीय हैं । धोरदापर समाचार-रत्नमें वं० वंगाप्रसादजी अग्निहारी

की धूम है और व्याकरण तथा सितामें समाचार-पत्रोंके लेखक केवल पण्डित कामताप्रसाद मुहूर्त हैं। छेप समाचार-पत्र-लेखकोंमें श्री पण्डित पोषास कामोदर तामस्कर श्रीमृत मीरिप्रसाद धावास्तव और श्रीमृत कुसुदीप तहायका नाम लिमा जा सक्ता है।

बिजोर-साहित्यका प्राण है। यह बिद्या हिन्दीमें नवी है, अत इसे साधना भी अम-साध्य होता है। इस विषयमें 'मत्तवाका का नाम सुखभी इच्छि प्रथम सिवा जा सक्ता है। यद्यपि उसकी रुचिसे लोग अधिकतर घहमत् नहीं हो पाते। प्रकट साम्प्रदायिक पत्रोंम श्री ईश्वरीप्रसादजीके सम्पादनमें 'हिन्दु पत्र' अच्छी सफलता प्राप्त कर रहा है। पत्रोंको छोडने वाली सुझा सदैव श्री नरदबजी शास्त्रीके 'धंकर'में दिखनेको मिलती है। 'सेवा' नाम्बाराँका मुखर मासिक है। उसका सम्पादन अभी कुछ दिनों तक बड़े अच्छे ढंभसे होता रहा। मेरा विशेष कश जाता है, वं० हृदीरस धर्मा-द्वारा सम्पादित मन्नास प्रान्तके उस हिन्दी प्रचारक मासिककी ओर, जिसकी सेवाएँ, भारतके हृदय मिळाने तथा हिन्दी भाषाको उद्गमणी बनानेके लिए है।

सपन्नो भारतीय भाषा-समुद्रम इन प्रचारकोंकी मुभाएँ ईश्वरीके मन्नाहोसे कम क्रीमत्की नहीं गिनी जा सकती। धार्मिक पत्रोंमें समन्वय का हम उनीमत् है किन्तु मन्नास प्रान्तके श्रीमृत रामचन्द्रजी धुवनके सम्पादनत्वमें 'धुम प्रवेद्य' को सेवा कर रहा है वह कम मूखकी नहीं। श्री रिजिन्ना-नोमिटिबक ढंभने काम करनेवासे पत्राकी उपबोगिताम भारत धम साप्ताहिक और 'भारत मित्र' ईदिनका उत्क्रेम होना जरूरी है। विद्याकोके विषयमें मैं श्रीरिब अध्यापकोंके मुखपत्र अध्यापक की सेवाओंकी क्त्र करता हूँ। मित्र-विम विषयाके पत्रोंमें प्रवागके मासिक 'विज्ञान की सेवाएँ' मुखपत्रान् है। ईदकमें कई उपयोगी पत्र प्रकाशित हो रहे हैं जिनमें श्री किपोरोदतथी शास्त्रीका 'बिक्रमक' और 'अन्तरि उत्क्रेम' नीय है। प्राक्सेर अनुरसेनजी शास्त्री 'उन्नीवन' लेकर आगे बड़े थे

किन्तु उस अच्छे पत्रके पेर न बने । बीचके पत्रोंका उल्लेख करते हुए यह कहना पड़ेगा कि आगसे तेरह-बौरह बप पूब पं० जगन्नाथप्रसादजी बुकके समापतित्वमें सुषानिधि श्रेष्ठताके साथ निकल रहा था बीच पत्रकी हिन्दीमें बड़ी आश्चर्यकता है । हिन्दी पत्राकी रुचि अब बिसेपाकोंके रूपमें आगे बढ़ रही है । 'बाद और मनोरमा' जैसे मासिकोंके तो वर्षमें अनक बिसेपाक निकल जात है । बिद्वान इन्ता है कि यदि हिन्दी बनताने सख दिया तो इन पत्रोंके बिसेपाकोंका स्वल्प ही इनका स्थायी स्वल्प होया । तो भी यह कहना पड़ेगा कि बटक-मटके सिवा उष-रुचि मौखिकता कला और सम्पादकीय कौशलके दसन हमें अभी अपन पत्रोंमें बहुत कम ही पाते हैं ।

इसके मत बारह-तेरह वर्षोंसे समाचार-पत्रोंमें कविताएँ देनेकी बाध बल पड़ी है, और यह बुकके साथ देखा जाता है कि राष्ट्र मन्त्रिके नामपर छून फौसी और कालापानीका जो नाम लिया जाता है, वे कविताएँ पढ़ें हिन्दी भाषियोंको छून, फौसी और कालापानीकी मूरठ न देखने दें किन्तु काव्यका बकर छून कर रही है । तैबस्वी भावोंके बिबनेसे मतकर बमलकरहीन और बिना कसरक पहुँचका गद्य सिखना नहीं है । कविता न तो रसोंका देण निकाला करे, न भावों और बल्पनाओं हो का । उसमें राष्ट्रकी बमनियोंको छूनबानी ज्योति प्रेमकी उग्मादकारिणी सहर और बरिषकी तपीपुष आत्मा होना चाहिए, कविताओंको सवा बिन्वा रहना चाहिए किन्तु वे समाचारसे पहले ही मर जाती हैं और प्रायः बबिकठर प्रायज्ञीय होकर ही समाचार-पत्रोंमें आती हैं । प्रोस्थाइनका प्रारम्भिक बुब निकल गया अब तो प्रत्यक्ष सेवाकी तपस्याका युग है, होना चाहिए और उन्नेस ही बिन्तु यह अमर स्फूर्तिदायी और काव्यमय होना चाहिए, छायावाद हो परन्तु बल्पेताकी बोटमें बे-समझीकी उद्दण्डता न हो नियमोंकी ठोड़-ठोड़ बाकिए, पमाना आपक लिए बलय नियम बनायेया छूब निर्दुष हो पाएए, किन्तु बापी और अपकी ता बल्ला

रहने दीजिए, सब विद्यावाचकें बचन टूट जाने दीजिए, किन्तु काश्मीरी प्रबन्ध काश्मीर-बारासे जानेकी आशा ही न डार तोड़कर न रख दीजिए। यह उनके लिए है। आ मुकवि नये युगके सम्बन्ध-बाहक है जो नहीं सिक्ते वो बेचन मनीनताकी सृष्टि करनेबासे ठरनोंकी आलोचना करते हैं या उनका सैबाओंको अपेक्षाकी दृष्टिमें देखते हैं। सामयिक पत्रके नाते उनसे क्या कहा जाय ? उनसे यही निवेदन है कि अपन मुपकी समान्तिके साथ आप आजीवनि दीजिए। चाहे वह आपको कड़वी आलोचनाओंके रूपमें हो। तरफ अपने जमानेका निर्माह अवश्य करेंगे। क्या निर्माणमें प्रसन्नियों का कोई स्थान नहीं ?

सञ्चना मार्ग बनारसीबासनी आदि सञ्चन कही मुझे अपराधी न कह, किन्तु कितना-सा हमारा 'बनकरिम है ? कहीं है। हमारे पास वह जो हमारी जन-संघपाके बीचसे अपन बलपर बिच कँपा दे हमारे बैनिक है पर उनके पास न रिपोटर हैं। न हमारे कार्यालयमें साहित्य है, न हमारा कमरा बिचके जानेवाल बिद्युत्-सम्बन्धी बामु-सम्बन्धी और मन्त्र सम्बन्धीका आगार ही है। हम भैसे ही सिटीमें रहते हैं परन्तु हमें सिटी-एडिटरको उकरत नहीं। मैनेजिंग-एडिटर भी कबल नाम सेनै भरकी चीज है, हमारा वह बिस्तार कहीं जिसमें मैने-डेन-सम्पादक, स्यापार सम्पादक समुह-सम्पादक शिक्षण और शाळा-सम्पादक साहित्य-सम्पादक नाटक और संदीठ-सम्पादक और आलोचक हों ? मे जापसे पूछता हूँ हिन्दीमें हमारे इतने शक्तिशाली होनेका दिन कब ऊमेना ? देखमें अंगरेजीका ज्ञान उकरती नहीं किन्तु पत्र-सम्पादनमें हम अंगरेजीकी और दुसरत नहीं कर सकतें।

वह सम्पादन-बलाकी मीनकी भाषा है कसाके संभलनबा ज्ञान और बिस्तारकी सूचना अंगरेजी ही दे सक्ती। कार्याक्राममें उभके जाननेवालानो बड़ी राधि रहनी चाहिए, अमेरिका छगाई स्यापारमें उठनी नम्बर रखता है, भारतमें हम अभी बोलें ही बाड़ रई है। हमारी

शेयबुध बय-माझामें हमने छापेके उपयुक्त सुधार नहीं किये । अंगरेजी पत्र कड़ा है 'ज्ञानमें मेरी समता कर ? क्या हम इस चुनौतीका जबाब न देंगे ? क्या हम अपने पाठकोंको यह कहन देंगे — माई मै इन बातोंको क्या जानूँ ? मैंने अंगरेजी नहीं पढ़ी बिज्ञापनोंके अस्तित्वके विषयमें पत्रमें बहसका खिन्नबाहू न हा । उपदेश उदाहरणके सतान्म मूह्यपर भी नहीं ठहरता ही नीतिका खयाल रखिए, अक्षमोंकी उम्भतापर ध्यान रखिए । विश्वास भीत्रिए अंगरेजीके धाराके बिज्ञापनोंसे हिन्दी पत्र आज भी बचते हैं केवल दवाओं आदिक बिज्ञापन मात्र हटाना एक न निम्नवाची प्रतिज्ञा है ।

सम्झतो चीनके बापलों और एशियाकी आबरमकठामा और हिम्मे कारियोंकी देखिए इस हलचलमें हिन्दीके पत्रका कौम-सा स्थान होया ? क्या अंगरेजी पत्रोंकी गड़क करना धारा-समाजों अठेम्बली स्टेट कौंसिल नरेन्द्र-मण्डल स्वदेशी और विदेशी हलचलें कहीं भी हमारे आरभी नहीं । कबतक ? कठोर घटना-स्थलों, सड़ाईके मीदानों और राजकर्त्ताओंके पुत्र पदयन्त्रोंके बीच हमारे तदन किस दिन प्रवेश करेंगे ? किस दिन हमारा कोई तदन बार कपड़ों बहुत बोझा बकरतकी वस्तुओं और केवल एक निपाहीकी तरह बोझा-सा लच केकर, सड़ाईके समाचारोंकी अशिम-मरी हिम्मेबारी अपन सिरपर सेकर किसी हिन्दी पत्रके कार्यालय से बिना होया ? किस दिन हमारे पत्रकार राजघासनकी एसा मुझा बाजेंगे कि वेघकी लाकठ देशवासियोंके ह्याममें होयी और हमारे पत्र बार युद्धक्षेत्रोंमें जाकर टेसीकोन तार और बतारक तारका उपयोग कर, मारतमें सम्येध भेज सकेंगे ? क्या ये सब गुनामके स्वप्न हैं ? अब १२४ ए, १५१ ए और अन्य छोटी-मोटा बाराजोस ऊब गय किस दिन चाड़ेके सवारकी तरह तैयार चुस्त बालबतोंकी तरह पुत्रीके, और बघके बरीषोंकी तरह भूख-प्यास बर्दास करनमें पक्क होकर हमारे तदन विदेशोंमें लहरें माने जावेंगे और किस दिन जनकी मेजो हुई खबरोंके

बल्पर राजकमचाठी हमारे कार्यालयोंमें पृच्छताऊ करने और तज्जासिबा सगे ? बापाग अमेरिका इम्नैरकी कहानियाँ पढ लीं । किस दिन हिन्दी पत्र अपने पत्रके कार्यालयोंसे बेचके शासक मित्रबा सकेमे किस दिन कहा जायेगा कि अमुक रज-क्षेत्रका लड़ाका अमुकबाप समाका उभापति अमुक वैदेशिक मन्त्री हिन्दी उष-सम्पादक वा किस दिन हमारे तरब युवधर्मा लड़ाईके सप्यानीसे मुमेंसे अच्छा एडीटर साहज बिना इजाजत बाप अमुक सोमासे बाहर नहीं जा सकते । अपने संवाद साकेतिक मापामें नहीं भेज सकते और तबतक संवाद नहीं भेज सकते जबतक मैं देख न लूँ, मैं आपके संवाद और अखबारकी आक परवाह नहीं करता खबर बितना जरूरत समझूँवा जाने दूँगा बितना जरूरत समझूँवा राक सैमा । इसके बाव बहु छिद गरजकर कहेना तुम्हारे अखबारकी प्रति मेरे पास पहुँचनी चाहिए, मैं बेपूँगा संवाद भेजनेमें कोई आत्मकी ती नहीं की मयो आपके एडीटर-इन-चीफ़न ससके चीपक बेनेमें तो कोई आत्मकी नहीं की ।

हमारा अखबार-तरब पूछेगा 'और आज़ामनका वा सलठीका दण्ड ! और उत्तर पावैना । सलठीका दण्ड लाइसेन्सका छिन जाना और जरूरत होनेपर अनुपसके छिदियाक साथ रहना आज़ामके मयका दण्ड 'कोटमासक बहु गम्भीर परिस्थिति होमी जो हमारे तरबों-द्वारा अपने पत्रके प्रभावको बिरबनगीद बना सकेगी । यही हमारे तरबोंकी बुद्धिकी कसौटी होमी अब बहु धरत सापियोसे स्वबेचस बहुत दूर नठोर अनु धासनमें रहकर बार-बार कलाकी महान् सापनाको अग्य बना क्या यह कमी होया ? यह अबाव मैं बुझाके आर्थाबाँसे बापूठा हूँ मित्रीकी संयुक्त सक्रियसे बापूठा हूँ और तरबोंकी बलियानकी भावनासे बापूठा हूँ ।

मैं कई जकरी प्रश्नोंकी सर्वा न कर सका यह परिमित समयके साथ ही मेरी स्मृतिका मेरे ज्ञानका अपराध हूँ मुझे ठा न बोलना पड़ता यहाँ अच्छा वा बोलते हुए एक बात मनमें रह जाती है—

जाबरू ली, कृष्ण उद्योग मे
छापकी जान ली कुमावे न
या जामीसी बयान स मच्छी
बात लो दी कुर्बो हिसान मे ।

मिनील पत्रकार परिवार
मलेपुर
१९९०



साहित्यके चिन्तककी लाचारी

साहित्यका चिन्तक तो प्रायः प्रतिमा और प्रार्थनाका सम्मिश्रित नाम है। केवल कदनाकी भावना प्राणोंका निर्माण नहीं कर पाती केवल प्राणोंका अस्तित्व पुरुषाचर्या सम्म-सा करने समता है और केवल मूर्तोंका कीसल पुरुषाचर्याके शक्त और 'मानक नभूँ हूँ' रहीके सीलने बिना कुछ नया करनेका वह पुराना कालक है जो मानव ज्ञानके भारिसे उसके हाथ पड़ गया है और सुबल साम्नीयके सभावमें कर्तनालीलके विभापसे बापामी लिखीनों-वैसी मयी भीजें पैदा करने समता है। इसीलिए चिन्तक समय स्वरूप और सुगन्धिकी विचारा केन्द्र ही अपनी बात करने निकल पाता है। परिस्थिति स्फूर्ति और संकल्प जब तीनों एक दूसरेसे बिगड़ उठते हैं तब उनकी रगड़से नये विचार पैदा होने लगते हैं। उस समय विचार मानो लाचार हो उठते हैं 'कोई उन्हें बाधा बान कर लकड़ा'। उस समयके विचार भी विकारकी तरह इनमें प्राप्त और बेबस हो उठते हैं कि बाणीपर उतरनेके लिए ज्ञानकी गठरी नहीं डूँड़ते केवल विमर्शोंको ही गरी टटोलते वे ऐसे अस्तुहोंकी कलमों और भाषाओंपर उतरते हैं जो परिस्थितियोंके बेव और उनके नियमचक्र सभेवको सँभास सें।

दुनिया तो अपनी समस्त अकृताइयोंके माघ एक सूजा हुआ अंगल है उपयोगिताके अह्मानोंसे बका हुआ। सुते अंगलमें कभी-कभी एक इरी बेर एक तरफ बासिपर दूसरी तरफ बपूसपर तीसरी तरफ टेयूरर और विमर्श-मघ कुशोर चढ़ती है। अनक कुश हरे दोलन लगते हैं। विमर्श स्वभावके कुशोंमें ए-स पसे लगे देलकर अंगलमें अचर्या होगा है किन्तु सुते हुए मानवके बीरान अंगलमें रबीको प्रतिमा कर्त है। विमर्श

स्वभावके लीनोंपर प्रतिभा एक अग्रिम उतरती है और अननुमाना-सा अन-
 नुमानात्मक लेकर जीवनको इतना दुरा कर देती है मानो सारे रसको अनुकूल
 और प्रतिकूल स्वभावके लीनोंमें खेराठ बाँट वो पयो हो ।

भावनाके विस्तारहीन जब रस-मननमें लगे होते हैं तब योजनाके
 परमधीन भी अपनी ब्रह्मभारो छोड़ी करते हैं । वे सोचते हैं कि
 साहित्यके निर्माणमें भावनाही आवश्यकता नहीं है याचना ही से सब-कुछ
 हो जायगा । भावनाके प्रतिकूल याचनाचा यह संकट विस्तारकी सबसे
 बड़ी कठिनाई है । योजनामें विचार नहीं आते याचनामें सुझें नहीं उतरतीं
 यह बात नहीं है । किन्तु योजना ही में सुझें उतरती हैं यह बात भी
 नहीं । भावनावादीने कहा 'द्रीपदी पाँच पाण्डवोंकी पत्नी थी । उसने
 द्रुपदमारतको उस कठिनाईको हृत्पत्नी खीलोंसे देखा । योजनावादी वाला
 तब तो गांधार देवको ही ही नहीं सब्ती । बकर विभवतसे धायी होंगी ।
 क्योंकि मात्र भी विभवतमें एक स्त्रीके अनेक पति होते हैं ।

साहित्यिक इतिहाससे प्रेरणा लेता है किन्तु इतिहास सिकता नहीं ।
 इतिहास बहु विस्तारहीन सिकता है जो लच्छइरॉकि परबर्षोंको पढ़ना है,
 मीथपत्रोंने जानाकुसी करता है, समयके एक चिह्नसे घुमर चिह्नकी दूरी
 देवता है और मानव कोशल और मानवज्ञानका समुचित साधनस्य
 स्थापित कर पाता है । कलाका चिन्तक सीतापर भी सिकता है और राम
 पर भी कैकयीपर भी और भरतपर भी । यह किस वस्तुपर नहीं निर
 सक्ता ? यदि पुण्यपर सिसे गम किसी काश्य-ग्रन्थका नाम सुनकर किसी
 बपीकेका मानी किसी कबिकी पुस्तक खरोद से ठी मानी धान्त हो तो
 मण्ठाकर रह जाये और अरागत हो ता कबिपर चार से बोमका दावा
 दापर कर दे कि उसने अपनी पुस्तकमें न फूर्फकी आनिपी सिक्ती न ब
 कैनी खनीनमें समठी है यह सिक्ता । न भिद्य-भिद्य फूर्फके मीमम बछाये
 न उनका साद बताया । अठ माला बेचारा दा रुपय दस जागसे ठगा
 गया ।

कलाका चिन्तक समाजसे इतिहाससे प्रायः छीन चीजें लिया करता है - कथानकोसे प्रस्था नामोसे प्रतीक और अपनी परिस्थितियोसे परिनाम । मठ जब कलाका चिन्तक कुछ छिसे तब इतिहासके गौरव धानका मस उसे भले ही धीजिए किन्तु यह स्पष्ट मानकर बखिए कि कलाका चिन्तक इतिहास नहीं छिन्ता करता ।

कलाकार चिन्तक जब कुछ लिखता है तब उसे यह डर लगने लगता है कि मानो कलाकी रचना करके उसने कोई अपराध किया है और उसे सोनोके सामने मही रखना चाहिए । चिन्तककी यह कठिनाई क्यों है आप जानते हैं ? यही वह धनहू है जहाँ सृष्टिके समस्त निर्माता यकसाँ हुमा करते हैं । धनत् भले ही नामकरण संस्कार करे और परिवार बरसब मनावे किन्तु माता सर्दी-नरमीसे ही नहीं नजर और छूतसे भी अपनी रचना सृज्या करती है । भारत-विज्ञापनके इस प्रतिमाहीन युगमें आत्मसंकीर्तनके दानव कलाके चिन्तकके इस संकोचको इस खोलनो अयोग्यताका नाम दिया करते हैं मानो योग्यता और बेधर्मी एक ही छिबकेकी दो बाजएँ हैं । जिस तरह बृज सुय किरलोसे रब और बामुसे प्राप्त लेकर भी जमीनसे रस खींचा करत है उसी तरह चिन्तक आत्मघ्न व्याप्त प्रकाश देकर भी जमीनकी बासीमें खोला करता है । मानो पुष्प और फल उसके काम्य हैं और जमीनका रस उसकी मापा-टीका । जिस तरह ईमामसीह अस्तबलमें पैदा हुए और कुप्प बारागारमें उसी प्रकार चिन्तककी रचनाके लिए मन्दन जानत हुँदनेकी बकरत नहीं हुमा करती । किन्तु सोच तो है उगुँ पहाडका चित्र बडा प्यारा लगता है । किन्तु प्रत्यय पहाडकी चट्टानाको देखकर सबसे अरबि और बिरक्ति हुए जिना नहीं रहता । उपालोचन यह जनामापन हमारी चहुराती पीडियोमें बड़े बेमने जा गया है । कभी संस्कृति न मी इतिहास और कभी रसक नामपर कोमलताके ज्ञायस होते हुए हम मानो प्रत्ययकी प्रसरताका नामना ही नहीं करना चाहते । तब तो किती चिन्तकको मही बाउ बहनी पड़ती है

कि 'मनुष्यके हाथ पड़ी इसलिए जगहोंमें अपने पैरुम्बरों और बचतारोंकी मूल मनुष्यकी बना ली । यदि मनुष्यकी तरह गधेका विकास हुआ होता तो उसमें अतन् आराम्यके रूपमें सुन्दर पंजा ही साधा होता । प्रकृता और कोमलता चिन्तककी रचनाके दो सिरे हैं और चिन्तकका आकलन उन बातों सिद्धको मिलाकर मुख्य गीठ बीबता है । जब बुझोंपर बीमारों-पर और भाषोंपर सस्त्रक्रिया करके ही उनके रमों और व्यस्तियोंको बीरश्रम दिया जा सकता है । तब चिन्तकको आलोचनासे लभ वरों न होमा । किन्तु यदि किसी मात्राके बरबादेपर प्रसन्नके दिन ही बन्नाह बैठा दिया जाये, तो कैसा हो । अब स्वस्य सकुशल रचना विरामे सुमने ल्ये तमा आलोचना क्षोभती है । चिन्तक इन्के निर्माणमें ल्ये हुए अष्टा पर क्रिय जानेवाके आक्रमण सपायी जानेवाली बहु भाग हैं जिससे बातकी बातमें लक्ष्महाते हुए फरार पीचे नह किये जा सकते हैं । अतः चिन्तक साहित्यकी सुझों उसके सुकल्यों और उसको मुख्य-निर्माणकारिणो प्रवृत्तियोंकी कठिनाइयोंकी समाजमें यदि हम सोच लिया करें तो मौलिक चिन्तकोंका भाग हमार बाध अनिष्टान न होकर बरदान बन सकता है ।

आकाशवादी, नाट्युर



समयके सिरपर दौरा वन्दन अमिनन्दन

आपन मुझे अपनी साहित्य-संस्था गूह्य संकेत मर्ने बापिओसबका अभ्यस्त पुनकर जो कृपा बिलायी है उनके लिए मैं आपकी धन्यवाद देता हूँ। मेरी सबसे बड़ी चिन्तायत आपको संस्थासे यह है कि किसी नाहित्यिक संस्थाम काबुली तकामेबाले नहीं रहना चाहिए। आपकी संस्थाके प्रमाण मन्त्री श्रीमन्त मोतोइशरजोमे मुझे इतना ठम किया कि मुझे मुखप्रकाशपुर जाना पड़ा और नायक श्री लिच्छा पडा और यह दो छते एक ही आप मनबायी थी। आपकी संस्थामें बातबीत करनेके समय साहित्यपर मैं क्या कहूँ समझमें नहीं आता तो भी कहना तो कुछ होमा हो।

आपमें कभी सोचा है कि हिन्दीके प्रयोगके एक हज्जारी अधिकाके संस्करण क्यों नहीं हो पाते। तब यह है कि जो कुछ हम लिखते हैं उनके लिखनेके ही हये इतना सम्योय हो जाता है कि इय इस बातको देखते ही नहीं कि जिनके लिए हमने उनको लिखा था उनके पास वह पहुँचाना नहीं। जिन्हें केवल आवाजके भाव लिखाने हैं वे भूमिवा भार ही क्यों बहाये हुए हैं। वे तो मानो भूमिपर रहकर भी स्वर्गवासी हैं और उन्हें साहित्यकी गतिसे नहीं अपनी कृतिमे ही सम्योय हो जाता है। लोक बीबनकी समझमें न आ सकनेवाली भाषामें जानैवाला सम्योय सम्योय है या रहना। यदि सम्योय ही उद्देश्य है तो पुष्पारामाजीकी बिर मीनमें भी सम्योय प्राप्त हो सकता है।

पुस्तक हा गता है। राजनीतिसे अनेक अण्डरबोकी सैकर मया जब बनानेकी बात सोच रहा है। पुराना जग टूट न चाये इनलिए नये बनवा मूला प्रलोभन देकर वह विररको बहकाना चाहता है। हर लड़ाके बाद

क्या आप बतानेवाले अपने मुनीर्मी-द्वारा अपनी राष्ट्रकपी युक्तकी छात्र
 समुदाय पर जामे रखनेका प्रयत्न करते रहे हैं। इस मशौन व्यवस्थाकी
 बीमाटीके काड़ेकी तरह विचार फैलानेवालोंके प्रधान एजेण्ट हुआ करते
 हैं हम साहित्यिक। राजनीतिको प्रभावसे पराजित हम अपने रोटी
 खाताओंके सामके पाठोंको पुस्तक बनाकर बेचनेका रोडपार करने लगते
 हैं। पृथ्वीक घूमते हुए घोड़े और लटकते हुए मकड़ोंपर अपनी स्वयंकी
 वृष्टि म रखाकर यदि साहित्यिक राजनीतिके ही हाथमें खेसे तो बिस्वकी
 विचारदान देनवाले साहित्यकी अनादयताको हमें पुरबीन केकर
 सोचना पड़ेगा।

साहित्यमें कभी निरुद्धसे और कभी दुरसे दो अरिनीयों सुनाई पड़ती
 है। एक स्वर है मैं कभी न बदलूँगा मैं परिवर्तन पसन्द नहीं करता
 दूसरी आवाज है, 'मैं कामिबासको रमचोमठाका सबतार हूँ मैं अम-अण
 बदलूँगा। अण-अण बदलनेवाली पुनियाका सेजा-बीजा रखकर मानव
 सम्प्रदाय विद्वदमें पत्रकार कलाको आम दिया। समयसे बँधी हुई सूचनाओं
 अरिनीयों घटनाओं और समयसे न लपि जानेवाले सत्यकी तरह हमने
 विद्वदकी घटनाओं, वस्तुओं अरिनीयों संस्थाओं समाजों और संसारके
 गुण और प्रकट मेंकों मनीविज्ञानसे ठीलकर तथा सन्निकट स्वार्थ और
 सुदूर अनादयताकी राजनीतिक धारणाओंसे छानकर और मानव विकासके
 सत्य-विचननका स्वरूप सममें भरकर विद्वदको साहित्यके रूपमें प्रदान
 किया। चित्तु चाहे हम दाग-दाग बदलनेवाला साहित्य किसे या शीघ्र
 न बदलनेवाला हमें विद्वदके और मानव-स्वभावके स्थायी सत्यकी आँखसे
 मोझल नहीं करना होगा।

मयाय और आशयकी हमन कई दुराग्रह सम्प्रदाय और मुक्तताकी
 सोमा तक माम सेने और स्वाय सेनेकी तरह दूर रखा और साहित्यकी
 हर पट्टीका हम आदनोंके हवाले करते पये। परिणामत सत्यकी अनेका-
 का अण्य हमपर बहुत बढ़ गया। अब उबक-पुबल होते हुए अण्यमें

सत्यने ऐसी समस्याएँ हमारे सामने आगुन कर हो हैं कि हमें अपने आदर्शों-से यह कहना आवश्यक हो गया है कि वे आकाशके मसबोंकी तरह हमसे बहुत दूरीपर पड़े होनेके बजाय हमारी गिर्यकी समस्याओंसे न पबड़ाये न मूँह मोड़ें ।

सत्य हमसे कहता है, 'एक छोटीब है जो चूता जाता है एक बमीर है जो चूम रहा है । किन्तु सत्य 'यह ही नहीं कहता यह भी' कहता है । यह प्रेमके नामपर मस्तिष्कोंको भिन्नकानबामी दुर्गाभत उन्मुक्तता जो हम के रहे हैं वह किस छोटीब और बमीरका सगड़ा है ? वह स्वर्गमें विवेक और ज्ञानके बीनों लज बरद कर, सड़कपर लड़े कुत्तेकी तरह हमने अपनी इन्निमासे जो आर्टकपुरित और विकारमम कोकाहल उपस्थित कर लिया है और मास्तिष्कके क्षेत्रमें गालियों और विकारोंके कुम्भीपाक निर्वास कर जो स्तुत्य पत्र इमान प्रहस कर रखा है वह किस छोटीबो और बमीरी का भेद है ? इस क्षेत्रमें तो हम छोटीब छोटीब भी लड़ते हैं, छोटीब बमीर भी लड़ते हैं और बमीर बमीर भी लड़ते हैं ।

बया कारण है कि मूर मीरा तुलसी कबीर—इन सभोंके गीत देशके माँबी लज पहुँच गये और कीटि मानव उन्हें नाकर मस्तक दुलाने लये किन्तु हमारे आजके साहित्यिकके लड़े होन तक पड़ोसकी तहमील तकके आदमी नहीं जानते कि 'यह भी कोई गायक है यह भी कोई कवि है । सत्य तो यह है कि विश्वके साहित्य विश्वके तीर्थ-स्वतल और विश्वके ऐतिहासिक स्वाभौर मानव पारजाओंकी तह बमी हुई है । और यह पारजाएँ अपना बहुत-सा अंस धामिक उदाहरणों व्यवस्थाओं उपदेशों और निर्णयोंस प्रहस करती आयी हैं । जित तरह योरोपके साहित्यसे ईसाई पारजाएँ हटाना बटिन है वही मास्तिष्कवादके रूपमें भी जिन सोवैनि बर्चाएँ वीं उनम-से किठनी ही बर्चाओं और रचनाओंमें ऐसी योजनाओं ऐसे बामों ऐसी परम्पराओं ऐसे व्यवहारोंकी शुभ बटाया है जिन्हें आस्तिष्क ईसाई समाज न भी मूम बटाया वा । उसी तरह पूर्ण एघियाके देशोंके

साहित्यमें-से कुछ बारणाएँ दूर नहीं की जा सकतीं और पश्चिम एशियामें श्रुतानुनिवासे करतीं और उसके आगे उसके साहित्यमें-से मुस्लिम बारणाओंको छोड़कर नहीं फेंका जा सकता । पश्चिमके केवल इसीलिए जब विश्व सत्य और विश्व बमोंकी भासोचना करते हैं तब वे यह कार्य समस्त बमोंकी बारणाओंसे ऊँचे उठकर नहीं करते । वे अपने बमकी धारणासे अपनी बुद्धिका माप बनात हैं और उसी मापसे सब बमोंको मापकर अच्छाई या बुराईका निष्पत्ति देते हैं । इसी प्रकार अन्य बमकी धारणायाका प्रभाव होता है । यदि हमारे साहित्यमें भी हमारी सांस्कृतिक धारणाएँ स्पष्ट नहीं हैं तो वे बारीक खयालों कारण थोड़ी देर सिर भस्मे ही बुझना लें किन्तु वे मानव-मनपर अधिक बिनो तक नहीं ठहर सकतीं । हम नया नया जमाना बनाते समय धारणाओंमें भारी परिवर्तन क्रिय बिना केवल बारीक खयालोंके बलपर केवल उत्तेजन-मरे कभी ठोसकी और कभी बेतोलकी उमाड़ोंके बलपर, साहित्यमें अनर्थ नहीं कर सकते और धारणाएँ बनानेमें तो हमें पवित्रताके बल बनकर अपनी ही हृदयोंकी गौर पर नये युगकी दुनिया बसाना पड़ेगी । ब्रिटिश शासन हमारे देशमें आकर पहले मुझ-मुबिबा और शासनकी उच्छताकी धारणाएँ बनायीं और अपने कोटि-कोटि प्रचारों और कामोंसे उन धारणाओंकी बेसक कान-कोनमें पहुँचा दिया । आज स्वतन्त्रताके विचार फैलानेवालेको उर्हीं धारणाओंसे रुकना होता है । जो लोग देशमें नया युग लाना चाहते हैं उनमें-से किन्तुक उठें और विश्वकी गति-विचित्रा अर्थशास्त्र कथनबाकी नयो धारणाओंको बम दें तभी नयो विचारसेभी देशको जनताके द्वारा अपनायो जा सकती है ।

साहित्यका भविष्य उठीके हाथमें होता है जिसके हाथमें देशका भविष्य होता है । देशकी स्थितिमें समाजकी मनीमाबता-शास्र बेचनियों और आदर्यवताओंका जो स्वभाव-रूपन होगा हमारे पवित्र साहित्यमें उसीका प्रतिबिम्ब दिखाई देना । कभी नयी बात आयेंगी कभी पुरानी बात

मया अथ लेकर आवेगी । कभी सत्यको सूझ भाषाके प्रकटीकरणका तथा पत्र लेकर भाषा करेगी और कभी उसी सूझका बीज रखेगी तरंग-मालामोपर हमारे सामने भाषणा । यदि समाजकी ज्वल-पुनरुत्थान न कर सकनवाली ध्वनि हमारी बाणीमें आवे तो हम यह जाने रहें कि उसकी उन्नति अधिक नहीं है । इसीलिए हम समाजके कोलाहलसे घबरा-जम्न रहकर सोचने और लिखनेका समय भले माँगें किन्तु हम समाज-से दूर भागकर एकान्तका मरण को करनेका नाटक न करें ।

कुछ लोग कहते हैं कि साहित्यको अपने-आप चलने दिया जाये । साहित्यमें नृत्य भी रहे यह माना जा सकता है, किन्तु यह कैसे मानें कि नृत्य ही रहे । नृत्य कला ही है किन्तु पति नहीं यह सम्भव नहीं कि पति-धीन समाज कबल नृत्य करनेके लिए छाड़ दिया जाये यानी उसे उद्देश्य रहित अलग-आप चलने दिया जाये । साहित्यको तो प्रकाश-द्वन्द्व बनकर गतिमान करना ही होया ।

कभी-कभी बुद्धिके मनायासबको हम बनको बनिकतासे भरीर बनानेको बात सोचते हैं । हम यह भ्रम खाते हैं कि हमने बन ही के खिलाफ यह धिकापत की थी कि उसने बुद्धिको अपने यहाँ 'रहना रखकर उसे ज्ञानिधोक्त नहीं बनने दिया ।

परा कविताको लाविए । कविताका पहला काम कविकी सतक होना नहीं है कविता होना है एक अच्छी कविता होना है । ईशिका डेर पत्थरीका समूह और हमारे आस-पास मीशानका कीचमकाच गीखा हो जाना हम सबका एकचित नाम भवन-निर्माण नहीं । भवन-निर्माण इतका नाम भी नहीं है कि ईट पत्थर और कोचरो मलमल इंसान टेड़ा-मेड़ा रखकर उसमें एक गुफा तिकास से जो पहुँची ही बर्षाकी पार न छू सके । हम स्वयं उस गुफामें रहे और चाटी पीड़ीको उसमें आतको आमन्त्रित करन सयें । हम अनेक सहस्राब्दिका मानव-विकासक अस्तित्व से इनकार नहीं कर सकते । हम अरारों अर्थों उपमाओं और मूर्तियोंको

मनमान इंसाने उल्ट-मुल्ट रखकर साहित्य-विराजकी अपनी कठोर पराजयों का और विचारवानक क्षेत्रमें प्रकट हानिबाधे अपन बीबाउल्लोरेपनका न घुटा सकते हैं। न उसे साक्षिरप ही कहलवा सकते हैं।

कविताको यदि हम उचित बयों उचित भावनाओं उचित स्वर पति उचित दिशास और उचित पुस्तपापमें नहीं बाँधते ता हम बोट हुए कवियोंकी मिश्रणक सम्मुख अपनी पराजय स्वाकार करते हैं और नय पुगली धारणाओंके निरपेक्ष स्वर-पत्रिक न होनेक कारण सन्त तुष्टापनके इस परके स्वरूप बनते हैं कि

मिने अपनी मौत अपनी आँखों देखी —

बचवा यह कि हमारा मरम संवत् १९९९ है, किन्तु बफनामे आज या दान किये जानेका संवत् २०२० या २०४० होमा। हम इतने बयों धारित मुतक रहेंगे।

पोड़ीमें हम छोमोंको यदि माँ ही नहीं बन पायी तो भूछी हुई पार की तरह हम कैस याद बायेंगे। दिवाइन बरकनेस सरय नहीं बलकता माता। किन्तु दिवाइन बरकनेसे 'लष्ट करम'सि नहीं।

हमारा काम्य हमारी रचना स्वयं ही हमारी आलाचना है। हम युवके आलोचकोंके क्यू हाथ जाकते हैं कि ब हमें जिन्दा रखें? बायोचक्रोंर युन किलनेका उत्तरदायित्व है, पर बे हमें मनमाना लिखनेक लिए खरोब हुए मुक्काम नहीं है।

हम तो महारुडी साहित्य लिखते हैं। बाँड़े-स रिमाठा ऐवासीको हूँकर, उनकी रसोंर मिनकती या सूधापर समकती इच्छामोंके बडीमून जब उनको छालिमाँ सुन भेते हैं हम निहाल हो जाते हैं। तब हममें बाँधी और सहरोमें एक साथ निवास करनेवाले भारतीय मानकके पाठ अपनी बायी पठुवानकी इच्छा भी बब जानून हा? और हो भी तो बरन-भारकी दिवे तय उज्जवल पालेसे बड़कर उसका मूल्य ही क्या है?

और हमारीसे मूजा करनेवाले हम बमोरीका अनुकरण स्वयं बा

करते हैं। जमीरीके भावोंके कविने अपना कला-विश्वास ऐसी मनोभूमि पर किया था जहाँसे कुछ थोड़े-से आरामी उसे समझ सें। विचारोंकी वनिकता और मनकी वनिकताके कुछ ऐयास-माचने उसे सरस मानवके पास नहीं जान दिया। और आज हम जो छिन्ने बने हैं, माना कि वह जमीरी और जमीरीका कोस-कोसकर निकलते हैं किन्तु लिखा वह ऐसी भाषामें है जो परीक और साधारणकी समझमें न आ सके। तब समझे न जानके बाजारमें हममें और जमीरीमें अन्तर कौन-सा रहा ? हमने सोचा था कि जमीरीके यौन-काव्यका घरीक तक न जाना ही अच्छा है। किन्तु यौन काव्य जिसमें हम तो नवाबाको माठ करने लये। और हमारा अन्ति-काव्य भी इतना कठिन है कि जिसे अन्ति करनी है उसोंके पास वह नहीं पहुँच पाता। हम तो आज भी बारीक-सयालीके दोस्तोंके मनबहुलाकका साजन बनकर ही अपनी मुम देवता'की उपाधि सार्थक कर लेनी पड़ती है।

साहित्यको यह भी पता है कि विश्वमें युद्ध हो रहा है ? और बुद्धन और आसिगनकी सँस और उठाँसोंमें हमें यह भी पार है कि जिस समय हम तरबो और धारणीमें कचलीन है उसी समय किसी भूमि-तण्डर मानव, बाक्यकी उबास-माझाझोंमें प्राण-दानके खेल खेल रहा है ? जब युयमें बाक्य व्यक्त है और रक्तका सरोवर झुरा रहा है, जब एक हुँकार और धुमरो भीत्कारपर युय-स्वर टहुरा हुआ है तब उस बाक्य उस सुन उस हुँकार उस भीत्कारसं खाली हुनारी नगरनियो बाबी-बरवा युय-बापी जैसे बन गयी ?

और यह भी क्या हमें पार है कि भारतके तीन तरफ समुद्र लहरा रहा है ? यदि भारतक अण्ड नरमुण्डोंके जानरनको आजका साहित्य कहे तो हमारी साहित्य सनक कमी भी साहित्य कहना सकेयी ? जब कि उसमें तरवाका पीरते जहाजों केईक तरनोंकी मरवीपर डोळी नीकाके यस्ताहके और समुद्रकी तरवाके परवान और पठनक स्वर

सुनाई नहीं देते ।

शामीस करोड़ हम समाज हैं कि समूह हैं ? हमें पता है कि हमारे पड़ोसी तिब्बतमें कौन-सी बोली बोली जाती है और नेपालमें कौन-सी चीनमें कौन-सी और बास-वासके छाटे-मोटे देशोंमें कौन-सी ? इन्हारों मीठकी अमरेशीके उच्चारण और सन्द-विन्यासमें हम कितने पट्टे हैं ? उस देशकी बोली हमें आती है जिस देशमें कैंकनेवा भारतीय मानवको अधिकार नहीं । और उन पड़ोसी दसोंकी सीमा असबापु बासी और वैभवस हम अपरिचित है जिनके साथ कदम बढ़ाकर चीनके स्वर मिला कर हम किसी दिन एशियाई साहित्यिक कृतमानका पत्र कर सकते हैं ।

बिहारसे पूर्वी एशियाका वैभव बहुत ही निकट है । यहाँसे बढ़ जाकर जरब समुद्रसे लेकर उत्तर जाग तक यदि हम साहित्यिक सपना देख सकें तो हम बहु साहित्य देयको दे सकते हैं जिसको उसे मुशोसर बनमें कल ही आवश्यकता पड़नबाकी है ।

जिनकी मूर्ति अभी उभरी जा रही है और जिनकी भुजाओंका पाणी अभी भर नहीं गया व कविताके रसीले कुम्भीपाक मरकम क्यों नष्टर भा रहे हैं ? उनका क्षेत्र है क्रीलायक इरादे लेकर एशियाके भिन्न-भिन्न देशोंमें चेतनामय संक्षर्पोंकी ओर कान्त बढ़ाना । और अपनी ज्ञानकी साधनासे विस्तृत और महान् एशियाको समझना और लोटकर इस देशको बहु अक्षिप्त साहित्य देना जिसे पढ़कर वात्मीकिकी सीता और व्यासक कृष्यकी तरह एक ऐसी पीढ़ी बनती आवे जो एशियाकी अमर पीढ़ी कर्मा सके ? या महान् 'रसीला साहित्य' आप लिखते हैं उससे कहीं अच्छा नहीं बज्जल नहीं निमल कड़कियाँ लिखन समी है । उनसे पर-जित होकर भी आपका रस पराजित नहीं होता ?

साहित्यके महामानव, समयक तिरपर ठेरा बन्दन और अमिनन्दन होने दे और तिरपर मड़गते हुए हवाई जहाजोंमें बहु निम जाने दे कि विरलका ज्ञान और उच्च-गुणकके समता लेकर लोक-लोकसे दू आता और

समयके तिरपर ठेरा बन्दन : अमिनन्दन

यू सीटला नजर आये। साढ़े बार करोड़ डॉलरोंकी बीसी बिरब भापा कहनाही है और १४ करोड़ोंकी इस मायू भापा तथा २२ करोड़ोंकी इस राष्ट्रभापाको बनाबपुनर कहा जाता है। इसलिये कि तुममें और मुझमें यह बन्ध नहीं है कि हम बिरबमे अपनी बापोंकी बापों और अपने बन्धको बन्ध कहलायें।

कवि-गणेश्वर और ललित साहित्यको साक्षियों इन्द्र समासके रस किरावों और रसाक इन धड़ुमें यथाय साहियर इतना पक्का गया है कि अन्य साहित्यिककी कीर्ति कोई सुनता ही नहीं। बिबेकशील दिग्गज भी अपने प्रबोंकी रचनाएँ बुपबाप कर रहे हैं। मानो छुाकर कोई अपराध कर रहे हों और जिसके लिये जनताकी प्रशंसा और पुरस्कार पानेका मानो उन्हें कोई हक न हो।

फिर हम है राष्ट्रभापाके दिग्गज किन्तु राष्ट्रके प्रशंसकों भापाओं और उनके बिधानसे न हमारी कोई पहचान न हमारा कोई सम्बन्ध। मानो हम बहू कुछ है जो अपने जीवनका सारा रस अपनी ही जड़ोंसे ये बन्ध हमें प्राप्तय भापाबाकी बापुक सम्पत्की जाबद्वयकता ही नहीं होती। यही कारण है कि मैबिका बुद्धलमकको राजस्थानी तथा अन्य जिनकी ही भापाबाकी धर्मोंमें हमारी अकमध्यनापर अपनी पैदा हो गयी है। और हम है कि पुन है। मानो उन भापाभाके घोषों और उनके साहित्योंके प्रति को नही अपनी उपेक्षाको वा ता हम उचित समझ रहे हैं या इतने

बिडता मेरा रोडवार नहीं है। शिथिल प्रति मेरा स्वभाव नहीं है। प्रकय कससे उपार आवे डॉलर पानीसे मैं तो प्रकय ही हाता देगना चाहता हूँ। वह बनिजोंके कारणोंम सदा आवे यह कुछ भी मुझे स्वीकार नहीं। आपकी और वेबन आपकी डॉलरियावर मेरा बिरबाध है। इनमपर गनर तो अपना क्रम किया आवे तो - बहू फिर तो मेरा और आपका चिन्तकी साक्षात

ही होना चाहिए। कौन कहता है कि हम काटि-कोटि मरमुण्ड अपनी मायाके 'अन्न' नहीं और हमारे सम्मिलनसे कोई अन्न नहीं बनता कोई पद नहीं बनता।

पीठा सऊ मूलापर चंद्रनेवास बंधे बगालने दिय थे। हम हा है कि मात्र बंगालका भूखों मरना देख रहे हैं। हमारी उदात्तता क्या कह रही है? क्या मैं भाई कर्तृयामास मुन्दीसे पूछूँ कि बगालक भूखों मरते हुए भारतका साहित्य क्या अछण्ड भारतका क्रियात्मक उच्चारण कर रहा है? क्या हम साहित्यिकोंने कठिन और समझमें म आनबाओ बाधियाँ लिखकर देखकी समझ मूछ और विज्ञानाको भी भूखों नहीं मार रखा है?

सासन २०० वर्षोंमें ११ छो सही पड़े सिद्धे दिने मानी ८९ छो छो मुर्ख। पर हमन एसी भाषा लिखी कि उन ११ छो सरो तक भी हमारी बात नहीं पहुँच पायो। ज्ञानक क्षेत्रमें हम जन-विज्ञानाको लिए पासनसे भी अधिक कठिन साबित हुए।

नय साहित्यिक उद्यम साहित्यिक उद्यम चिन्तक! अब कुलम तरे हाथ है मुन तर सामन। जो इतिहासमें भी सक्क है उन्हें युगमें मठ खड़ा रहने दे और जा युगपर अड़े हैं उन्हें आमे बहनके लिए बाध्य कर। हमारे युगकी साहित्य-साधनाकी पराक्रमका परिणाम है तेरी मात्रकी प्रतिमादीनता तेरी मात्रकी पराधीनता। कसका युग तुझे किस तरह बनाना है, छोच और रास्ता निकाम भौंडा पद न कर कि तू मर नूछ है। यदि अग्य अंक साच है ता दूम्य भी अंक है नहीं तो नहीं।

बमीन हुआ पानी विज्ञान तक अदघास्त्र भूगाल, सेना ग्याहार हपि पाता सऊहर अंनक बारात पाँच और घहर सरोवर, नदी न और समुद्र सबक सिरपर तरी सत्ता चाहिए। सबका पता तेरी बाधीमें चाहिए।

भनवान् करें, हम अपनी जीवन-बाओ बाधीका अपने बस और बनी बाओसे अमियेक और अमिनन्दन करनेमें सफल हों।

मत्रपके मिरपर तेरा बन्दन : अमिनन्दन

उस दिन हमारे आर्याभियानकी किस्मतका एक बलवान बंदीपूरा टूट गया — श्रीमती कस्तूरबा पागधी नहीं रहीं। महारमाजीन इस बेसमें जो क्लान्ति को बहु जीवन और बाणोंके बरूपपर। बाणीपर जो आता है भीम भाया उसे पहले ही हमम बुनबुना उठती है। राष्ट्रक परम देवताकी बड़ी भीम भाया आज छिन गयी है ! श्री महादेव बेसाईको छोकर, बाणोंके उस परम तपीले अपना शक्तिना हाथ छोया था आज 'बामाव' बिछुड़ गया। आया सौ महामके भावमें राष्ट्रीय देवताका केवल बन्दीपूह होना ही नहीं, भारतीयताका शोक-भजन होना भी बरा था। बन्दिनी बाके प्रस्थानसे बन्दीपूहसे स्वयं तक जो स्वर्न-रैसा बन गयी है मानो अभी दूर तक बही भारतीय मामककी कर्तव्य रेखा है और उसपर बढ़कर ही बेसाके ५० कोटि बिबदास अपने मातृ बियोकका पत्र जपनी मातृभाया और पातृभूमिमें बूँड़ सकते है। यदि एकतकी काको बूँरे हममें हों तो बाके आदपर, मातृभूमिकी बूँरे बूँड़नेका प्रयत्न हम क्यों करें ? यह क्यों न जान रहे कि उन्हें बन्दिनी मरना पड़ा।

एडरूप, सुबहकर
१९४४



हिन्दी प्रचार, उसकी परम्परा जोखिम और गति विधि

हिन्दी प्रचार सम्मेलनके इस अवसरपर आपने मुझे स्मरण किया इसके लिए आपकी कृपाका आभार मानता हूँ। महाराष्ट्रमें हिन्दी प्रचार सम्मेलन इतना सफल हुआ कि यहाँ पिछले तीन वर्षोंके बोड़े-से समयमें दो हजारोंकी तादात्म्य हिन्दीको परीक्षामोंमें विद्यार्थी बैठने लगे इसमें मुझे आश्चर्य ही भी और नहीं भी है।

बब नेत्रोंकी भाषा होती है हृदयकी भाषा होती है बुद्धिकी भाषा होती है, आचर्यकताओंकी भाषा डोली है, बसिदानकी भाषा होती है और मुनकराइट उदासीनता मुहाबरे, कहराबतें उचित तर्क उत्साह प्रतारणा मीन, और बायो मानव हृदयको व्यक्त करन ही का काम करत रहते हैं तब मानवोंकी मातृभूमि उनके देयकी कोई बोली नहीं यह सम्भव नहीं।

हिन्दी मेरी मातृभाषा भी है। बत यह आश्चर्य मुझे नहीं घोमता कि आज मैं आपके सामने हिन्दीके गुणोंका पहाड़ा पढ़ूँ। हिन्दीके गुणोंकी खोजका काम ही मैं आप विचारोंपर छोड़ता हूँ। मुझे तो एक ही बात याद आती है जब गोस्वामी तुलसीदास रामचरितमानसके लेखक काशी के पण्डितोंकी संस्कृतकी परम्पराको छोड़कर अवधीमें लिखन लये तब मिथान्तका बोझाला बीमब अपनी बुद्धिके बीलकी पीठपर भाड़े ऋद्धिक उपासक और नवीनशास्त्रे महामारीकी तरह डरनबाते संस्कृतके तत्कालीन पण्डितोंने मुन्ते हैं तुलसीदासजीको विद्वान् मानने और उनका हिन्दीमें लिखे साहित्य की दाद देनेसे इनकार किया। उस समय लोक भाषाको हिमायतम यह बोहा तुलसीदासजीने बनाया—

का मारता का संस्कृत प्रेम चाहियत सौँतु,
काम जो भावे कामरी का के करिय कर्मौतु ।

स्पष्ट है कि संस्कृतकी तुलसीदासजीने झीमती बस्वकी उपमा दी और अपनी भाषाको कम्बल की। उन्होंने कहा क्या भाषा और क्या संस्कृत प्रेम सच्चा चाहिये, कम्बल काम जाये तो कर्मोंको निकर क्या करना है?

राष्ट्रभाषाके पक्षमें संस्कृतका विरोध हुआ तो अँगरेजीका विरोध आ गया उनपर मुझे कहनेकी इच्छा होती है कि सर्व-युवसम्पन्ना संस्कृतको ही देखने का युवचाप छोड़ दिया किछोको पता भी न चला। हिन्दी अपनी इस विशेषताके कारण बड़ी ही गहरी कि उसे अपने साहित्यपर यों गव और त्यो पव है। वह तो अपनी सरलताके कारण बड़ी है। और हिन्दीसे मरल भाषा राष्ट्रको प्राप्त होनेपर सिद्ध हिन्दीके मोहके कारण को भी हिन्दी-भाषी हिन्दीको राष्ट्रभाषाके पक्षपर नानाये रक्तकी मनुहार नहीं करेगा। जो साहित्यमें उन्नत और बल्लूना भाषाको रक्षते यदि हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनना पडा तो इसलिये कि देमकी जो सीमा जो बेरा एक काकाजीके प्रमाणे छाया आ सकता था बड़ा हिन्दा ही ठहर सकती थी। झीमती बस्वसे भूमि पाटनेकी बहना मर्हगी और असाध्य थी। यहाँ तो तुलसीदासजीकी कामरी ही काम है सकती थी।

महाराष्ट्र प्रदेशका भारतीय स्वतन्त्रताके इतिहासमें वीरचतुर्ष भाग रहा है। इसी प्रान्तमें छत्रपति महाराजने हिन्दू-जन-वारसाहीकी स्थापना का उद्योग कर समस्त भारतको संगठित करनेका उद्योग किया और यी मोक्षमार्ग निकलना पैदा होकर अपने कठोसे यह स्वात्ता जयापी जिनमे समस्त देशने स्वाधीनताके पक्षमें पुनः स्वाधीनताके पक्षमें मोक्षना सीदा।

हमारे उद्योग हमारे स्वतन्त्रताके उद्योग समस्त साठ वर्षोंमें ही रहे है। विन्तु जतने हमें पुनः मज नहीं मिल रहा। हम अपने हृदय

मिथामेका नाम भयरेखीसे सेते है । उस भाषाको देखबासी नहीं जानते । कुछ गिने-बुने जानते है । और देखबासी मिश्र-मिश्र भाषाओंमें बैठे हुए है । हमारे अलग-अलग हिन्दुस्तानकी पूम आबादीका अपना समस्त राष्ट्रने एक भाषामें मिश्रकर कभी सोचा ही नहीं ।

हम देखके महापुरुषोंको विशेषतः महात्मा गान्धीको इस बातकी याद दायी कि राष्ट्रको भाषी प्रधान की जाये । बोली बन्द हो चुकनेबाके मृतप्राय राष्ट्रकी भाषा फोड़ो जाये । ऐसी भाषा जिसे उत्तरसे दक्षिण तक अधिकतम लोग जान सकें । बोली बन्द होना तो मरणाका लक्षण होता है । जीवनका अग्रम तो बोली ही है । अब अलग-अलग हिन्दुस्तान किसीका भी स्वप्न हो उसका अधिष्ठान एक बोली है, एक भाषा है राष्ट्र भाषा है ।

यह आश्चर्यकी बात है कि महाराष्ट्र प्रदेशमें राष्ट्रभाषा इतनी दीर्घ फैल गयी । किन्तु 'महाराष्ट्र' में यह आश्चर्यकी बात नहीं भी है । पञ्चाशिवर्षोंसे भारतीय स्वराज्य और स्वराज्य भावनाके पहरेदार, महा राष्ट्रने बढ़कर इस बातको कौन समझता कि एक राष्ट्रको एक बोली भी होती है । यही कारण है कि महाराष्ट्रमें राष्ट्रभाषा इतनी तेजीसे फैलती जा रही है । और इसलिए मैंने कहा कि मुझे आश्चर्य है भी और नहीं भी है ।

राष्ट्रभाषा मात्र और कसकी मढ़ी हुई नहीं है इसके प्रचारका काम महात्मा गान्धीज काका जानसकरने टण्डनजोन हम लोगोम ही नहीं किया 'प्रचारका म नहीं किया न जाने क्यों प्रचारक राष्ट्र मुझे कभी अच्छा नहीं लगा इसमें हुरदहीनता सकेहीनता और आश्चर्यकताकी ईमानदारीका समाप्त होखता है यह खेपरजोके प्रोपेगण्डिस्ट शब्दका अर्थवत्प है जिस बाजूको हम उठा लें उसकी कम-जोरियोंपर परदा डालकर, अपनी उचित और अनुचित सत्य और आरोपित अच्छाइयाका गुण धान करते रहना उन्हें फिर-फिर दोहराना और अपने इस काममें हार

दिग्धी प्रचार, उसकी परम्परा, जोलिय और गति-विधि

न मानना — मैं यही अर्थ प्रचारक घरमें पाता हूँ आत्मबलि बहाते
 आयरिश बैसायन टेरेम मैकस्विनीको भी आयरिश स्वतन्त्रताके 'प्रचा-
 रको'के छिन्नाङ्क सिक्कयत्नी थी किन्तु हिन्दी प्रचारकतासे नहीं बढ़ी। भारतीय
 संस्कृतिके जयर सोनके सम्मेलनकी बानी बनकर ही हिन्दी बढ़ी है और
 अत्रिच्यमें भी उसका वही काम हो तो उसका राष्ट्रबानी बनकर बढ़ना
 साबक हो। वैदिक युगके ऋषियोंने एक बाणी गढ़ी थी किन्तु उनका
 मगवान् दीरसायरमें मगवती कश्मीके साथ सेपद्याप्यपर विकास करने
 लगा तब ऋषियोंने कामको जाये बढ़ानेके लिए सप्त उलग्न हुए उन्होंने
 मगवान्को दीरसायरसे बाहर निकालकर मन्कोमें मरुत घरीकोमें नरिज
 मानकोमें मानव कष्टमोगियोंमें कष्ट-भोगी बन जानके लिए बाध्य किया,
 सप्तयुगके मगवान् नामदेवकी टूटी झोंपडो बाँधते कामात्रीकी मनात्रकी कमी
 पूरी करते और क्या-क्या न करते लोक-दुखका नारायण कामादेके अपने
 मिदानमें सप्त दक्षिणसे उत्तर और उत्तरसे दक्षिण पश्चिमसे पूरब और
 पूरबसे पश्चिम जाते-आते रहते। सप्तपति सिखात्रीकी शक्तिभोगे और
 पेशबोकी सेनामे नर्मदा साँवर कुछ थोड़ी ही बार उत्तर हिन्दुस्तानकी
 यात्रा की होयी किन्तु सप्तोकी यद् बाणी-यात्रा दक्षिणके तीर्थोंसे उत्तर
 के तीर्थोंकी ओर और उत्तरके तीर्थोंसे दक्षिणके तीर्थोंकी ओर
 कितनी ही बार कृष्णा कावेरी ताप्ती नर्मदा जमना और गंगा
 लीपती रही है। उस समय भाषाका निर्माण भाषाका संशोधन भाषाका
 क्षेत्र-देन उन सप्तोंके द्वारा हीठा रखा जा उठी दिनों हिन्दोका निर्माण
 हुआ है। इनके बचपनके दिन सप्तोंकी जायकी मोहमें दुभारसे बीते हैं
 सप्तोंकी कुममार छेतके प्रमन शारथ्य पाया है और सप्तोंकी अग्निम-
 भारतीय यात्राप्रमि अग्निम भारतकी बानी बनकरा इसे अचरर प्राप्त
 हुआ है। अब लोक भाषा राष्ट्र-बानी के उल्लयनके लिए एक सप्तकी ही
 भाषा-पत्रता होती है उत्तरमें दक्षिण और पूरबसे पश्चिम। इसीनिष्ठ
 'सप्तपति शायब चन्द्राराम की धुन लवाते सप्त यात्रीके ही प्रयत्नोके

राष्ट्रवादीयों ने पुनः प्राण-प्रतिष्ठा राष्ट्र-निदधय और संघासन पाया। मेरी
 प्रार्थना है कि प्रचारकताको सन्तुष्ट कर सकें। यह सब है कि भाषाके
 घर्षणों का नया रूप देनेमें जोस नतीजें मिलें। किन्तु परिस्थितियोंमें पढ़कर
 मानवको कुछ ही मानव-भाषाके चरम भी अपना महत्त्व खो बैठे हैं 'राम
 और 'सरय' - इन दोनों ही चरमोंमें पवित्र चरम इन दोनों साधनायामें
 उद्भवमान सामना कौन-सी? किन्तु 'राम राम सरय' है। कहिए कि राम और
 सरय जैसे मंगल चरमोंके रहते या अर्थयत्नका सचेत अमंगलका प्रभाव हुए
 बिना नहीं रहता। प्रचारक चरम भी अर्थ खोया हुआ है। इस उच्छ्वस
 मरणा प्रदान करनी होगी। राजनीतिक द्वाया पढ़कर इस चरम अपनाकी
 मरकर पातित बना लिया है। महाराष्ट्र एक बिनादी मरनेमें अपने एक
 मराठी प्रबन्धमें एक ऐसे पात्रका चर्चा किया है जिसे कृष्णस चिह्न भी। एक
 दिन उनके यही कोई कृष्णका मिट्टीका लिसोना बच्चाके लिए ले आया।
 उस बिना पात्रमें इसलिए कि वह कृष्ण बिल्ली-जैसा दीखत लग उस
 बिल्लीकी दुम पिछना शुरू किया। परिणामतः वह कृष्ण रहा नहीं और
 बिल्ली ही न पाया। प्रचारकता ही से प्रचार चरम पवित्र न गया इस
 पर मन्त्रत्वका अभिप्राय करना होगा। प्रचारकता कर्तव्यक जाती है
 इसका एक उदाहरण सुनिए। सन् १९२३ की बात है। कापिलेसम उस
 कर कोमिपाका बहिष्कार किया था उन्हीं दिनों हमारे प्रांतमें नागपुरमें
 हिन्दू मुसलिम झगडा हो गया। एक महासभ्य हमारे मित्रमें-म ही एक
 महासभ्य उस समय कोमिपमें लड़े होनकी तैयारी कर चुक था। अपना
 मनिफेस्टो भी उन्होंने छत्रवा किया था। ज्यों ही दगा करते हुए हिन्दू
 मुसलमानकी भीड़ उन्होंने नागपुरकी बलिपोंमें बैठी उन्हें अपना मनिफेस्टो
 पार था गया। वे लय उदारतापूर्वक रंगकी एकत्रित भीड़का अपना
 मनिफेस्टो बाँटने। यह बात उस समय अत्रवार तकमें छपी थी। वे मर
 मित्र से से उनका नाम नहीं बघाईगा। सरय यह कि कीचसे कीच नहीं
 बुझेगा। उसे तो बलसे ही बोना होगा। राष्ट्रभाषाके प्रचारकके उच्छ्वस

हिन्दी प्रचार, उसकी परम्परा, जागियम भार गति बिधि

पर राष्ट्रबाजीका नीरव ठहरा हुआ है। यह राष्ट्रमूर्ति और सामाजिक संघर्षकी कड़वाहटोंमें अपना मत रखकर भी सन्तो-बीमा बलिष्ठ रहे। राष्ट्रबाजीके एकदमारेसे बाहर उसके पैर अन्य किसी स्वरपर विचलित न हों। उसकी आत्मामें आदश उसकी मृदुम मनचाही एकदमता और उसके पैरोंकी पवित्र राष्ट्रकी बाजीका उन्नत-पथ नजर आवे। हिन्दू मुसलमान पारसो ईसाई कोई भेद उसमें न था।

हिन्दी प्रचारका अक्षर समस्त बक्षपर झा रखा है। यदि हिन्दी कवियों और निम्नकानं उन्के शब्दोंको अपनी भाषामें जगड़ भी है तो राष्ट्रकी शक्ति मुसलिम कवियाम भी ईमानदारीके आचरण हुआ है। आप धायक यह कहें कि जहाँ राष्ट्रधारा बोलना कि वह मुसलमानोंके गुणमानके बिना ही नहीं रह सकता, ये आपसे कहना चाहता है कि आजके कितने ही उर्दू कवि एसी कविता लिखत हैं जिसमें फारसी शूरबानस ईदगकी जगड़ रह गयो है। मोमबी मकब्रुम हुसन अइमदपुरी अपन एक मौलम लिखते हैं

बंशाधर महाराज हमार
 हृदय-कुन्ज में बंसा बजाभा ।
 मय मर्जों के राजा हा मुम
 प्रेमगीत म मन का रिमाभा ।
 तुम मय प्यारों के प्यार हा
 जाभा मीत की रीत लिखाभा ।

मेरे हावम तो पुस्तक ही है।^१ कहिए तो मुसलमानों-द्वारा धात्रक मुसलमानों-द्वारा लिखे मरक हिन्दीके इतन उदाहरण मुनाई कि पद्यों आप मुनत रहे।

१ यह सत्य भी जगुपेरीजीके हावमे भी उपेन्द्रनाथ सरदारी 'उर्दू भाषाकी एक मबी धारा' नामक पुस्तक की किने प्रस्तावकी शिफु-गर्मी जे-उदीने सन् १९४१ में ही प्रकाशित किया है।

प्रचारक समाजमें विद्वान्मनवान् देशक आदेश और प्रयत्नको जानत
 बाबा और मयाबका एक घेष्ट घटक ह्ये । इम परिपदमें कौन-या परदा
 है विम म इटा वटा । आर तो मुसस कुछ मुनना बाहन ब । मी था गया ।
 भारक अघ्यस थी बाबा बायेलकर नामी कसाकार भा है । ब भावका
 माग-प्रशान कर्गेये ही । आप यत्र न भूयै कि श्रियावद और पदमण्डारमें
 मनुदार म होल ह्ये भा आप यात्रको भावा का उभान और प्रचार
 कर रहे हैं । उम मापाना मग मत्री । निर्माण आपक हाया पोगबनुग हाता
 जाला है । मस्फाह यदि स्त्रराम ऊर्बाई छुती कितार गिराती तर्गिणीम
 मरना भोका बपान ह्ये किमी यात्राका कर्ग बीन मुनकर मानुम होकर
 हाइ हाय दे और ईम आय मायो गसीत्र मुनकर नद भोवामें बृदनी
 मदन लम अघरा बागताका गीत मुनकर अघना बाह बहाकर और
 लम टोककर नाचका बोच बागम छोट बाधमया तर्गिणीम बृदकर मरनी
 बहादुरीकी कसुगत शिवाज मग ता मयम पात्रियाके प्राण म कनका लगरा
 मरनी पकिष भाबनाने मो बह अरनरर छता । उम तो कबल अरनी
 तर्गिणीकी माग मुननी बाशिऐ, और अरनी नुत्रा और अपन बाग्बाधम
 हवा और तरकोके गत्रका मामना करत ह्ये भोवाका मुरशित उम पार
 पशुबाता बाशिऐ । मी इम परिपदका इमा उद्माबनाक साथ उद्मागन
 करता है कि आपक हाया राष्ट्रबासी राष्ट्रभागाका भाव उमका अल्पिष
 उमका अघ्यमण्डारका बाषा बन रजनी अमता मुरशित रहे । मगवान्
 आपक लम मयक कायकी मकल बनायें ।

उद्माका प्रचार उद्मागन

उद्मागन

११४



हिन्दीका पत्रकार

स्वायत्त समितिके सभापति श्री धीमन्काशजी माधव सम्पादक बन्धुजी तथा मित्रा

मैं तो बिस्तरसे उठकर इन मंचपर आ गया हूँ। श्री पराङ्करजीत आपकी बतला ही दिया है एममग नौ महोत्सव मुझे अक्षयणका मौजा नहीं मिला है। मैं तो हाथम कोरा कामच लेकर चला आया। इतना समय ही नहीं था कि मैं कुछ लिख पाता। ११ अक्टूबरको मरे पास ठार गया १२ को पण्डितबास मरे पास इन्दौर भेजा गया १३ को मैं चम दिया। १४ को दिन भर चमता रहा और १५ को आपके यहाँ आ पहुँचा। एसा आखरो सम्पादक सम्मेलनक समारथिक पहले आपसे क्या कहूँ? सन् १९२७ में भरतपुरके पत्रकार सम्मेलनका श्री मैं सभापति था। उस समयका भावना भी मुझे बरपर नहीं मिला जिसमें देख पाता। मैं सोचता हूँ कि बिना कुछ तैयारी किये मैं बीमारीसे उठकर आ ही गया मरी शिष्टकका पहला कारण यह है। दूसरे मैंने ही कमबीर में सैक लिखकर तरन मित्रोको एत स्पान देनकी बात करी थी। इसीम मन उदासीनता भी प्रकट की किन्तु बारम्बती तरह पराङ्करजीत अक्षय्य आनका ठार भेज दिया और मैं आपके सामन उपस्थित हूँ गया।

तब तो या है कि मुझ बालककी आरत है और बीलनवा नाम करनवाला आवनी कभी कामका बोलना नहीं बोलना करता। दूसरे, मेरे एक विद्यान् मित्रका एक कचन भी आज ही मुझमे मेर काना तक पहुँचाया गया। व स्वयं कायकुम्भ है। उनका कचन है कि नार्न बन्नीजिया और

मर्यादा किसीके सम्हाल नहीं समझा करत इसलिये उनक संघटनकी बात कहना बकार है, उनक सामन यापच देना न वना बराबर है। किन्तु मैं तो घटा और बिस्वासके साथ साथ कुछ बात कहना भी चाहता हूँ।

समाचार-पत्रका अस्तित्व पत्रक रूपम चाह गया हा किन्तु संवाद और घटनाओंका एक स्थान और एक युगम दूसर स्थान और दूसर युग तक पहुँचानका काम पुराना ही है। यही कारण है कि प्राचीन युगम एक ज्ञाता दूसरे ज्ञाताके कितनी दूरीपर रह किन्तु उन ज्ञाताका और उनके हाथ बचिन घटना-सूत्रोंको लोग जानत थे। जब घरे घरे समय बदला तब उनका स्थान कपाकारोंन किया और उनक बाद अल्पम बरमान बुद्धम सूचनाओंके संग्रह परिस्थितिमाक ज्ञान विकासका प्रकटीकरण और ज्ञानके लक्ष्यकोपत विकासके लिये समाचार-पत्रोका उपयोग होन लगा।

चौद चाह बितनी सुन्दर और उपयोगी हो युगके अनुकूल ज्ञानके लिये उनमें परिवर्तन हात ही रहेंगे। यदि हम आजके युगनयनका मोहू हों ता उनसे हुए सामाजी तरह उठरो हुई बन्पुएँ गयो जानपर अपरि बचनकोन गनी जानपर संग समाज और साहित्यकी स्वास्थ-जाति करन लेंगी। साहित्यगिम्बी तो एक शोधक है, आ लबीनमे लबीनपर बिचार वाचनक समाजकी देना रहता है। समाचार-पत्रोका बनमान स्वकय भा ज्ञानमय सूचनासंग्रह घटना प्रकटीकरण और जनताकी भाषा पूँमका बनमान सुपारा हुआ स्वकय है।

असलत बुधे माकूम है सन् १९०७ ई० में धर्मपुरमें मन पत्रकार गदरका उपयोग किया। किन्तु 'अनविष्ट गदरक सिंग' पत्रकार गदरक मयुच भयोका घोषक नहीं माकूम होजा। यह सब है कि 'पत्रकार गदरक के अन्दर अगुवाओंका मयारन करनेवाके तथा अगुवाओंके लिये केन तथा संवादपत्र किशनेवाक और विदेश संवादगता यह सब आ जान है। किन्तु बयाबमें ता युगकी घटनाओंके विकासक संवादक आलोचक

और मेलकने 'पत्रकार' बहेंगे। पत्रकार की सर्व्व ही बागड बैकर निपटना उच्छरी नहीं है। नियन्त्रणम तीस और मस्तिष्कका उपयोग करना उसकी विशेषता है। इन मानामें 'पत्रकार' शब्द छोटा पडता है। साथ ही अपन ज्ञान-संचालनके द्वारा लखोन मुक्का निर्माण भी उसकी जिम्मेदारी है। बिनापर यह पत्रकार शब्द मौजू नहीं हाता। किन्तु इससे अधिक उपयुक्त शब्द मसं मूस भी नहीं पडता।

बिदबमें ता पत्रकार-कला अपने लिपि महान् स्थान बना चुकी है किन्तु हिन्दी पत्रकार-कला नहीं। हमारी रचना बहुत पाचनीय है। हमार देशमें धैर्येबाक अछबार लयमग एक कगोइकी तादावम अपत है। बम्बईके प्रसिद्ध ऐम्पो-इन्डियन डैनिक 'टाइम्स ऑफ इन्डिया'न ती यह भविष्यवाणी करलका भी साहम किया है कि आगामा कुछ बरोंमें अँबरकी पाठकारी तादाव समयम तीस कछेड तक पहुँच जावकी। बँमसा मराठी और गुजराती आदि भाषाआके पचाक आहुँकी तादाव कम हजागमें ऊपर कई गुना मुनी पयो। य पत्र अपन प्रांतीय जनमतपर नियन्त्रण करत है और अपन आसन तथा अपनी संस्थाआका भी किन्तु हिन्दी समाचार-पत्राकी अक्षमता इससे बिलकुल भिन्न है। संयुक्तप्रान्त मध्यप्रान्त बिहार आदि उन सभी मुहोंमें जहाँ हिन्दी भाषा-भाषी जनता रहती है, हिन्दी समाचार-पत्राका बिस्तार कुछ हजाग तक ही है। क्या बँो हिन्दीका समाचार-पत्र 'टाइम्स ऑफ इन्डिया'की तरह यह हाता यह भविष्यवाणी कर सकता है कि बाट ही निजाम पन्हु कगार की आबादीकी हिन्दी जनताम दो करान जनताके पास हिन्दी पत्राकी परैचा गवमें? मुग दु गमें कहना पडता है कि अछबारोक वार्तालयों-को अयोगा हिन्दी-पत्रा और पत्रकाराकी हातिके साधन हमार गमाआके बीच अत्यन्त बहुत बरुवान् है। य दो बिना-बिम्बु है - हिन्दी संसारका हिन्दी-प्रांतीयता सेनूब और हमस सम्पूर्ण हिन्दी संसारकी रक्षा पाणन और नियमन-आवताका अभाव यानी प्रांतीयताका अभाव। धैरे

कुछ विचारों में कुछ मामों सांख्यिक विचारों में हमें हिन्दी संसारका गुण
 कहा है और उसका राष्ट्रके प्रति रहमबाका ईमानदारीकी उम्मीदकता
 बतायी है। किन्तु मैं इस विचारमें सहमत नहीं हूँ। मैं प्रांतीयताका
 बुरी बात मानता हूँ। किन्तु प्रांतीय कमजोरियाका राष्ट्रमें बल नहीं
 कहा जा सकता। जब समूह राष्ट्रक समस्त प्रांत राष्ट्रमें उत्थानकी
 शक्तिमें कम हों तब कुछ विचारोंमें हमारा पिछड़ रहकर राष्ट्रमें-विचार
 में बाधक और अन्य प्रांतोंपर इन प्रांतोंके असंतोषपर बाधाका हा
 पड़ना न हमारी उत्तमता करी जा सकती है न राष्ट्रोपता। मुझे तो इस
 बातका दुःख है कि माननीय पण्डित रविचंद्रर दामोदर मानसाम पण्डित
 गोविन्दबल्लभ पन्त और माननीय श्री श्रीकृष्ण मिश्र तथा उनके मित्रोंमें
 पापद हो करके निककर सोचा हा कि इन तीनों घातकाका संयुक्त व्यक्ति
 की समस्त हिन्दी संसारके भ्रष्टाचार और संघर्षका शुभ काम
 करना है। बुरुजानपुरमें भागलपुर तक और इज्जारीबागस पंजाब तक
 एक दृष्टि रखकर सीधमबासी मनोवृत्तिकी हम गहरी कमी महसूस
 करते हैं। और जब समूह ही हमपर ध्यान नहीं बना तब अन्तर्गतमें-से
 बाधक कहमि जाये? हमी मनोवृत्तिक अभावस माहित्य और समा-
 चारपत्रोंमें यह बदन नहीं मात्तम होता जो मरानी गुमराता बंगला
 तथा अन्य प्रांतीय भाषाओंके पत्रोंमें मानसुम हुआ है। बम्बईके प्रधान
 कर्मी मेरे भाई माननीय और माहब कायमबासी ही नहीं मुम्बईमें
 सर्वके मरानी पत्रोंका भी कुछ देखकर काम किया करते हैं जो मरवा
 उचित और स्वाभाविक है और उत्तम शासनक लिए आवश्यक है।
 एसी तरह अन्य हिन्दी-भाषी लोगोंके बाहरके प्रांतोंके घामनोंकी हालत
 है। महागण्ट प्रदेसमें तो उनका बनना कोई संगरका दृष्टिक ही नहीं है।
 बंदाकमें मानस-बाजार पत्रिका का प्रचार और प्रभाव सुना जाता है।
 और पत्र-विषय बंगाली तक उन बड़े छात्रोंमें पढ़ते हैं। मरवातोंकी
 विचारोंपर आप उनकी भाषाके पत्रोंको रखा हुआ पावेंगे और उन पत्रोंका

स्मिथसोपरा घासनमें खरखा होते पार्ये । किन्तु एसे घम्यभापी हिन्दी-गंगागम देयनेको मिससे जो अँगरेजो पत्राके स्मिथ प्रातःकालसे बयन ररते हे किन्तु मुने-भटके या नगृत्वकी लुघामरमें मुज्त भामे हुए हिन्दी दैनिक समा अन्य पत्राके मरिना साबरख नही पामते और कदाचित् इस अय-पुगमें से रहीक सद्रुपयोगकी बहुमुख्य सीमाम त्वात पत है । म बिहारकी बात नही जानना किन्तु मुक्तप्राप्तक और मध्यप्राप्तके कुछ स्थानसे मुने एमी लुबरे मिसी है ।

यह बात बिस्वासपूर्वक कही जा सखती है कि आज प्राप्तिमें जो अनप्रिय सरकारें स्थापित है और भारत-मपारें काम कर रही है उनक मतदानाभा तक अँगरेजो नही हिन्दी पत्रकारकी इकलम पहुँची थी । किन्तु जो छोप्रा हिन्दी पत्रोंके साध की जा रही है उस बेपकर यह कहना पड़ेगा कि हमारा नगृत्व अपन ही बलवान् साधनेके प्रति उदासीन है । यदि हम हिन्दीके पत्रों और पत्रकाराके प्रति घासन नगृत्व और अनताकी साधपान और गतायक रलें ता हमार सामने हिन्दी-मसारके नवजापरपवा दिन जा सजता है ।

हिन्दी पत्राकी ग्रागकर समाचार-पत्राकी जो दैनिक प्रकाशित हाते है तार समाचार भी एक कठिनाई है । समाचारकी उन्नतिमें अँगरेजीम तार भरती है । जापान इन्डियन अमरीका इन कही मी जाय यह समागा नही बग मचते कि उन हमारी भाषामें समाचार न जायें । परिणामत अँगरेजी बैलिठ पत्राकी तथा तार-समाचारीती गानुक्तिपि एगन से सेते हैं कबल अमरतके अइबिराम पुनबिराम सापक या उप वीपक पटा-बहा या बरसकर । किन्तु बचारा हिन्दी पत्रकार अनुदाह करन बैठ जाता है और ताजकी कीड़में अँगरेजी पत्राके पीछे रह जाता है । इन बातकी लुघाकी और अनतायक बिनकुल ध्यान नही रत माना बहु बिलकुल स्थापानिक बबस्था हो ।

जापनका धामन प्राप्तिमें स्थापित हो जानके कारण समाचार-पत्रों-

सच भी स्वतंत्र और उदार होना चाहिए। इसके पहलू कांग्रेसका
 कांग्रेसका पूण्ड प्रचारपत्र अबका प्रोपेगण्डा शीट था। किन्तु अब
 बहु अनुभव करता चाहिए कि प्राप्तकी समस्त बनता हमारे मन्त्रि
 हमकी प्रथा है और जो सच था पक्षपातहीन सच समस्त बनताके
 ए कांग्रेसके मन्त्रिमण्डलका सना अनिवाय है वही पक्षपातहीन सच
 प्रेस बख्तारोंका सरकाप्रेसी बनताक साम भी होना चाहिए। कांग्रेसी
 बनन सम्पादकाय स्तम्भाम विरोधको बाधापर अपनी मुक्ततापीनी
 तक छिए स्वतन्त्र रहे किन्तु एकीक भीक और अरिचकी रखा करते
 विरोधमें प्रकट हानकास बनमतको पक्षम स्याम देना चाहिए। हमारा
 बनताका बाधा छोड़ना है। जहाँ शिक्षणका क्रोमही १० भी न हो
 कि बनताम कठोर उन्नत भावसोंको माँग नहीं करनी चाहिए। हाँ
 और काम-धर्मोद पत्रोंका स्वभाव नहीं होता चाहिए।

हमन बहुत वर्षों तक नून फाँसी और कामेपानीक गीठ गाय और
 स्वतन्त्रता मिमल तक हमारे यह परम्परा जारी रहेगी किन्तु एक बात
 हम नकरा-शत्रु न करें। यदि हमन देशामिमानपर खोर न दिया और
 सच श्रिटिम विरोधको ही मासा अभी ता श्रिटिम शक्तिम अधिकार
 के दिन हमन-न कितन ही देवाकातक हो जायेंगे क्योंकि श्रिटिम
 ही देवामिमानको शैरशाश्रिरीमें काई मूष्यकी वस्तु नहीं ठहरता।
 पर तथा उन्नतक देवामिमानम बिहंगा सामनका कठोरतर विरोध
 न-आप ही रहता है। हम खेन रहे है कि थोड दिनाक कांग्रेसी गायनम
 टिम मासक माघ जो पाड़ा मेकशोक हुआ उममें हमारे भाई न जान
 न-बना किरण कग और न जाने क्या-क्या करन मग। हमें देशामिमान
 नीके उन्नतपर श्रिमीको भी दामा नहीं करना है।

यह कि प्रिय सरकारें पान्तोंमें कायम हुए तब बेगो मापाकी ममा
 ए प्रेमियोंका आपादन हम क्यों न करें? और हमारे नकरारें हम
 यमें उदापक क्या न हों? यदि अंगरेज जहाजी कम्पनियोंको ईश्वर

की सरकार भारतवर्ष तथा अन्य देशोंकी अहाही कम्पनियोंमें स्पर्धाधीन बने रहनाके लिए उनका टाटा भरकर सहायता देती है तो हमारी प्राचीन सरकार समाचार पत्रमिस्त्रोंका टाटा क्यों न भरें ? ऐसा झोमेके परचाम् देनी भाषाभाषक दैनिक पत्रोंका बहुत बड़ा सहारा मिळगा और व भी इस देशकी बड़ा भारी सम्पत्ति कहलान सगेंगे ।

आजके दैनिक साप्ताहिक मासिक आदि पत्रोंका संचालन कसम भले बन गया हो किन्तु वह अभीतक व्यवसाय नहीं बन पाया है । व्यवसायका-सा काम उठाना और सम्हालित हो जाना इस कच्चे मासम नहीं है । जिस दिन यह कला बचवा यह व्यवसाय पूरा कुछ आकर भार-पाँच पासदी साक्षात्कार भी निश्चित लाभ देनेकी योग्यता प्रकट करन लयेगा उन दिन उसके धनिक हम व्यवसायमें अपना भाखों स्वयं भगा हेंगे और उनकी - उनकी और कीतिरी दोनों प्रकारकी इवान-दारियाँ अपने मुनीमोंके बलपर बने मजस बसन लगेगी । किन्तु संकट चुमनि मजबूतकी तलाभी और बाराबारके बलपर बसायी जानवाली यह कला आज ता धम ही कही जा सकती है । अभी धमकी सीमाको यह नहीं स्पष्ट पायी । अत इम उपयोगी कहभोगी और समयके सम्देश-वाहक उपकरणके नाम जनता और शासनकी बलवान् सहायुर्भूत होनी चाहिए ।

समाचार-पत्रसे सरकारी महसूल बमूल करना सामयिक ज्ञानको दण्ड देना है और देती भाषाके समाचार-पत्रमें अधिक सरकारी कर बमूल करना इन हेतुक पामीन तक पहुँचनेवाले ज्ञानके धरनेमें रक्षापट डालना है । किन्तु ही यही रहा है । यदि कोई एक पीसका जनवार निकाले और २५ फीसदी कमीशन अपने एजेंटोंको दे व ता भी एक पीसवाले शासनके टिकिट ही उसे अपने अजुबारपर लयान पढ़ेने । यह तो १०० फीसदीसे ऊपरना मरवारो महसूल हुआ । शिखीमें दो पीसके दैनिक निवहन है । ज्ञान-वपन और विपत्तोंकी सम्पुष्टाकी दृष्टिसे यह बुरी

बात है। ब एक ज्ञानक निकलने चाहिए। किन्तु वो पैसेके अभावको
 एक पैसा डाकघरका टिकट बनाना पड़ता है और इस तरह ५०
 प्रामाणी मरकारी करके रकड़कर चुकाना होता है। भारत सरकारका
 काम है कि वह समाचार-पत्रोंके लिए इसमें भी बहुत मन्त्र टिकट बनाये
 या केवल अखबारोंके टिकट कहलाये और जिससे ज्ञान प्रामाणी ठक मन्त्र
 और मुविधानक हगमे पहुँच सकें। ज्ञानम दबगने और उमपर मन्त्र
 निय जानका यह सब समाप्त होना चाहिए, और वह इस तरह कि
 भारत सरकार बनका काम छाड़कर मन्त्र टिकटों-प्राप्त अखबारोंसे
 मन्त्रा प्रचार हेतु गीत-गीतमें होने द।

उम केवलक कपनको भी मानता है कि अक्सिडोइका योग्य और
 केन्द्रिकी कीर्ति बोकता और प्रतिभागीक पत्रकारत्वको जन्म नहीं
 दे सकती। किन्तु ज्ञानकी साधनाम इनकार नहीं किया जा सकता।
 एक नाम समाका ज्ञान उच्छसे उच्छ हा तो ना पत्रकार-कमाक लिए
 हुपम न होय। वह तो आवश्यक है। इसलिए सबप्रिय पासनोंके
 पत्रमें उचित पाठप विषयोंके साथ विरचविद्यालयमें सम्पादन-कमाका
 प्रियम देना चाहिए, और उपाधि भी देना चाहिए। यह विषय सा
 अपनमें जमी नहीं मुक्त पाया। ता भी हमें हम हेतम नम प्रारम्भ
 करने देना चाहिए।

भारतक ज्ञानम एक बात बड़े मन्त्रकी मोल रखी है। जबतक
 अखबार प्रसिद्ध पुरुषोंकी कीर्तिकाम-भावनको जमी-प्राप्त जारी रखता
 है तबतक के पत्रकारक हा मन्त्र भी पत्रकारका मन्त्रो मन्त्र किन्तु
 बनसिन्धी दुष्टिम पत्रमें दा कडको बातें छप जाये ता मन्त्र ५००की
 मानगिन्धी मोटिम हाबिर है। सब तो यह है कि मानगिन्धी नाटिम
 ना नाटिम है यदि मन्त्रो समाचार-पत्र निर्यात् तो फिर पत्रकार अस्मिन्धी
 वाचस्पता ही न रह जाये। मैं व्यक्तिगत जाक्रमपता बुरी बात
 मानता हूँ और ज्ञानक एरावतपर पामोलसोवक मन्त्रमें अथवा हेपपुन

बातोंके रूपमें म्युनिसिपैलिटीका कूड़ा-कूट होना जाना पसन्द नहीं करता। किन्तु साधन सन्वाधा और जन-सेवकों-द्वारा जन-नीचाक पथमें किन्तु गये कार्योंकी उत्तम और निर्भीक चर्चा आवश्यक है। पृष्ठा ५ वीं नाटिक कई अंगीम समी जनजाणीकी कुचसनेका प्रयत्न है।

इसी समय मुझे गरीब शिन्वी पत्रकारकी गरीबोका स्मरण ही आता है। कम बतन अधिक धन रातका कामरक और साधनहीन कठिनाइयाके बीच पत्र बलात हुए यदि किमी 'तीसमार' काँ सामक दैनिक अथवा सङ्गजनकी त्यागी वह यही और शरीर पत्रकारकी सवनाथ या काराकारक दिन बेचन पड़े ता हिन्दी पत्रामे एसा संघटन नहीं कि संकटम पड़े हुए किमी पत्रकार-बन्धुकी रक्षा कर मुझे वा पसके बाजार पङ्कनपर सहायक ही सुकें या समक जेस जानपर उनके परकी महापताका जायाजम कर मुझे अथवा उसके मर जानेपर उतक बाल-बच्चाकी आर देखनबामा कोई हा। एरोब पत्रकारके बाल-बच्चोंका घरबपुह ता आरक अनावाध्य ही हा सकता है। इस अवस्थाको इन सीध बरसना चाहिए। यह पत्रकारोके आर्थिक संघटनसे ही हो सकता है।

पत्राचे अस्तित्वके मापकी एक बड़ी बाधा है अनिबोठ छोट बर्मात्वाकी जिव अथवा साधन-हीनाका सङ्करपर निकसनेवाले मास्य दैनिक तथा अन्य सामग्रीवी पत्र। एस पत्र निरस्तते ही बड़िया कामरक रुपा देस अण्ड चित्र दे देंगे। काकी बटक-मटक चिया रेंगे और जामतवा गमाल किन्तु बिना पत्रका मृत्यु घटा देंगे। परिणामत मृत्यु घटाकर बटक-मटक जानके लिए वे स्थायी पत्रोंको बाध्य करते हैं। एसे पत्र बल ता मरते ही नहीं बाउ दिनोंमें मर बाल है किन्तु जेबके कोडाकी तरह गुड मरकर अस्तित्ववात्रोंको भी मरक-गपकी आर लीचने है। अतः पत्र-जगत्पर हमारा जियन्तप हाता चाहिए, कि बिना माचनोंकी अथवा साधनोंवाली गुतरनाक बर्मात्वा छोरीनी

और सड़कीको एयाधीक भोगमें कुछ स्थायत्व को जा सक ।

हिन्दी संभारका एक बहुत बड़ा भाग मध्यभारत और राजपुतानके
देशों राज्य है । जहाँ हर मो मा पचास मीलपर घासन बदल जाता है ।
य रियासतें प्रायः निर्भीक समाचार-पत्रोंसे घबराती हैं और उनका
प्रथम-निपट कर देती हैं । अपन ज्ञान चिरोरक पावका प्रतापन भी यह
रियासतें करती हैं किन्तु बड़ विचित्र तरीकस । य अवन पहलिसि
अवन राज्यस भा कुछ समाचार-पत्रोंका निकम्पन देता है प्रकाशिन
हल देता है किन्तु ऐसे पत्र जा राज्यक शासनका आभाचना मत्री
कर मदन राज्यकी सीमायें मा अवन बाहर अपनी विरय मत्री बना
सवन । उनक अल्पमें एम समाचार-पत्रोंका यह मरकारें कुछ ह्जार
रया माभाभा महापत्रा देती हैं और अपन राज्यकी पाठ्याभाभा
मादिमें भी उन पत्रोंके जानको मुबिया कर देती हैं । ये पत्र धरुणाम
क्याय जानवर भा अवनक घासनको आलोचनाक लिए निर्भीक न हा
राज्यकी रूढ़ि मत्री हुई जायदादकी तरह हैं । इनक द्वारा कष्ट भोगती
और पिउठी हुं रियासती जनताका बाबा नहीं पूर सकती । उन
जनतायें शासनक अधिकारको प्यास और भुज पैरा नहीं को का
मवनी । राज्यकी सीमाक पत्रोंके मंचालक सज्जन यदि ब बाहुं भी
ता घासनप नहीं सगड़ मचत क्पाकि बहीका शासन प्रजामत और
प्रान्तोंवर अवनमिदत मत्री है, अमो मा बहु निर्भुगोंका मरदियानर
क्याया जा रहा है त्रिमक अवनार अरुत ही भाड़ है । अत विदिप
नागतक पत्रों और पत्ररागकी जिम्नबायी है कि ब रियासता जनताका
बईका न छाहें और मिनिक 'दिनुम्रान और अजुन' को तरह तथा
'नवगोति और 'नवगवस्थापन का तउह लतरसि लेकक मी और
अधिक प्रयत्न करके भी रियासती जनताका माप हें । हम हिन्दी संभारको
अविमाम्य मार्गे तभी हम रियासता जनताक प्रति अपना कठम्य पूर
कर मवते हैं ।

मैं भरतपुर सम्मेलनक बसत एक सपना जितना या कि मुझके जमानमें
 हमार हिन्दो पक्षाके संघान्त्राठा भी मुझ-श्रमोंमें हों। आज मुझ हो रहा
 है और आप सब ही रहे हैं कि हिन्दो पक्षाके संघान्त्राठा विदेशके मुझ
 क्षेत्रोंमें विपत्ताई नहीं है। हमार तबन यही बेकारीमें भूखों मरने
 निश्चित मीतका लहरा से भूल मरकर से लेंगे किन्तु साहस करके मरना
 पसन्द नहीं करेंगे। जो लोग प्रजुएट होकर जूतेकी पालिष करने तकका
 साहस करते हैं। उन्हें म तो प्रसंगनीय पत्नी कह सकता। मरी नजरम
 यह काय भ्रमकी उच्च भाषनाओंमें गुमार नहीं। किसी पराधीन बसमें
 सम्मार्दिके लिए उच्चबसम बहोई जब वह उत्तरा और भयकरताओंके
 साथ लेने और उसमें बसके नवजागरण और समाजकी महान् उच्च-
 पुनरुत्थमें सहायता मिले। मरी समझमें नहीं आता कि हिन्दोके तरन
 विश्वविद्यालयका ज्ञानकी विमयी ऐसासा क्या साबित करते हैं। व
 उत्तरम जूनकर विदेशोते स्वदेशका गुर्रों देते लहरोंके लिए कष्ट उद्यत
 और सन्देहवाहकक नते पत्रकारका इतिहास बताते नजर क्यों नहीं आते ?
 हम विद्यामें हमारी लम्प्याई कुप न रहे। उस आयरणधीमा होना चाहिए।

अन्त्याम्य प्रात्याम ही नहीं बर्याबसमें उपनिषदोंम और विदेशम
 जो भाई हिन्दो पक्ष निकाम रहे हैं उनपर हमारी नजर होनी चाहिए
 और हमम उनहु प्रात्यामन मिलना चाहिए। शिक्षण अलीकाम हिन्दो
 पक्षाके निकालनेका आपोवन भी भवानीदयाकरो संघासा तथा अन्य
 मित्रों-द्वारा होता रहा। आपानम हमारे बिहार-निवासी बंगलमण डॉक्टर
 सहाय एक भैवरेडी हिन्दो और आपानी पत्र चलाते रहे जिसका नाम
 बाणन बाब इण्डिया था। पत्र निर्माक था। भारत सरकारम उन रोड
 दिया किन्तु हम लोगोंमें उस प्रोत्साहन क्यों नहीं दिया उन समय तक
 अवगत कि वह इतिहास भागतमें आता रहा ? मेरी विनय है कि आपनक
 दृष्ट देखके बहने ही हम अपने विदेशमें बने हुए हिन्दो पत्रकारोंको अपनी
 उल्लास दृष्ट न दें। वे तो मरैव ही हमारे क्षमि चाहिए।

अब एक बात और । क्योंकि सुन्दर विनोबाने एक बार अपने प्रबन्धनों में कहा था कि यह नहीं सोचना चाहिए कि यदि स्वतन्त्रताको मेना किनो बिना महाराष्ट्र प्रदेशके नाणेगाँव नामक गाँवसे होकर आयी थी तो वह फिर भी नाणेगाँव ही होकर आयगी और अपन लिए कोई दूसरा रास्ता नहीं लियेगी । वैसे सुन्दर सकेत है ! स्वतन्त्रताकी जगदीश्वरी किसी कबि और मस्तककी अपेक्षा अपना मौलिक है । इसमें मग्नेह नहीं कि बख्तवार न तो तोप या तख्तवार है जो रखपाठ करे न शासन है या विद्रोह-समा है जो गहरे परिवर्तन और डबसमाच करे । किन्तु समाचार पत्र ज्ञानका और घटनाओंका नियन्त्रक और संचालक तो है ही । हम मानमान रहें कि न जान किस रास्ते होकर भारतकी स्वतन्त्रता जा आयगी । अनेक आदर्शवादी और बन्धुओंके बीच हमारा कठोरतर आदर्शवाद स्वतन्त्रता के आकाशको तैयार होना चाहिए । ब्रिटेनकी मित्रताक साथ या ब्रिटेनकी मित्रताके परे यह पय तो स्वयं स्वतन्त्रता इडैगी । किन्तु हमे मजप्रभातकी तैयारीम तदुपाईका समस्त बल अनुभव करत हुए चौकसा रहना चाहिए कि हमके परिवर्तनको प्राप्त कठिन परिस्थितियोंमें हमारे ज्ञान और हमारी दूरबिम्बताका विवाला न निकल जाये । हम वह डे मकें का समयकी माँग ही और जिस देनके बाद स्वतन्त्र भारतीयोंकी पीढ़ीमें अपन बंधको पत्रकार समापन गव कर मकें ।

वैसे कि मैंने कहा कि मैं तो बिना तयारीक बीमारोके बिस्तरसं उतर कर बसा जाया हूँ अतः समाचार-पत्रों पत्रकार बन्धुओं और उनकी विभिन्न परिस्थितियोंका निरक्षण न कर सका इसक लिए मैं क्षमा चाहता हूँ ।

बम में अपनी बात कह चुका । काद्योक मिर्षों तथा स्वापत्र-मिति को मनक कल्पबाप ।

२०वें दिन्दी मुद्रित सम्पन्नकडे सम्पन्न
 प मा विन्दी पत्रकार परिपदके
 उभादि-बन्धे दिवा गवा म्पन्न
 १९१६



ब्रह्मसूत्री वपगाँठपर

बहार प्रांतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का आयोजन मुझे दिया उसने कि मैं आपका आभारी हूँ। मैं आपसे क्या कहूँ मुझे तो उड़के बहुत-से आइराफी पार आ जाती है। अब आप तरह-तरहकी खर्चा करते हैं ता बताइए कहा छिन् ।

इस तरह आज बह भरतका समय मेरे लिए उपस्थित है। श्रीमती गणपदेवी यादवका भी प्रमुदयाश्री अग्निहोत्रीन थी प्रयानवतकी शुभल और भाई महताओने क्या-क्या नहीं कह डाला। तीस वप पहले अब इसी तरहका एक संकट मेरे ऊपर आया ता मुझे बह दिन माच है राजश्रीका कैरो अबलपुर जेल्स छूना था। यह चार माच १९२२ की बात है। बडा-सा समूह मुझे ल खडा था। भाई वाबिन्दरासजी उस ममारोडके मायक थे। राजा वाकुलदासजीकी सजी हुई गाड़ोमें चार पोड बुते हुए थे और वाबु गोबिन्ददासजी कायकर्ताओक साथ मुझे लेकर आ रहे थे। जनतामें जाना वा सन्देश सुनाना वा और जान क्या-क्या करना था।

वाबु वाबिन्ददासजीक साथ गाड़ोमें बैठे-बैठे मुझे सूझा कि अंपरेबाक अक्यानत निकला ता गार्दीयता और मित्राक अक्यानत आ गया। और भाई वाबिन्ददासजी ता जेल्स सुपरिष्कारइष्ट ही गिनाई देते थ। जेल्स दरवाजपर जेबखालाने मुझे थे चिट्ठियाँ वा महीनो पुछनी वो कैलीक नाते मुझ नहीं रो थी। मैंन फेे हुए उमट लिख्यपोपर कुछ लिखना मुक किया था। वो लिखा था चार माच १९२२ को अबलपुरमें सुनाया था। और आज १४ अर्गल १९५ का आपका भी सुनाई पैठा

ही कुछ कठिन प्रसंग उपस्थित होकर है। मैंने सिखाया था उस सारे
 स्वागत समारोह और मुझे बन्दी करके ले जानेके दृश्यको यह मानकर कि
 अंगरेजोंका जेलखाना बाहर भी ज्योंका त्यों जेलखाना बन गया है।
 रस्मियाँ ये थीं :

य जबकि लय घोष के काँटे गड़े,
 लोहने ये द्वार सपों-से ढकी
 लौहकर आदध 'देव उपासना'
 बन्धु तुम किम तुच्छ पूजा को लगे,
 रैंच बर्फी ममता बर्फी बर्फीर-सी
 यह परिस्थिति का गुनहूनागा' बना
 बिर लड़े आत्मीय में बचन हुआ
 स्नह भरे प्रहार होना बना
 कठिन शिष्टाचार का सगर ऊगा
 मोह कैसा है कि ताका पड़ लखा
 बामना के सन्तरी एक का सचल
 हो रंगों के द्वार पहरा पड़ लखा
 या बहाँ 'सन', अब सदैव विक्रम की
 बह रहे हैं रस्मियाँ बुझने लगो'
 पी छर्येकें चार, अब मज मर हुए
 हृदय कहता है कि सिर पुनने लगो।
 बुर या, और भी भी कोस पर,
 हाथ वह आराध्य र्ज बन घन हुआ

१. रॉन्डिरी संग्रहो जन्मे सुबहलाना करते हैं।

२. बेसमें खुबेरीजको सनकी बारीक उपादन बानी तुगनी बनावेके लिए
 क्या क्या का जो बननेमें चार छर्येक हो। वा तुगनी लीनेके काममें लखी बाड़ी
 को और दिन-मरवे चार छर्येक बनना बहुत होता था।

छोड़ दो मुसकौ, दया होमी बड़ी
 मुक्ति क्या यह तो महा सम्पन्न हुआ ।

धो तीस वर्ष पुरानी बानीम फिरसे यही कहलको भी चाहता हूँ ।
 भरतकी बानीमें कहूँ तो

ये तुम जानहुँ मोर हित, ये सापब बड़ काय ।

मेरी इकमठवीं वर्षगांठ मनाकर आप मेरा सम्मान कर रहे हैं या अपनी
 इच्छाओंका ? आपने भाई मेहताजीको बध्पय बनाया । मध्य प्रांतीय
 सरकारके उद्योग-मन्त्री बध्पय हों इससे आपको प्रसन्नता होना स्वाभा-
 विक है । किन्तु मुझे इनके ताबकी बलक पुरानी बटनाओंमें एक बार
 जाती हूँ ।

सन् १९१२ की जनवरीमें मैं शीघ्रत स्वर्ध्व संवाबर राजकी भी
 दृष्टे और भाई मयिकबासजी कोबरके साथ नबीन प्रान्त महाकोदमकी
 प्रथम कटिसे नमेटिथेके निर्माणके लिए निबनी गया था । मेहताजी वहाँ
 बसास्य करते थे और सबधेस बकीलोंमें थे । यह भी गुना कि उस
 समयके स्पुडिधियल कमिश्नर बनार्थ जानेवाले भ्यक्तियोकी फेहरिस्तमें
 कमी-कमी एक नाम भी मेहताजीका भी लिखा जाता था । फिर मेहताजी
 विने करवरी १९२१ में । महारमा माग्नीने महाकोधलना बीरा प्रारम्भ
 किया । मैं वर्षा गया महारमाजीको फैकर जबलपुर आया । स्वर्ध्व
 भाई अयतासासजी बजाय महारमाजीके शौरेकी सञ्जलामें नायककी तरह
 साथ थे और स्वर्ध्व महादेव भाई बेनाई दास शङ्करके लिखनके लिए ।
 नायपुरसे राष्ट्रनायकका दम जब जाता तो तिबनीम विने मेहताजीके यहाँ
 लवके ठहरनेकी व्यवस्था की ।

तिबनीसे आये जबलपुरकी ओर जानेके परचाय् मुझसे कैम्पेण भी
 बनी आटर हो में कि मेहताजीग बधास्य नही छोडा है अतः उनके यहाँ
 महारमाजीको बनी ठहराया गया ? मेरा जिबेदन था कि माग्नीकन बनी
 गुन ही हुआ है । मेरा विबधान है कि मेहताजी जानें सब आबरन

केने के अपनेको असह्योपकी बाजीपर बढ़ाये बिना न रहेंगे। किन्तु
 विभोको इससे सन्तोष न हुआ और मे खुपचाप रह गया। ११ मार्च
 १९२१ में मैं विरझार ही गया और बिलासपुरमें सजा हो गयी।
 विरझार १९२१ में मेइताजीका एक काठ मुझे मिला। लिखा था
 "महात्माजीको मरे यहाँ ठहरानेपर आपको झाड़ें सड़नी पडी यह मुझे
 बनी-ब्रपी मासूम हुआ। मैं इस काठके द्वारा आपको सूचित करता हूँ
 कि मैंने बकास्त और जससे सम्बन्धित सारी बाकास्तएँ छोड़ दी हैं
 पुराने बरकोंका परिष्कार कर दिया है और सब सम्पूणतः काग्रेसके कार्यमें
 सठर आया हूँ। मुझे नहीं मासूम था कि मेरे एक मित्रको मेरे कारण
 अपमानित होना पड़ा। यदि मुझे महात्माजीकी प्रतिज्ञाका पता हीठा तो
 उनके ठहरनेकी अपने बेंगलैके बाहर ही व्यवस्था करता। मार्च मास
 आठवीं सब ती महुरे पानीमें उतर आया हूँ बिरबास करो इस पपसे
 नीटना सब मेरे लिए सम्भव नहीं है। सब मरे कारण तुम्हें कभी
 अपमानित नहीं हीना पड़ेगा।' पत्रपर पता लिखा था माधनकास
 बतुवैशी ईन्दी बारा १२४ ए और २० बी पोस्टटिकल विरझार, डिस्ट्रिक्ट
 वेत बिलासपुर।

सो उन मेइताजीकी अपने आजका सम्मल खुश है। इनके सन्प
 की थी कि मैं मुझे कभी अपमानित न होन देंगे और वे ही आज घेरकर
 माचारें बढ़वाने बैठे हुए हैं।

मैं मुझे तो हानि भी हुई है। वहीं जेलमें बन्धी दिनों (१९२१में)
 हिन्दीके मपुर और औरबरीत कवि पुष्प सैयद जमीर बनी 'मोर'ने
 बनजयगढ़ रायके बीषान छोटे हुए सजा होनेपर मुझे बघाई घेय ती थी
 और रायकी बीषानीके हटाने जाकर उन्हें एक बीड़ीके कारणानमें
 बाधारबनी ईनेजरी अपने मरण समय तक करने पड़ी थी। तो यह
 बालाबोका नेता मेरी हारोका ही जैसे कर ही गया है। ए माचारें
 मेरी हारकी प्रतीक हैं।

बढ़ोसि में आधीबाँर चाहता हूँ। छोटोंकी में आधीबाँर देना चाहता हूँ और इस समस्त समारोहमें मैं ईमानदारीसे अनुभव कर रहा हूँ कि ये पुष्प साहित्यपर भले बढ़ रहे हों। मुझपर बिककूल नहीं बढ़ रहे हैं। उन सृष्टि अगोपन भले बढ़ रहे हों जिनका आधीबाँर मुझे प्राप्त है जिनकी प्रेरणा मुझे मिलती रही है। उन्हींके चरणोंपर ये पुष्प हैं। मेरा वास्ता इन पुष्पोंसे बहुत कम है। समाज और स्तम्हिकोंके ये पुष्प मुझपर नहीं मेरे द्वारा साहित्यपर और गुण-अगोपन पहुँच रहे हैं। ये पुष्प उन तर्कोंपर बढ़ रहे हैं जिनकी जर्मनीकी दुनिया हरी है। जो मस्तकका पानी खेजनीपर उतारते हैं या राष्ट्र और मानवताके सकेतोंपर मस्तक उतारकर एन डेनेबार्गोंकी दुनिया बनाते जाते हैं।

यैन साहित्यकी सेवा की? यैन कोन-सी सेवा की? अपनी जर्मनीकी साधारणियोंमें 'तकप उठना इसल मुझे सेवाके एहसास से सार बिया। मैं लिखे बिना रह ही नहीं सकता था भत' लिखता गया और जो उप क्या है उतते अधिक बिना क्या जो कूहा-ककट पड़ा है वह क्या विचित्रों-बैबा इतिहास है? पटनाओं-बैबा जन-जीवन है? परिस्थितियों-बैबा आधिष्कार है? चीचों-बैबा अनन्त भूतकाज है? जी नहीं यह सब कुछ नहीं बुझकी साधारणियाँ हैं जो रीस उठीं तो स्नेह और सम्यक् बहला गयी और चीस उठीं तो बिद्रोह कहला उठीं। बिकारोंके संस्कार। अबतक जन जीवन निवर्तनकारी साहित्य बनते रहेंगे और अबतक उनमें आहृति मानव प्रकृति और मानव-भूमें ज्योंकी त्या उतरती रहेंगी तब तक अपनी सूरतपर आप छिद्रा होनेवासे प्रेमोकी तरह मानव कला और साहित्यकार टगा रहेगा बिका रहेगा। अस्पष्टकी पुत्रनेत्री इसी भावनाके अममें यदि आप मुझपर पुष्प उटाकर से बीड़े तो प्रभु आप वह पैरा अपराध न मानिए।

साहित्य सेवा? कलाका बड़ा अटपटा स्वभाव है। मूर्ति और चित्र की देगिए एनी भाषाम लिखे है कि दुनियाके किसी कोनमें वह मैत्रिए

सही पढ़ लेंगे ! बिना माया हुआ बछड़ा और मूर्तिपर उठरी हुई
 कन्या-विज्ञान नारी, किसी देशमें से आए, सब पढ़ लेंगे सब समझ
 लेंगे ।

संघीत और नृत्यको जीविए काव्यका वह क्रियाबोधर उतरना
 एक संघम और सुसजी विवेकोका पाठोंपर, मुद्राबोधर चरचापर सीसा
 और कहरके साथ संघीतकी मात्राओंमें धुलकर ठालकी तरंगोंपर यों उतर
 पड़ना बम देखिए कि जिस देशके संगीतपर नृत्य और मान उतरा है
 उस देशकी सीमा तक नृत्य और मानको समझन और पढ़ना होनेकी
 बाधरमयी पहचान उतर पड़ी है । राष्ट्रकी सीमा तक इसका कोई
 रकार नहीं चाहिए कि इसे सीमा तक पहुँचाय हमकी कोई रलीक
 नहीं चाहिए कि जोय पढ़ना हो उठे ।

किन्तु अन्त सीमाओंको रखकर भी साहित्य अभाग्य और वह
 सब देने लिया — काव्य है, कहानी है, नाटक है, उपन्यास है, बच-काव्य
 है किन्तु सब, वे सब कितने माहताब कि भाषाके ज्ञानके बाहर
 इनके भाषाओं इनकी कोई पृष्ठ नहीं जबतक इनका कोई पढ़नेवाला
 नहीं जबतक इनका अनुबाध न हो पाये । साहित्य देश-व्याप्त होमके
 लिए ही अनुबाधका मोहताब है, तब उस समय क्यों न होगा अब उसे
 विश्व-व्याप्त होना हो ।

मेरे कहनाका मतलब यह था कि बिना और मूर्ति बनाते तो कलाकारों-
 की अतीत विश्व-व्याप्त होती नृत्य और संघीतमें समपित होते तो कलाकी
 सीमा राष्ट्रीय देश-व्यापिनी जाती । साहित्यक पंचमार्गी होनेमें तो
 अनुबाधकी साधारणमें भाषाके बन्दी-गानेमें बन्ध एक बन्दीका ही पय
 ली देने प्रह्व क्रिया और बही न सचा । यह-यहकर किसी विशानुका
 एक घेर मेरी साधारणोंमें याशदिहानीको तरह जाता चढ़ता

जावरु की कृष्ण उद्यमे मे
 कापकी जान ली कमाने मे

धी लामोसो बयान सं अष्ठी
बाव लो दो, कर्षी हिकाने मे ।

मुझसे आप पूछें तो मैं तो आपके मुझगानका गायक हूँ । परि सुद्ध
और सज्जनाका स्नेह प्रभुका समपन और राष्ट्र-शुभका चरण बन्दन
कभी हो गया हो तो मुझपर युक्तिके गोबचन चारणका शौरव लेकर न
कीजिए मेरा चारणका अधिकार ही बस है । गोबचन-बारी तो मेरा
आराध्य है ।

बर्ष-बौंड लमारोम अष्ठी
१९४८

कवि-कुल-गुरु कालिदास

कालिदासपर इतना साहित्य लिखा गया है तथा विश्वके अनेक देशोंके अनेक विद्वानोंने कालिदासपर इतने बोल बहू है और आज भी यह रहे है कि उन अधिकारियोंके बालोंकी देखते हुए मेरा कुछ कहना निरा बचपन मान्य होता है। हाँ तुलसीदासजीका यह बचपन प्रत्येककी महा-गुण ब्रह्मका बल देता है कि -

मय जानत प्रभु प्रभुता मोई,
तद्वि कहे बिन रहा न कोई ।

अब मैं जो इस कठिन विषयपर कुछ कहनेको प्रस्तुत हूँ किन्तु बहुत डरकर ही कहना चाहता हूँ। विद्वानोंमें यह विचार है कि महाकवि कालिदास या तो ईसाक १०० बप पहले हुए या ईसाक १०० बप पश्चात् उनके कालमें और उनके बघवासी और परदेसवासी यह माननेके निराशय है कि महाकवि ईसाके पूर्वकी तीसरी शताब्दीके बाद अथवा ईसाके पश्चात्की १ठी शताब्दीके पूर्व हुए। विद्वानोंने यह भी बर्नायी है कि महाकवि कालिदासका जन्म उज्जयिनीमें हुआ अथवा कश्मीरमें और इनका अधिकार्य यह उज्जयिनीके पक्षमें व्यक्त हुआ है। इसी तरह उनके शब्दोंकी पेट्रिस्ट बनाने समय, जैसा कि होता जाया है किन्तु ही शब्दोंकी महाकवि कालिदासपरिवर्त प्राप्त कहा गया है। किन्तु अधिकार्य विद्वानानुसारसम्भव और समुचित महाकाव्यके, शान्ति और विश्वेवर्षीय भावके संपन्न और मानविकान्तिमित्र इन रमात्मक कालोंके और अनुसंधार नामक संघर्षके रचियता ही महाकविकी माना है। 'रघुवंश'-जैसे महाकाव्यमें महाकविने रघुवंशका ही बयान किया है।

रघुबंध नाम भी बार्म कि रामावधसे लिया गया है। वही बार्मोकीय रामायणके बालकाण्डके तीसरे अध्यायके १७वें श्लोकमें कहा गया है कि -

रघुबधस्य चरितं चकार महाबाम्मुनिः ।

इसी तरह उस बालकाण्डके १७वें अध्यायके ११वें श्लोक में -

कुमारसम्मन्वयैव धन्यः पुण्यस्तथैव च ।

लिखा गया है। इससे स्पष्ट व्यक्त होता है कि रघुबंध और कुमार सम्मन्व योमो नाम और उनक कथाकॉठी प्रेरणा बार्मोकीय रामायणसे प्राप्त की गयी है। यों सब तो बहु है कि भारतीय जीवनमें जिन-जिन धर्मोंका बहुत बड़ा महत्व है व है बार्मोकीय रामायण भीमद्भागवत तथा महाभारत। कथाके बचनमें जो आकषण जो इतम जो प्रबन्ध-बन्धन और जो विद्यालता आदि उसका सम्पुन रूप बार्मोकीय रामायणमें दिखाई देता है। बार्मोकिन अनुष्टुप्-जैसे छोट-छ छन्दको जितना रसवाही व्यवस्थाबद्ध और प्रसादपुष बना दिया है, उससे उनको चतुरताका ही पता नहीं चलता। सनकी बन्दनीय रसग्रहण धर्मिके दर्शन हुए बिना भी नहीं रहते। समाज-रचनाको दृष्टिसे मानव विकारों (स्त्री और पुरुषोंके रूप उनके द्वेष जलम आपसम होनवाली कटपट) और नाराके असह्य आंगुओंको आप बार्मोकीय रामायणमें देखा सचत है। वही आप नगर पकठ नदिया और समुद्रका भी बचन पावेये। वे यदि ऋषियाके आधर्मो-की याद नम सचते हैं तो ऋतुमाके उतार-चढ़ावक बचन-जैसी शान्त और मुखाके बचन-जैसी अशान्त धरतुओंको भी नहीं भूल। सपता है अस्तंवार, उत्प्रेषा उपमा रूपक और बेहोषाको हाथ प्रधान करनवाकी बचनना उनकी इतमपर ऐतती रहती नी। सुन्दर काण्डक तीसरे अध्यायमें सकाका बचन अवोष्यासे कम मीरबके साथ नहीं किया गया है। रामायणमें राजनीति है सधकोतेना प्रयत्न है यात्रा है और बीच बीचमें तिरव व्यवहारमें आ सकनवाली मुमापित रसोंकी छटा। इसलिये बला-सम्पन्न महाकाव्योंके इत महान् उद्गमकी संयोगी शहर कवि-मुक्-

पुद्गलदास-जैसे महाकविन कबाकी इस पवित्र अलकनन्दामें स्नान नहीं किया ऐसा कौन रहेगा कौन सुनेगा और कौन मानेगा। कासिदास-वे तो अपन रघुदास काव्यमें महाकविक इस श्रृंगारको स्वीकार भी किया है किन्तु जब रघुदास काव्य कासिदासके हाथों पड़ा है जब उनकी कृष्णमयी शोकर पर आया है तब मानो उसका इतिहासत्व झुल गया है और निरकरकर काव्य रस सम्पुल लडा हो गया है उस समय समता है कि प्रत्येक कथा मानो किसी कलाकारकी मूरतान्त है कि यदि वह छू दे वह क्षीरक दे दे वह उसे ममतासे देख ल तो वह कथा मानव-वचिमें असाध्यिया कीते और अमर रहनेका प्राप पा से। प्रत्येक बगन पड़ते समय हमें यह न मूल जाना चाहिए कि लगभग १६०० वर्षोंसे २००० वर्षों पहलेकी समाज-रचना किस तरहकी थी तभी हम महाकविकी रचनाके साथ रसधर्य करनके साथ ही सच्चा न्याय भी कर सकेंगे।

यों तो वह रही उज्जैन नगरी और भगवान् महाकासके बचनके लिए कोटि-कोटि नर-नारी वर्णनाय आते हैं तथापि उज्जैनके समारोहों मकानों विद्वक्तियों लक्ष्मणार्जुनोंकी नायक-नार्यायणार्जुनोंकी स्त्रीद्वारा और घर-घरसे अमर की मुगलोंका बचन तो कासिदासके पास ही मिल सकता है। विद्वत् (अथ स्वर्गीय !) श्री बुधकिशोर जनुबेदीका यह कथन बहुत प्यारा माकूम होता है कि - रघुदासमें इन्दुमतीक स्वयंवरका बचन करते हुए कासिदास न अचान्तरेषना एक बहुत सुदम दिस्तु आकषक बचन किया है। बीच बाहुबासे विद्याल-बधवाके मध्यकटिप्रदेशपाल अचान्तरेष एष प्रतीठ हात है मानो विद्वत्कर्मणि अत्यन्त तजरबी सूर्यको यन्त्रपर रखकर वाट-टाँटवर मुहर बना दिया है। वही कहते हैं कि मयभूतमें कविका अचान्तिका प्रथम उमड़ पड़ा है। मेघभूतमें वह रसाक है जिसमें कि अचान्तिका अर्थात् उज्जविलोके बाजारका बचन है। उम्हींके उम्हींमें उसका अनुवाह है -

'बाजारमें बुकानोंपर लगे हुए मातियोंके अर्धस्व डार करणों दल शीरिवा एवं कासिदासकी पत्नीकी मणियों और भूषणोंके डर देखकर यही

प्रतीत होता है कि समुद्रके रत्न बाजारमें जा चुके हैं। समुद्रमें केवल एक-ही रत्न रह गया है।

किन्तु मेघदूत काव्यमें तो कवि-कुल-गुरुन उज्जैनको निहाल कर दिया है। महाकविके समयमें उज्जैन बड़नगरको सङ्करी और अथर्वन चार कोस तक बसा हुआ था। वे कहते हैं 'हे मेघ तुझे उत्तर दिशाको जाना है क्योंकि तु अस्तकाका जानेवाला है। उज्जयिनी पश्चिममें है। टेढ़ा बाप होनेपर भी बिना उज्जैनके महक देले हुए तू बायं मत बढ़ना।' कविका कथन तो है कि -

"दियुरामरपुरितश्चकिंसीस्त्वत्र
 वीराङ्गनायां
 लोकापाङ्गपदि न रमसे लोचर्षवपितोभसि।"

जानो इस नगरमें रहनेवाली गारियोंकी बिजलीकी चपकसे चरित हुए अंबल कटालीके नैन-रतका यदि ज्ञानम्ब न मिया तो दौरा जग ही म्ब होगा। राजा अथर्वनसिंहजीने इन दो पंक्तियोंकी अपने मेघदूतके अनुबादन इस तरह लिखा है -

अथक धन नहीं अबकाल क
 बिजहु छटा चकचौप करे छिन्न।
 जो न अथर्वो अब वैभव लूँ,
 हक नाहक देह घराहि किरे गिन।

इस तरह यदि अवशिका अर्थात् उज्जयिनीने काशिराजको अपने पास रखकर अपने महान् सौभाग्यका अर्थन किया है तो महाकवि काशिराजने भी उस महानगरीका बचन करके अपनी नीला मुमिके कर्बनो बहुत अच्छे रूपमें बसा किया है। उस काशिराजने जिसमें देव बाल और पावनो अपने मुनकी कोई त्रिपि चार, नलन व्यक्ति और रघुनके शौगीकिक ऐतिहासिक और समयके कोई चिह्न पीछे नहीं छोड़े हैं कि जिनपर अर्थ-जनों शोष और शान बढ़ता जाता है। विज्ञानोंमें मत्तमेर बढ़ते जाते हैं। उस लनव हिमाचल और रंवाके उमान कवि-कुल-गुरुने अपनी

बीठा-भूमि अवलम्बना पुरीको बहुत ही अच्छे ढाङ्गमें बमर कर दिया है। ऐसा कयता है माना मासक-भूमिको इस पवित्र नगरीको बूकमें-से बिस्वके ज्ञानको आज भी काशिदासकी सुपुत्र्य आती है। और पौराणिकोंका रूप चाहे कस्मीरमें सुयमा-मय हो चाहे हिमाचलकी ठण्डी तराईमें और हिन्दुस्तानकी वाटियोंमें किन्तु महाकवि काशिदासने तो उज्जैनकी पौराणिकोंका बधन करके मासकनायेको निमज्ज रूपगविता छविको बमर बना दिया है।

जिन दिनों मैं बिलासपुर जेकमें सन् १९२१ में बन् या उन दिनों एक दिन स्वर्गीया धोमती सुमझानुमारीके पति स्वर्गीय छक्कुर अचमसिंह जीन जबसपुरसे अनेक पुस्तकोंके साथ राजा सस्ममसिंहजी-द्वारा अनुरिक्त काशिदासका उद्गुम्तला नाटक भिजवाया। मैं उन दिनों अस्पताल बाइमें रखा जाता था। रातमें पढ़नके लिए कुछ समयके लिए सातटेन बी जाती थी। उन दिनों बहूँकि डिप्टी कमिस्नर एक अँगरेज सज्जन थे उनका नाम था श्री डेवर। वे हर रातको कभी बिलासपुर जेकमें बसे आया करते थे सो उस दिन भी आये। मुझसे पूछा क्या पढ़ रहे हो? मैंने उनसे कहा 'उद्गुम्तला' पढ़ रहा हूँ। उन्होंने अँगरेजीमें कहा It is a little bit Unnatural जेकतानका हूँरी उनके इस कयनसे सन्न रह गया। उसन पूछा क्यों? श्री डेवरने कहा 'भला किसी मछलके पेटमें भी कोई अँगूठी भिज सकती है?' मैंन अनाबधक उत्तेजित होकर कहा आप मच्छेष्ट आप बेनिसको मूल मये। भला कोई अपने रानोंके बदलेमें किसीके अँगका मांस काटनको सत कर सकता है? मि० डेवरने कहा आपद बह युग ही ऐसा था जिसमें सींग ऐसी बातें लिखते थे। मैंने निवेदन किया कि मछलीके पेट में हाथी निकलनेकी बात तो काशिदासने नहीं लिखी। मुझे तो बह बहुत स्वामादिक मालूम होती है। किन्तु आज मैं मि० डेवरको प्रशंसा करता हूँ किउन भारतवातियोंने काशिदासके ग्रन्थोंको पढ़ा होगा? हमारी पाठप-दुस्तकोंमें काशिदासपर किउने प्रान्तोंमें पाठ रखे मये हैं। मि०

बेबरने कालिदास पढ़ा तो बा । और इसी समय कहूँ कि हमारे देशकी
 अल्पयुवकी लुब्धी बेलिए कि हमारे देशके विरहविद्याकाम्यके स्नातकोंमें भी
 पायब ऐसे बहुत कम हों जो मेटे और रोसपियरको न जानते हों और
 जो कालिदास और मधुसूतिको जानते हों ।

मयन सन्तोषके लिए मान लें कि कालिदास ईसाकी पाँचवीं शताब्दीमें
 पैदा हुए । एबुबख्तमें बङ्गाने इस्वाकुबख्त राजबुरानेका ही बचन किया
 है । क्युपिबर शास्त्रीकिये जिस इस्वाकुबख्तमें सीता और रामका विरोध
 बचन किया है उसी बंधके नामके महाकाम्यमें कालिदासने पीढ़ी-दर-पीढ़ी
 उस बंधका विरोध बर्नन किया है किन्तु अब हम शास्त्रीकिये काम्यसे
 उद्धृत कालिदासकी रचनापर विचार करने लगते हैं तब बहूँ हमें
 मूलत इतिहास और सांस्कृतिक चरित्र चित्रणकी अनेक आनक्यरियाँ
 मिलती हैं बहूँ हम कालिदासकी रचनासे मिलनेवाले आनक्यको सर्वथा
 मूल मानते हैं । मालो उस समय लकोपत कहनेको हो पड़ती है कि आजसे
 १५ • १६०० वर्ष पहले क्या ह्यारी संस्कृतिमें काम्य इतना आनक्य दे
 सकता था जितना कि कालिदास और उनके समयके आब-यासके कवियोंकी
 रचनाओंसे मिलता है । जो प्रतिभा इतनी अताग्रियाके बाह भी बूढ़ी
 नहीं बबती उसकी उत्तमताके विषयम सगदेह कैसे हो सकता है ।
 कालिदासकी रचनाओंको पढ़कर ऐसा समता है मालो वे किसी व्यक्ति
 अथवा कुछ ब्यक्तिओंसे अत्यन्त प्रभावित होकर लिख रहे हों और वे
 व्यक्ति पुराने जमानके न होकर उनके जमानेके ही हों । अथग्येकी बात
 तो यह कि भारतीय-साहित्यमें कालिदास कविके रूपके सिवा अग्य किसी
 रूपमें अविचित नहीं । यद्यपि यह मुना जाता है कि वे राजा विक्रमादित्य
 अर्थात् चन्द्रगुप्त द्वितीयके राजदूत भी थे । महामारतके शान्ति पर्वमें स्पष्ट
 ही लिखा है कि—

सर्वे त्वागा राजधर्मेषु रथाः

सर्वा दीक्षा राजधर्मेषु पुण्याः ।

सर्वा बिद्या राजधर्मेषु श्रेष्ठः,
सर्वे लोका राजधर्मे प्रविष्टा ॥

परन्तु कालिदास की रचनामें कुमारसम्भव पड़ते समय—

अस्युत्तरस्यां दिशि दक्षताप्या
हिमालया नाम नगाधिराज ।
पूर्वापरी तोपमिधी नगाद्य
रिपतः पूषिष्या इव मानदण्डः ॥

पूषीके मानदण्ड नगाधिराज हिमालयका बचन कालिदासकी वालीमें मुनके यह श्याम ही नहीं रहता कि हम किसी राजनीतिज्ञका मित्रा बचन पढ़ रहे हैं। यद्यपि कालिदासकी रचनाओंमें, उनके हर प्रत्यये ऐसे बचन हैं जिन्हें नीतिकारों तकने उद्धृत किया है। और जो साक्षोंकी शोभपर है वैसे उद्धृतके बचन —

यद् हि सर्वत्र गुणैर्दिधीयते

अथवा कुमारसम्भवका यह बचन—

न केवलं यो महतोऽप्रमापते,
श्रज्जलि तहमाश्रुपि यः स पापमाक् ॥

अथवा मेघदूतका यह बचन —

कस्यात्समर्थं सुरसुरवर्तं बुधमकाश्वतो वा
न वैगण्ड्यपुरि च दाता अश्रुमिहमेण ॥

या उद्धृतकामें कही हुई यह वाणी—

सहजं किल यत् बितिम्बिन
न तसु तत् कम बिचजनीयम् ।

जो कालिदासकी रचनाओंमें ऐसे स्पष्ट जहाँ-तहाँ भर है परन्तु नारदकी नार ब्रह्म व्यक्त करनवाली शोषामें जब इन्दुमतीकी पृथुका बचन किया जाता है और राजा अश्रुके बिलापको हम पढ़ते हैं अथवा जब राजा शिलाय कामधेनुको पुरी नन्दिनीको बचने जाते हैं तब

कालिदासकी प्रतिभापर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। इसी तरह जब हनुमतीके स्वयंवरका बलन कालिदास करते हैं तब विश्वके तादृश्यकी पुकारपर मानो उनका हृदय बोल उठता है।

तब अंगराजके ऊपरसे बुद्धि हटाकर हनुमतीने कुमारी सुनन्दासे कहा — जाये चलो। ऐसा नहीं कि राजा सुन्दर न वा ऐसा भी नहीं कि उसकी वह सुन्दरता हनुमती मसे प्रकार देख न पायी हो पर (बात केवल इतनी है कि) लोगोंकी इच्छियाँ मिश्र-मिश्र होती हैं।

मृत्यु, विलाप सम्बन्ध — इन सबके बीचमें हम रसकी बहुते देखते हैं और रस-सीमा बांधी बिना ठहरे ज्ञानम्बका कोप उँड़स्यी चली जाती है। कालिदासने तादृश्यके दोनों अंगोंका बलन किया है — पुरुषार्थका भी एवं प्रेमका भी और इतिहासके नायकान् पात्रोंमेंसे अविनस्वर रसकी धारा बहने लगती है। कालिदासके नाटकोंमें इतिहास खोजा जाता है किन्तु वे प्रथम और अन्तमें नाटक हैं। कालिदासकी भाषा अपने-आपमें एक अत्युच्च धेनी बल नहीं है। बड़ी हास्य अक्षम्येकी तरह नहीं टूट पड़ता विलाप रसम अदायी करने नहीं जाता और परिचाम अन्तमें छिपाकर बहुतेके किये नहीं रखा जाता। कालिदासकी रचनामें कसा है कसाबाजी नहीं। किन्तु शृंगार-रसका इतना मस्त गायक संस्कृति और धीलके किनारोंके बीच स्नेहकी धाराकी बहाकर ले जाता है, यह देखकर अक्षम्ये हुए बिना नहीं रहता। प्रामं यह होता है कि परिस्थितियाँ कविकी रचनाके सोरमको छात्री जाती हैं। सगता है मानो परिस्थितियोंमें पड़कर कविकी भाषीका तेज उठर गया है किन्तु कालिदास का तेज नहीं भी उठर नहीं लगता। कालिदासम अपने पात्रोंके चरित्रोंमें परिवर्तन नहीं किया। सगता है अगहन जीवन्मयो सम्पूर्ण ही अहक विद्या है उसे विरतोंम विभावित नहीं किया है। मानव-जीवनके अत्यन्त पारसी कालिदास इसलिए कहे जायेंगे कि मानव और मानवीक मनोभावोंको व्यक्त करनेमें उन्होंने अनक मनोरथाओंका वर्णन किया है। आज भी

श्रुति कर्मके आशयसे बिना होती चतुस्तथाका कोई बचन पड़ता है तब उसे चतुस्तथा और उनका सोम्य याव नहीं रहता वह बुरे कथकै बहते हुए मीनुरोमें दूब-दूब जाता है। सब बात तो यह है कि उन जोरोंने मी कालिरामको बहम समझने और उनको कलाको परजनका प्रयत्न किया है वो संस्तुत भाषा बिमबुल नहीं जानते। इन्हींमें कसमें बयनीमें कहीं उनको कलाके पायक नहीं। कलाकारको नुबी किसी स्थितिको अनुभव करनमें ली है ही, सबम अधिकतो उस अनुभवको कलमपर उतारनमें है। संशोतकी तरह जब कलाका रस स्वर्ण और म्यंनरोंके बाहनोंपर बैठकर धोठा या पाठकके मनमें नयनमें और जीवनमें हिनोर ली उठने लयता है तब उसके हामसे जानका भाव-बण्ड छूट-छूट पड़ता है। उसे जान ही नहीं रहता कि वह ईसाकी पाँचवीं शताब्दीमें है वा विक्रमकी बीसवीं शताब्दीमें। मेघदूतको छोड़कर कालिदासकी रचना बचनका सरय नहीं। सरयको सुकोमल और लठि प्रखर बचनना है। श्रुतु-संशारमें श्रुतु-संशारपरिस्थितियोंके आरोप है बहुत बँठे बहुत मोहक बचनना आक्यक। किन्तु कुमारसम्मनमें जब मैं अपने देवत शिव और पावतीका बचन करते हैं तब लगता है कि कालिदासको बचकाय नहीं है कि सीमर्दके निवा और किसी बस्तुकी ओर बाँध उठाकर मी देख सके। बिम तरह बह-भुनीके बाद आत्म-ध्यामि और समामना बिना बुलाये बनी बातो है और ऊँचे हुरमके भावरी हिस्योंका पठा मीगुओंमें देने क्यती है उसी प्रकार स्थितियोंका परिवर्तन उनको रस भाषनाको धग धग ग्योठता पल-पल उबमाता-या रहता है। सब मी है यदि कविकी बापी रमम बनिमून नहीं है तो त्रिदि-वार-मनकोंकी साम और मानी-बनाओंको धरन-क्रियाका अर्थ ही क्या रह जाना है ?

यद्यपि पण्डितोंने कालिदासकी उगमाओंको खोज बठाया है। उनके धरादरब उनकी कविताम निःसन्देह मरे हुए हैं। मूम तो उनको रचना-के पारोंके साव समस्त बीषणको निवाहते हुए मी कवि कुल-गुलन मी

सहानुभूति विद्यापी है बहुत प्रिय सपत्नी है । कपता है माभो अपने पात्रोंके स्वभाव-व्यक्तम अपने क्लमको उगहोन अपने पात्रोंकी जीम तक बना दिया है । यह भी कम सबकी बात नहीं कि शृंगारके परम नायक होकर भी उनके मीति-व्यय और सुविषयी उनका प्रकृति वर्णन और वस्तिपासे नपाधिरात्रों तक उनकी कविताकी आश्चर्यजनक पहुँच एकदुस्तम-सीती निरय-देवताका निर्माण मैघदुर्तम मानवाला महाकाव्यका स्वल्प उनके द्वारा विभिन्न छन्दोंका उपयोग सबको देखनक बात ऐसा लगता है कि कालिदासकी रचनाएँ अल्पमन मात्र नहीं है वे अपनेमें मुमके ज्ञानकी विस्तृत ज्ञानपासे भी लिये हुए है । इससे वे शब्द-कोषसे ऊपर विश्व-की-प-वीसी बन गयो है । इसर भारतमें हीन संरस्य मनाये है जिनसे हम भारत-वासियोंके स्वभावका प्रतीकरण होता है । पहला है बुद्ध भयन्ती बुद्ध है स्वतन्त्रता संज्ञाम अर्थात् १८५७ की क्रांति और तीसरा यह कालिदास उत्पन्न है । रूप है इतना सम्पन्न मालवाकी प्रसिद्ध नगरी सञ्जयिनीसे है । इस तरह विश्व-काव्यमें भारतके इस मध्य भागमें इस मध्यदेशन कालिदासके रूपमें हिस्सा लिया ।

कालिदास हम विराहरीमें आते हैं जिनमें छोटी-बोटी परिस्थितियोंमें छोटे-छोटे करि तुफें जोड़ते तुफें मरोड़ते और तुफें ताड़ते दुष्टिबोचर होते हैं । इन तरह कालिदासको महत्ताका एक सिरा उन्हींकी कविताके कारण संसारके बोन कानेमें व्याप्त होता है तो उतका बुद्धरा काना भारतके समस्त देशमें व्याप्त उनकी रचनाको जोर-विपताके रूपमें देशमें प्रता स्थापित करते हुए उन छोटे-छोटे कवियोंकी शोंगड़ाके सामन लरा है जो आज लिय रहे है श्रियता सीमन रहे है और इस तरह कालिदास-मेदिनी तथा मध्यदेशक विरिभारों और मूलशब्दों गौरवाम्बित कर रहे है । कालिदास की रचना यह भी सीत करता है कि इन देशकी रचनाका ज्ञान समस्त अल्पमन और अनुभवकी रचनाके प्वालमें भरकर अल्पमन और अनुभव प्रदान करना है न कि रनोंके मरय होकर मोरस हो पढ़ना । अतः कालि-

धर्मका उत्सव मनातेवासी येही धर्म सब कालिदासकी ओर मुके सब
 करने अध्ययनपर, अपनी पहुँचपर मानव-मानवी वस्तु सभी तथा धर्मों
 ओर सतोंके प्रति रहनेवाली अपनी सहानुभूतिकी ओर एक बार नजर
 बकर डाक से । वह अपने विद्वानों ओर कीमतोंको विरचके छिछोरेपनसे
 पराजित होने के बजाय कालिदास-आलीन रसमें क्यों न बुझे ?

यह सब है कि बहनें मुझे रचनाओंका रूप भी बहसेगा किन्तु पुष्पीने
 यदि प्रति बपकि मौसममें ऊपनेवाली पास है तो कभी भी बुझे न होने-
 वाले मूय-व्यग्रमा ही है । ये कालिदास-उत्सवके आयोजनकी देखाका परम
 गौमाय्य मानता हूँ और इसकी ओर देज तथा विरचका ध्यान खींचनवासे
 बहनोंकी भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ ।

कालिदास समाज, बीकानेर
 १९२५



अभिभाषण

स्वागतकारिणीके समापति महोदय प्रतिनिधिगण और बहुतो तथा मादयो

आपने मुझे अच्युता देवर शामद अपना एक वर्ष बरबाद कर दिया। मेरा स्वास्थ्य बँटा रहता है आप जानते हैं। इधर एक वर्ष मेरा स्वास्थ्य बहुत ही खराब रहा। आपके सहबोधका बल पाकर ही घायद मेरो कमीकी पूर्ति हो आये। साहित्यके नयाधारापर बढ़मका बल तो मुझमें नहीं है उसके दरबाजे तक आपकी आज्ञासे आ गया हूँ। आपकी इन कृपाके लिए धन्यवाद।

संस्कृतिकी माँग है कि जीवनको देखने समय हम स्मरण रखें कि मृत्युका अपमान नहीं हुआ एगोबीकी उपेक्षा नहीं हुई संघट-अगुता उपहास नहीं हुआ विद्वत्ताके प्रति हम उद्दण्ड नहीं हुए और नुली तक बढ़ती बलि-मावनाकी ओरसे हमने भयभीत होकर भाँते नहीं भूँव भी।

रबीन्द्रको लोकर हमने शताब्दियोंकी प्रतिभाका वैभव संक्षेप बोवा भारतीय साहित्यका आन्त दान छोया भारतीय भाषाम बिन्द-सतह्वार, बिबरसे बीरुर्नवाका मानो स्वयं भारतवष लो दिया। हमने प्रसाद और प्रेमचन्दको लाकर जो कुछ छोया वह एक बपकी कसक नहीं है मय है वहीं एक खरीकी बसक न हो। मूरदात और पीरानी मिटामकी हम ठीन शताब्दियोंमें नहीं खीठ पाये प्रमादकी मिटागवा गिधर हमसे व प्र बीसे लीया या लकेया ? और प्रेमचन्द ? हमारे खहुराठी जीवनको माँगेके बीवनके साथ निकाकर सम्पूर्ण राष्ट्रपर एव बानीका अभिवेक करलवाली हमारी लोच-बया बारा रक गयो। और जिन दिनों हगिहारकी

स्थापना-मिति टूट और बन रही थी उन्हीं दिनों हमने अपना मायाका
 यह राष्ट्रीय कवि लोया जिसपर हमारी बाणीको उन दिनों अभिमान
 था है अब देशभक्तिपर कृपम चलाना करनेपर कठोर संकटोंको प्योतना
 होगा वा। इस रूप हमने पण्डित माधवरावजी सप्रेके बरद शिष्य और
 हिन्दीके ज्ञान-साधक रायपुर निवासी पं० रामव्यास त्रिवाणीको लोया।
 प्रतिभाकी अमरचरित्रें उड़ानके पहले ही यमकी आसमें पकड़ लिये जानेवाले
 हेमचन्द्रको लोया—अपन उत्तम साहित्य-लेखक और प्रकाशक धीमुत
 बाबुरामजी प्रेमोके पुत्रको। इन्दौर राज्य मासवा और मध्यप्रान्तके मुन्नी
 साहित्यिक और लोकोपकारी धीमुत मूरजमजी जीनको लोया। बुन्देल-
 खण्डकी अग्रणीसे हिन्दी-साहित्यको मौलम-मुद्रित करनेवासे धी घामीराम
 व्यासको लोया। और बुन्देलखण्डके गौरव तथा हिन्दूके मुनवि द्वारका
 प्रकाशकी 'रसिनेत्र' को लोया। इसी रूप हमने साहित्य और राष्ट्रमेकी
 धी चम्पामजी जोहरीको लोया। आइए, इन और उन सबको हम
 यज्ञके पून बर्दाये जो हमम बिदा हो गये हैं।

यह रूप संसार भरके लिए संकटका है। अपने अपने आरणों और
 रोगोंकी रत्ना करनेके लिए देशकी महान् जातियोने अपन निर संकट
 प्योत रसे हैं। विश्वमें सत्य मूल उठा है रक्त बहु उठा है। निर सस्ते
 है ईमान मईवा हो गया है। प्राण हथेलीपर हैं और छात्रिका शब्द
 मानी यज्ञ कोसोंके धी भाग निकलना चाहना है। यदि साहित्य ओवनसे
 विरहीत कोई वस्तु नहीं है तो हम इन अविशेषान और इनमे बाहर
 शयें-बायें देख रहे हैं कि आज वे मूर्तियां हमारे पास नहीं हैं जो बहाने
 एकत्रित हो बायें वही सम्मेलन कहलान लगे। और इनके बन्नीयुद्धमें
 एते आरके द्वारा आया हुआ यह समारविशेष सम्मान माचारीकी
 तरह बैचल कठोर बतव्य और दायित्व ही रह गया है।

इन रूपके हमारे सम्मेलनके अन्त्य महीद्वय अथवा मासनोंकी उप
 दनता होम्नी समय और अथवा जान और आरामकी परिधियोंको दूर

फेंककर इसके मित्र-मित्र स्मारकोंपर आकर हिन्दीका अछड़ आवाज —
 और हिन्दीके राष्ट्रमाया-स्वरूपपर अपना मत व्यक्त किया। मुझसे यह
 सेवा कैसे बन सकेगी? अतः यह: मंच ऐसा सजता है, मानो मैं अपने
 स्वास्थ्य और अपनी कठिनाइयोंको देखते हुए हमने कामका म हाऊँ।

अपने साहित्यके पीछे अनिर्घाम चला आ रहा है। अपत्तुके त्रुटियोंने
 लोच-भीषणमें फेर-फार करनेके लिए जा कुछ कहा बाकीके द्वारा वही
 बाकी संवृष्ट होकर साहित्य बहुमायी। साहित्यमें दो धाराएँ रही हैं।
 एक वे हैं जिन्होंने बहुत कहा है और तुलसीदासजीने जिनकी ओर —
 'तवपि नहे बिनु रहा म कोई कहकर संकेत किया है। वे ज्ञानके बनी।
 दूसरे वे हैं जिन्होंने बहुत सहा है। वे अनुभवके बनी। ज्ञान अपने
 प्रति सजब होता है और अपनी प्रवृत्त पहुँचके अन्तर्धामि भी अपनी
 सीमा-बद्धताकी साक्षारी व्यक्त किया करता है। अनुभव अपने
 अस्मितामें अपनी सीमा छो चुकता है अतः वह बोध चाहे बहुत
 कम पाये संगीतकी तरह ससके आत्ममें विराम नहीं जाता। आनिर्घो-
 का हम विज्ञान कहते हैं। ज्ञाने-आपको छोप हुए मनोविषयोंको हम
 सप्त कहते जाये हैं। धर्ममें अच हाते हैं और चाहे वे काम्यके ही
 अर्थ क्यों न ही अपनी आगे डकेले बिना वे अपनी आजार पर
 विराममें सिद्ध नहीं कर पाते। संगीत है आवाज ही है स्वर ही
 बिन्तु लयका मुहताज नहीं। अतः अपको काशी पीछे फेंककर अपनेको
 पाया हुआ-सा ज्ञाने बढ़ता है और अर्थोंके अस्तित्वकी तरह सतवा
 आत्मन्त नाम रक्षण गाना जाता है। इसी काम निरन्तर अपनाओ जा
 कुछ दिया है उसे हम साहित्य कहते हैं। विराम-निर्वाताकी तरह साहित्य
 निर्वाताकी कुछ अस्मिताके और आताकी तरह निर्वाताके पथम कुछ
 साक्षारियाँ भी हैं। किन्तु इस मातृत्व और निर्मातृत्वसे आजका जन्मकार
 क्षेत्रे ऊब उठ है। अब साहित्यिक कह रहा है कि उसे साक्षर-नूरत और
 आचनकी रचनाियाँ विज्ञानके लिए छोड़ दिया जावे मानो वह विचार

पत्रके तपोमय जीवनस उच्च गया है और उसे विधाम चाहिए । विधाम चाहिए — इसलिए कि उसकी स्वयंसेविका विरहकी तीन शक्तियाँ बढ़ी हुई हैं ।

एक इंडीनियर है जिसने सिद्ध किया है कि उसके आदिपकारोंको प्रमुखाके द्वार कक्षाकार मसदाय है । मशीनसे बने खाद्य पदार्थ मशीन से निकलनवासे प्रथम मशीनसे सुनाई पड़नेवाला संगीत मशीनसे बाने-वाला संवाद मशीनसे परतोंपर फँके जानेवासे अभिनय इन्हें साहित्य-निर्माताके सामग्न रखकर इंडीनियर मानो मंत्रित बोल उठ्य है कि कहीं है साहित्य ? क्या अपनी कलम धरे पास रहन रखने और मेरी भरबीपर कभी धर्मोसे और कभी बेदाम रोग-हँसनेके सिवा उसका कोई कतम्ब बाड़ी है ? इंडीनियर यहीं नहीं ठहरा । उसन अपन विज्ञान स्वरूपको बुद्धसेत्रोंके कर्मों व्यक्त कर मानव और उसके साहित्यको बुनौती यो है कि वह केवल उसकी मरणोपर इतार बनाकर मर जान और मरनको लोहार करते जानेकी शीघ्र मात्र है ।

दुनरा है राजनीतिज्ञ । उसने सच्चि और विग्रहके क्षेत्रोंको तरह, साहित्य और साहित्यिकोंके बँचन और शरीरनके हाट बना रखे हैं और बाद यानी 'इत्य'के छाने-बानेसे बनी अपनी चापरके नीचे विरहकी कलमोंको बाँध देनेका आयोजन किया है । उसकी आज्ञा है कि कियो वह जो ये चाहूँ और वह न सिखो जिसे ये न चाहूँ । वह प्रासिद्ध है, वह माओ है वह साम्राज्यवादी है वह बाल्येविक है । वह क्या नहीं है, वह क्या नहीं हो सकता ? 'कहते हैं क्रीस लोडिए और जाह कीजिए' पर स्वर — राजनीतिक और आर्थिक हाटमें बिके पठैब साहित्यिकक लिय परम सत्य साबित हो रहा है ।

तोसरा है मनोविज्ञान । मानव पड़ा हो या बेपड़ा श्रापी होनेके कारण, मनोविज्ञानके परम उपहारों यानी हृय शोक घृणा मद मोह प्रेम और ईपसे उसकी मुक्ति नहीं है । मनोविज्ञानका दावा है कि यदि कक्षाकार

अन्तर्मुखोंको नहीं लिखेया और बीबनके विकारोंसे उत्पन्न पुरिषयोंसे भी सुबधा सुरुमा ठा उमका बिदबकी समस्याओंको सुमझाकर बीबिउ एय कठिन हो जायमा । कलाकारके पास है हो क्या यदि वे मनाबिगाले सुद्योमल कोगल नहीं है ? अत मनोबिज्ञान कलाकारको बाने एय अहित समझता है ।

क्या ईबीनियर एअनोतिज्ञ और मनोबैज्ञानिकना सामना हव एसे बातसे कर से बायेगे कि हमारे कलाकार ऐसे समय लखोमी भावनाएँ रमीली कबिताबा और बिकारकी गकिवमोंसे भिनकती रचनाओंको लेकर साहित्य-सूजन करते रहुँ ? सूझके बनी साहित्यिकने पधु और पतिपत घात हुए और पले पहमते हुए मानव प्राणीको अपनी सूझोंसे अपना बान्-निर्माण करनके लिए आरभावसम्भी बनाया । क्या आजका साहित्यिक एय कलना चाहता है कि मरी गकी हुई दुनिया कुछ ऐसी बेठरतीह बन गयी है कि इसका बोध अब मुमके नहीं संभवता और कोई आकर अब एय बायका सेभासे ?

एव क्या कलाकार बिषयको इस सिनायतके लिए मोझा देना चाहए है कि बिन सूझके बनीके पीछे खककर बिषय इतनी दूर तक बाय गिर गयी भावने-मानकी विकारों-मरी परम्पराकी मोल मरना चाहता है वो घाटावियों मुमएह करने और आज संमर्षक बोध-अपबीधमें छोड़नेके अपराधपर बिदब उसे मोझी क्यों न मार है ?

पर बात पहीठक नहीं है । बिताउका रकठकर बसुल करबबाओ भावनाको हम साहित्यिकोंने प्रेसका नाम से रखा है । और गारी कर्ने बिषयको देपनमें गर अपनी अवृष्ट भासनाको साहित्यिक नाम देकर बुमानके प्रयत्नमें है । कहना कठिन है कि वह सुझती है या और अविश बापुत हो उठता है । गारी बीबाठी रमयो हो गयी वह पुयी भी है, माता भी है इन्नु कलाकारकी उगाठना रमयी करबर खककर बाठ एयी है । क्या यह प्रमके मन्दिरमें प्रतिमाके बुकोमल आदिष्कार है वो सुझने

बापमें पुत्रोंकी तरह मसह्राय निज-निजतर युग-युगक विद्याक मन्थक
 पर मून रहे हैं या यह हमारा वह साहित्य मुन्नन है जो हमारी तरलार्थकी
 बाबू जमीनकी आर पत्तनोन्मुख कुलकठ आना मिय कर रहा है ?

कदाचिन् साहित्य यही भा ठहर गया जाता । यह तो भाये बडा
 बडना उसका स्वभाव जो है । चाहये कि स्वाममें बाजारमें उसने अपनी
 रेटिर्वेका सामान बेच विना और प्रतिभाके बाजारके अपने कित्तनके
 किये कायज कृष्ण और अन्य जुरोद साया । इतर रचना तैयार हो
 यमी उबर बाता और प्रशाताकी तलायमें उसका मन भूम बला । जन
 साम्राज्य और प्रभाव मानो अपने इस प्रतिभा-बीबी गुलामकी प्रतीलामें
 प । इत हाजिर मिसी बोली समय लपो और इसन अपनी पूंजी अपने
 मानिककी मनोभावनाओंके हाप बेच दी । उस समय कुछ मनस्वियोंकी
 कर्ममें यह ऐसी हुई कि वे बनिक कहर या राज महूरपर बिकनेसे
 इनकर कर हैं और अपन कोमल या प्रखर बिल्लनके निमक बैमबको
 मानव-विशोह और मानव-विकास आप्त करनक काममें साथे तो
 बिची हुई कृष्णका यमी बिल्लन इनकार करनवाणी कृष्णक शिक्षा
 बहानकी रचना करता है और एसा कुछ सिखता है जिससे आबाय
 कर्म बसहित हो सके । यह बैमबवानकी क्रेतिकी बूतानक मुनोमके नाते
 निमक कर्मोंके किये, उन कारागारका पहरेवार बन जाता है, जिसे
 निरपकी सरीबाक बनवान् न हो जटन देनके किये बैमबशील सक्तिर्वेनि
 बनाकर रख डोड़ा है ।

जगतमें भाय कपनर पुत्र जंमप जलनसे रोहनके लिए लपो हुई
 भापके पासका जंगल इनलिए काटकर फेंक देना होता है जिससे उस
 दूरेको लीपकर लगी हुई भाग सार कपनकी भस्म न कर पावे । अधो-
 मुकी साहित्यकी मड़कीनी बाबूके साथ भी हमें यही बरबहार करना
 होया । उस भापकी बड़ानेमें आत्यधिक निवट पड़नवाले कुछ साहित्यकी
 हमें स्वयं काटकर फेंक देना होया । उस साहित्यका एकमात्र कर्मूर यह

है कि वह साहित्य और समाजमें लगी हुई सभ्यताका जो भागके बहुत निकट है और ऐसा भङ्गकीला है कि जिसके कारण लगी हुई जाय बड़ सकती है ।

प्रतिभाशील साहित्यिकका पक्ष कड़वा भी तो है । किसी साधनाशील कलापर प्रतिभाहीनताके आक्रमणका वह खचित समय होता है जब अपने कान्तिमय विचारोंके कारण खनिक उससे बिचड़ उठते हैं और उसे साधनहीन रखकर शरिख्य प्रदान करते हैं । साधन उसे कर्दियोंसे ऊपर पाकर समेट करेता है और ऐसा कोई कष्ट नहीं होता जो उसकी सूझके प्रदानपर उसे बिया न आ सके । ऐसे समय कलाकारके ऐसे साथी उसे बनेका छोड़ देते हैं जो अमीरीके आदी हैं और प्रभावशीलोंका बिकार करते फिरते हैं । इस तरह राज बमीर और कर्दिवारी लम्बक छरीबीका गर्व करनेवाले प्रतिभाशीलके समुके गले एक ओर होते हैं और कर्दिवारी बन और सेखनके बहकामे हुए कुछ नयनीत और कुछ प्रतिभाहीन अनुयायी दूसरी तरफ़ । कान्तिमय तैजस्विताका इनन इन्हीं सन्धियोंके बीच होता रहा है । जब अकेले पड़ गये तब कलमसे अन्तिकी उपमसनाके कुछ और राहपीर पतित होकर बिकनेपर साधार हुए । जो सेप रहे उनके अल्पत्वके प्रति हम लोग इतने उदासीन कि साहित्यिक बर्हिर्षों और बर्कोंमें उनका कोई स्थान नहीं उनका कोई मान नहीं उनका कहीं नाम नहीं ।

हम नहीं जानते कि आजका कलाकार मकानमें रहता है कि कारागारमें । उसे रोटियाँ मिलती हैं कि नहीं मिलती । उसके परिवारकी जिम्मेदारियाँ भी उसपर हैं या वह पशुओंकी तरह पेरजिम्मेवार है ?

यदि कलाकार तैजस्वी है और मुकना नहीं पागता तो उसका साहित्य नगरसोमै-से बिल रसमें भी सिखा जाता है, मर्यादेके महामानव, हम उसकी हर कृतिमें शोष निकालते हैं ।

हम ऐसे कलाकारोंकी कृतियोंका स्वागत पहले जान-बूझकर सजायी

उतरे तो दूसरा गहोपर चढ़े। यही कारण है कि बहष्पनके सिलाऊ तटनार्थका विरोध होता है। उष्ण कलाकार तो ज्यों-ज्यों अपनी कलामें भीषण जाता है वह स्वानोंको रोककर खड़ा ही नहीं होता अपने ममस्वी कलाकारका आधीबाँध समझकर पीछे जानेवाली पीढ़ी उन स्वानोंको अधिकार समझकर नहीं कलाम्य मानकर संभाव्यता जमी जाती है। साहित्य इस समय यहियाँ भीषण-हारनेका मैदान नहीं होता।

बिनाकी मति कुछ मयी है, कृतिके पक्षमें व कैसे चढ़े रहने। इतिहासके मुहाड़िखानेमें उनका स्थान सुरक्षित है। हाँ यदि उनकी कृति बलिघोला है तो वह उनकी पीढ़ीके विरपर होयो। उन्हें धिक्कायत नहीं होना चाहिए कि उनको पीढ़ी, उनकी कृतिके प्रति उदासीन है।

कुछ गभीर चाहिए—यह अत्यन्त प्राचीन माँग है। यदि इसका अर्थ मति है तो ठीक है। मति नहीं है तो भारत है। और भारत तथा ही मली नहीं होती।

व्यक्ति-युद्धमें कमी-कमी प्रतिभाहीनताको पूजा होती है। जब झूठ झूठके नामपर जाती है, जोम उसे सरम्भासे त्याग देते हैं किन्तु जब वह सिद्धान्तके नामपर जाती है तब न त्यागें तो प्रतिभा कठती है और आत्माभिमान अपमानित होवा है और त्यागें तो समाज नाश होवा है।

एक जमानेमें पूजा और ममाडको एक बहनेवाले सम्य हमारै यही थे। आज हिन्दी-उर्दूको एक कहनेवाले मुची हमारै यही है। पहले एकके कहनेसे दूसरेको बन्द नहीं करना पड़ता था आज दोनोंको बन्द कर तीरै की बात बही जा रही है।

जब हम अपनेतर आत्ममन्दील भावामोंकी चर्चा करते हैं तब ईंट का अबाध बत्थरसे दिनक लिए लफ्फते हैं। क्या सोच-हृदयके छन्द-अर्थ करके भाषा और दिव्यका अत्यन्तत्व हम स्थापित करते ?

आजका बलाकार इसलिए बैदैन है कि कुछ छन्द अपना मूय्य बड़ाये बैठे हैं कुछ पारणार्थ अपना मूय्य बड़ाये बैठे हैं। प्रेम छन्दको भीमिए।

बदलाये सग्ले तक सब उनके हकदार । उम गमकदा भय उनके अब खोलमें
 ही रह गया है । सेबाकी धारमाको लीजिए । कोटि-कोटि साधनोंसे भरे
 यह और बीमबधोलमें घोड़ा-सा सतोगुण दीखा थोड़ी-सी उदारता बीबी
 कि लगे हम उसे ईदवर सिद्ध करने और साधारण बन सन्तत्व-साधनामें
 भर गया और हमने माना कि यह ती उसे करना ही था ।

‘बानस में सीताको बनके योध्य न बताते हुए, बनके योध्योंमें यह भी
 बताया—

‘के तापस तिय कानन योगू
 जिन तप इनु उजा सब भोगू’

बानी — जिन्होंने तब बिना उनका तो राजगार वा और जो सम्पुन
 मानके बीच घोड़ा-सा छोड़े — यह छोड़ना उनका ईदवरत्व है । जिस
 बरिष्ठा हमने समझ बना रखा है उस बातिका ही हमें साहित्य
 चाहिए । पाँचके मापका ही तो जूता चाहिए सो भाँ बलाकार और
 बनाई ॥

कलाकी कुछ धारमाएँ अपना मुख्य सेवा बीटी । जैसे नृत्य । अत्यन्त
 धन और कला-साध्य होनेपर भी बेरपाका बन्धा ! पावन — सत्ये वा
 उदाईशोरे या अरिबहीन स्थियाँ ! अभिनय — नाच नृद करि कोम —
 प्रियावन ! चित्रकारी — कहीं गुनाह कहीं उवेसा !

अभिनय ? — बनाबटो बीचन है । बीचन भर कृत्रिम और बनाबनी
 बावन बिगठे जायेगे राजनोतित्रका बालबाइका स्वार्थिका धार्मिक ठग
 वा किन्तु ताग-नर अनिनयम मूढाम अकबर वा गुरुपर ईना बन
 प्य कि नकली बीचन बन गया ।

द्विती संसारमें प्रकाशन सेवकका यमदण्ड है । अन्य देवोंमें
 एवकारोंके नामसे अग्य परिचित झूठ है हमारे मही एवके लीपकोंके
 मानके अग्य परिचित होते हैं । प्रकाशकने प्रथम दिन सेवककी प्रकटी
 कल्पकी साधारी करकर जिन पुस्तकको मुझमें छाप लिया वही अब

बिना निकली तब उसका मुख्य किससे कीन बसूल करे ? उभर प्रकाशककी भी कठिनाई है। बड़ स्वयं नहीं जानता कि कौन-सी पुस्तक बिना निकलेगी। लेखक बचपुर्मे अपनी कलमके बसपर साबन सम्पन्न है हमारे यहाँ कलम लेखकका अभिघाप हो रही है। हमारे लेखकको यह विश्वास नहीं कि उसके समका कोई मुख्य बुकायेमा। सम्मेलनमें हम अनुभव करें कि हिन्दीकी प्रतिभाके भयंकर सन्तु बे हैं जो इटीव कलाकारका साहित्य मूखमें चाहते हैं। वे ही लेखकको निराशा देत हैं कि कलाके चिन्तनको बड़ भुसकी प्यासाकी भाषमें अपन धुम रिनकि लिए कुपय्यसे बड़कर कुपय्य समझ। हम पीप्रसे खीत्र हिन्दीके कलाकार की कलमका मुख्य बुकाने योग्य हों - यह प्रयत्न होना चाहिए। और ऐसी घनराशि एकत्रित होनी चाहिए जिनसे हिन्दीके कलाकारके साव ईमानदारीका व्यवहार करनेवाली प्रकाशन संस्थाओंका निर्माण हो सके।

हिन्दीके राष्ट्रभाषा होनाका उच्छरदामित्व यह भी है कि हम साहित्य सम्मेलनको केवल अ० भा० प्रचार सम्मेलनसे उठाकर उसे अलिप्त भारतीय संस्कृति साहित्य और कलाका सम्मेलन बनाईं जहाँ हम प्रांतीय भाषाओंके प्रतिभाशील मनोपियोंको आमन्त्रित कर सकें और उन भाषाओंके कलाकारोंकी कला-कृतियोंका अनुवाद अपने यहाँ प्रकाशित कर सकें।

हिन्दीके जो साहित्य-प्रेमी अपनी धारणाओंके आन्वीसनके कारण आज जेलमें हैं उनकी मुक्त सेना भी हमारा काम है। जिन्हें हमन दुष्ट कहा जा उनका घामनने ठिरस्कार नहीं किया। जिनका घामनने ठिरस्कार किया है केवल उसी ठिरस्कारपर हम अपने कलाकारोंको न भुका दें। जेक जानवालोंमें विचल ही साबन-सम्पन्न है। वे अपनी चिंता स्वयं कर लेंगे। शिन्तु जो गायनहीन हैं उन्हें हिन्दी बगलुके प्रांतोंमें प्राणोटि टाटा सहायता पहुँचानेका आयोजन क्या हम नहीं कर सकते ? हमें जानना चाहिए कि जितने इटीव साहित्य-सेवियोंके बाध-बन्धने आज

बे-बुर-डारके हो रहे होंगे ।

बरीब साहित्य-शैलियोंके लिए अध्ययनके साधन उपलब्ध करनेकी और भी इमाज ध्यान आना चाहिए । हम यह दिसाव क्यों न लगायें कि हिन्दी जगतमें बितने पुस्तकालय हैं और उनके पठन-पाठनकी सामग्री किस क्षेत्रकी है तथा हिन्दी पुस्तकोंके रखनेमें बड़े किस धारणाप्रसिद्ध संचालित हो रहे हैं ? हम और ध्यान देनेसे सम्मेलनके लिए सम्भव हीना कि वह हिन्दी जगतके उचित प्रकाशनोंको उचित स्थानोंमें उचित समयके अन्दर बिकवा सके और इस तरह संस्कृती प्रत्यक्ष सहायता करनेमें सक्षम हो ।

हिन्दी जगतमें कितना ही विरहविद्यालय है तथा कितने ही गियामती और प्रामोय गानन हैं । वही पाठ्य-पुस्तकोंका निरूपण करनेवाली संस्थायी हैं । विचार-विविधता न होनेसे अज्ञान हासि होती है । मूस एक परमादा यही उक्तक करना चाहिए । सन् १९३९ की बात है । काठोमें मैन पुस्तकों और पत्रोंकी वह सूची देखी थी जिसे युक्तप्रान्तीय सरकार की टेक्स्टबुक और कायबेरी कॉमिटीने स्वीकार किया था । उसमें मने देना कि प्रायः युक्तप्रान्तके क्षेत्रोंको लिखी और युक्तप्रान्तके प्रकाशकों-द्वारा प्रकाशित पुस्तकें तथा यहीके सामाजिक तथा मासिक इस प्रान्तके पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत किए गये थे । मने एक घण्टेपत्र सञ्चलनमें लिखा इस सम्मेलनमें भी प्रभाव रहा है । पूजा कि अन्तर्द्वारा छोड़कर अन्य हिन्दी प्रांतीय प्रकाशकोंको और विशेषतः मध्यप्रान्त मध्यप्रान्त और कुछ विभागके प्रकाशकों और पत्रोंको ता आपसी फ्रेजरिस्मम स्थाप ही नहीं किए पाया और मध्यप्रान्तकी एवी कॉमिटीमें सम्मेलन हिन्दी संसारका अविचलन गुणाक रखा गया है । तब उग्रेनि अरनी विद्यमाना और कुछ प्रकट किया । किन्तु एक दुकरे सञ्चलनसे अब मैन यही बात धारणाएँ करा तब उग्रेनि माना कुछ महत्त्व न देते हुए बर दिया हमें इन सब बातोंकी याद हो नहीं रही । ये विच्छन्न सञ्चलन देवने एक प्रपान

समाचार श्रेष्ठ कौशल और निमग्न स्थायकी वह खेला करता है। उसे जायज पड़ गयी है कि वह बिना नाम दिये हथ-उभरसे खोजें छत्र ले। वह अपने पाठककी मास्रता आश्चर्यकता और अपने जायजकी बुद्धिसे गर्वित नहीं किन्तु अपने जायज पड़ो हुई सामग्रीकी बुद्धिसे सम्पादन करता है। वह अलक्षारके बंधनेवालेको २५ सैकड़ा कमीशन दे देता है और अितान जानेकी मुच केनेका उसे अनकाह नहीं। वह अलक्षारकी भाषामें निष्कलता है किन्तु बहुत बड़ी तादादमें विक्रता है। प्रकाशक अपनी दरखतका अलक्षर कोश अपनेमें रखे हुए है क्योंकि अतः प्रकाशक दरखतके साथ अलक्षर अपनी दरखतको नहीं मिला दिया है।

हमारे प्रकाशकका अपना पुस्तकालय नहीं है। वह रोटी खरीदकर खा सकता है जो रोटी उसे अपने खड़ेसे आभितों तक पहुँचानी होती है। किन्तु अलक्षरका मस्तिष्क अर्थों और साहित्यके साथ पराबसे पुष्ट नहीं रला जाता।

प्रकाशक अभी भी भाषामें भाषाको अनुहारपर जीना चाहता है किन्तु अतमान लेखक अतमान कलाकार पहले साहित्यसे यह चाहता है कि वह अपनी योग्यता दिख कर अलक्षरता अलक्षर करे आश्चर्यकता अलक्षरके अलक्षरता लीके और लभी और केवल लभी अलक्षर-अलक्षरके अलक्षरताकी भाषनाकी बाणी कामसे लभ। अलक्षर हीनताको कैसी अनुहार ? अलक्षर देने की प्राथम्यपर जो कोई अलक्षर हो लभ ली अलक्षर दिया जाये।

यै अलक्षरता है यै अलक्षर हा मया है। किन्तु यै अलक्षर हा मया है। अलक्षरमें अलक्षर-अलक्षर अलक्षर खोजी या अलक्षर अलक्षर कही जाये और अलक्षरके अलक्षर पुस्तकालयों और अलक्षर-अलक्षरकाशी अलक्षर अलक्षर-अलक्षरको अलक्षर-अलक्षर अलक्षर अलक्षर — अलक्षर यै अलक्षर अलक्षर कर पा रहा है।

देवी अलक्षर अलक्षर-अलक्षरकी अलक्षरताके अलक्षरके अलक्षरकी अलक्षर अलक्षर अलक्षर भी है अलक्षर अलक्षर अलक्षर है। अलक्षर अलक्षर-अलक्षर अलक्षर है और अलक्षरके अलक्षर अलक्षर अलक्षरकी अलक्षर अलक्षर अलक्षर अलक्षर

है। धामनक बिजापन धामन अपन कीर्ति-मायक मुनीम पत्रकारोंको
 देता है। वह पत्रपाठकीन धामन मित्र नहीं होना चाहता। वह चहुरोंसे
 छोट स्वामोंरर बानेबाम काण्डपर बड़ हुए रेलके महमूलक द्वारा यह
 मित्र हाता है कि धामनकी नीतिम चहुरोंके खमीरको काण्ड मन्ता और
 गणिके छराबको काण्ड महेपा पहुँचता है। बाबन्नाममें साहित्यक
 बँटवारेका अमुबिबा और हस्तमें एक बार डाक बँटना दगो भावाक पत्रों-
 के पैकनमें महान् संकट है। बही अतक पत्र है और रविगो हाबिर
 है बही डाक दिनमें कमय कम तीन बार और बही एन खबरका अकाल
 है बही डाक हस्तमें एक बार —मानो एक पदमन्त्र है ओ एक तरफ
 बेठी भाबाके बत्रकी मार डालेपा और दूसरी तरफ़ धामीम अमत्राका
 अताक अम्यकारमें रहेपा।

पत्रोंका मौस्वार्तिक प्राम भी हुआ है। न्योहारा उतबों मंस्वार्तों
 पत्रियों मुनाडातों अमकारियों लखहुरों दबास्यों मन्विशों पात्रामों
 प्रहति लौन्द्यों अशायबचरों खर्चों स्वाताम साहमा प्ररमा-पुत्रों
 और बवनी मम्यत्राके उबल-पुदकपर हम बहुत कम लिखत है। इसीलिए
 इनार पत्रोंको अम-मन अर्पता-मा नहीं ममत्र पाता। अपनो बिद्वियों और
 पत्रात्रामे आनवाके रक्तव अन्त्रात्राम और मुसात्रिन्नाम प्राण्ड होनवाके
 पत्रों और बन्ध काठरिदोंमें आलनवाल संवादीकी आर हम लुप्य करत
 है और रोजगारी संवादीका पकन-पत्राम मीत्र हम अपन पाठवाको
 पगमत्र है।

हम धामन महुरबका मंस्वार्त और प्रभावक व्यक्तिमामे अगबगीक
 शर्षम नहीं लिखत। मानो एक हुराक मरत्रात्र है आ शर्म या शर्मे बहीम
 लिख शायेनी। यही कारण है कि प्रभावक धनों और धामन-मवापनमें
 दिन्नी मवाचार-पत्र अपन अमका भाग्य-निर्वाण नहीं कर रहा। नराद्रीम
 'केमरी' मुत्रपत्रमें 'अग्म-भूमि' मद्राममें भाग्य पबिबा बागन्में
 'बागन् बाशर पबिबा — य अवनी मोमाको अमत्राक स्वामी बने ई'

है। यही पत्रकार कला गवित है कि जन जनपर जगका घासन है।

तिसपर इन कठिनाइयोंके बीच खरि हम गवित हैं तो इतकिए कि पराइकरजीका कुलमन 'जाज का उकव सम्पादन किया और हए है कि जनके जानक बाह जाज न अपनी पठिबिधि पत्री यदसी। नकटोंके बीच भी प्रताप' अपना पप प्रहम किये हुए है बलमान जगके गति पयका साथी है। धोमुन मूलकमजी अग्रवालने दैनिक 'विश्वमित्र'के तीन संस्करण करके तीन राजधानियास प्रकाशित किया है - भारतकी पुरानी राजधानी कलकत्तास नयी राजधानी दिल्लीस और देवर्डी औद्योगिक राजधानी बम्बईसे। इसस हिन्दी पत्रकार कलाका गौरव बढ़ा है। मूलकमजीके पत्रका मनुषयीम हुआ है और यह पैमानपर हिन्दीका एक प्रयाग परिणामपर बड़ा है। हिन्दुस्तान जनताक पत्र बहु जायेके अपन कलनासे अधिक युवत है। उसे हिन्दुस्तान टाइम्स भेगरेजी दैनिकके समस्त सामग भी प्राप्त है। 'अजुन भी जनबानो बहलानेम मीरबगील रहा है। भारत की कलमम उत्तरदायित्वका बोस अधिक है। 'सीनर' कठिपयका अंबारा है। उकव मरने और जासबा टोल हिन्दी पत्रकार-अदृशी समाग मावतावा मापउक है। पत्राकमें हिन्दी मिमाप मूस और लाबतास बमभूत है। 'विश्वबाधु' ईमानदार जायन मावतावा निमस उवाहरम है। सपनऊक अविचार की कलम सामग मुलककर संकटाके बीच बसती है। पराइकरजीका नया दैनिक संलाह हिन्दी अबतुकी परोधा है कि यह अपन उकव मनुगुलिठ जोवनक बलाहारक प्रति कितनी लजग कितना मद्रापक है। मरे पिछर प्रान्तमे भी 'नबभारत की दक्षिण मानो लाबनशीलता और प्रतिबुल परिस्थितिक अममबसे अलवर अपना अस्थिर मिड बर रही है। लाबमाग्य तिवनम एक बाज किलोम पठा कि दरि स्वगत मिल गया ता उमके बाह जाय क्या करें? मुनसे हे अग्रान जगब दिया बा कि मी कित्ती घासाम पणितबा एक अघापक हाना बाहुंगा। यदि बडाही नडक छाये करें यह क्षम्य हा और बाई मुलने

पूछ कि नू समय मिलनका क्या करेगा ?— ता मे कहें — कि स्वर्गोप
 वन्दनकी स्मृति 'प्रताप' की बार मनसत हिन्दा अमनका महानताक
 बिना प्रतिष्ठ करना चाहूँगा ।

मद् उन दनिकोका अथा ह जिनका मुझ पता है । हिन्दो अन्तक
 अंगरेजा पत्रामे मे कहल 'सब मान्य क सम्माननम हिन्दा सकारका
 नमून अनापन प्रतिबिम्बित दुलता है । अन्य अंगरेजो दनिकामे मे 'हिन्दा
 वदन् क प्रति मजबूत मही पाया । जिन दैनिकाकी मुझ जानकारी मही
 उनक प्रति अपन अज्ञानका अपराध मे स्वीकार करता हूँ ।

जिन दनिकोके माण्डाहिक प्रकाशित होत है उनकी अर्था छाहकर
 बर्णवृत्त माहिल्यिक थोपुत हरिकृष्णका जोहरक सम्पादनकामे बेकअदर
 मनाथार बरसूर निकल रहा है । प्रयागक इच्छिदन प्रमक 'दशरुम'मे
 पुर्वोकी कमी रह सम्पादनमे आगुस है । साधना 'स्वतन्त्र बहुत मजबूतान
 सम्पाशित हाता है । अन्तन्त्र निकलनबासा 'मपय' युक्तग्रन्थकी बलवान्
 पकि का का दशक मपयमे बन्द हो गया । अन्तन्त्रका 'मजबूतान और
 बर्णक राजस्थान न सम्मानमे इतिहास निर्माण करनकी समता
 दिखलायो । पटनाका 'मजबूतान दशके इन-विन लेख पचास जाइम वगना
 है । 'हुंकार बिहागम स्वामा महजानन्दको आवाज है । बनारसीकी
 'जनता' बिहागकी अहम्य आवाज थी बन्द हा गयी । पश्चिमिपत्रिकाका
 अन्त-दुबकमे कलकत्ताका बिचार-जैसा अकटा पत्र बन्द हो गया ।
 पटनाके 'योगी' की धारा अपना इन रञ्जकर अपक प्रकाशित है । रगुनका
 'शाहीनबाग हिन्दीमे शहीनबाग धा बिम्बु यह भारत बर्ण और रगुन
 बर्ण ? गियामतमे अन्तबार निवासकर तजस्विनी कलम रख के जाना
 अपन मिस्त्रिबोके जोवनका ही नाम धा बिम्बु क बाजार हात हुं नी
 बर्ण है और 'जोवन बन्द है । इन्दीरकी प्रजा मण्डल पदिबा रनका
 नाम मन् अपन करे बी बर निर्भिक अन्तबागी । बकियाका 'प्रमान'
 बने मुमानकी साहित्यिक बाकी भी है और राष्ट्रीय भी । दरमयाका

‘मिथिलामिहिर मिथिलाकी प्राचीन और अर्वाचीन संस्कृति और साहित्य-साधनाका प्रबल उद्योग है। कलकत्ताकी ‘बाबूति की आरम्भप्रियता और निरीकृता पत्रक खरिदका मूठबम है। रौंइबाका ‘म्बराम रियासती प्रबन्धी मध्यभारतीय आवाजको निर्भीक व्यक्त करता जा रहा है। ‘आय मित्र मुक्तबन्ध (आगरा) से आर्यसंबन्ध मध्यप्रान्त (होर्णागाबाद) से आय रिक्वीरें और ‘आय मार्गण्ड’ ब्रजमग्ने निकलकर आर्य-जपनके सम्बन्धकारक है। श्रीमूठ हरिदांकरकी धारवि सम्भारमके दिने ‘आयमित्र’ आपनी साहित्यिक क्षीतिसे उच्च मिलकर पर वा। ‘किताब’ ‘हुकार’ (पटना) और हुपक बाबु (लौइबा) कृपकाकी निर्भीक धारिवा है। ‘अबदूत (रायपुर) आर्यविगतक (पञ्चनपुर) अक्षुम’ (रौंइबा) ‘ओकमत (नामपुर) और आर्यवान (अच्छ साप्ताहिक रायपुर) मध्यप्रान्तके जन आनरनके अजन पारेदार है। धुमविगतक का सम्भारम अब तरकीबीने लिखा है और ‘अबदूत की अंशप्रसार अर्था एम० ए० की अक्षममे लिखा जाता है। रियासतासे निकलनेवाले वर्षमें देवाजवा ‘मानण्ड मझाराज और राजके कावों और सत्कार्योका नख नायक और धारक है। ‘अपानीप्रताप प्वालिकर राज्यकी नीमाके हिन्दी कलाकारकी प्रान्तप्रम देता है किन्तु रियासती पञ्चट डोलकी नीरसता को जन नहीं रनता। टीबीबा प्रकाश अपनेमें साहित्यिक सुस्वाद भी रखता है। कलकत्ताका ‘ममाज मन्धक आरबाकी सपानवा जन है। अर्थाका इण्डस्ट्रियल ग्रेडट हिन्दीमें योग्य व्यापारिक अर्थाका धष्ट काजन है। ३० ईपञ्चरकी साप्ताहिक ‘बिदरबाकी अन्तर्राष्ट्रीय बीजम अर्था बल्लु पी अन्ध ३१ गयी। कलकत्ताका विश्वबन्धु अम्भा प्रयत्न है।

हमारे मानिकमें साहित्य सम्प्रदाय ‘भागी प्रचारिनी पत्रिका ‘हिन्दी ‘हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय पत्रिका ‘प्रित्तण पत्रिका और अरि श्रीचर उल्लान्ने अक्षिप्यमें भी दूर रद्द लके तो इन्दीको मध्यभारतीय हिन्दो साहित्य अर्थाकी बोका तथा मध्यमका ‘हिन्दी प्रचार समाचार

और वर्षाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समितिका 'राष्ट्रभाषा समाचार—य
 उच्च स्तरमें आता है। जिनके सामने निश्चित आशय है, जिनका पय प्रबल
 प्रभाव है, और जो अमर साहित्य प्रदान करने या राष्ट्रभाषाकी सचती
 यकी बाहु बनने पाठकोंके सामने रहनेके लिए अपने अग्रिम व्यवहार
 संस्कारोंके प्रतिनिधित्व तथा सम्पादकोंकी योग्यताके कारण अपनेका
 उच्च परम्परामें बंधे हुए हैं। 'साहित्य सम्बन्ध हिन्दीके ऐनन्दिन
 सम्पादनकी एक आशयक नव है। 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका 'हिन्दुस्तानी'
 और 'सम्मेलन पत्रिका' हमारी घोषक आशयक हैं। 'हिन्दा हमारे देश
 और भाषाकी सांस्कृतिक उच्चताका प्रमाणात्मक बहाल है। 'सिद्धम
 पत्रिका' नयी पाठकोंके निर्माणमें आसकोंके पाठकोंके लिए अनमोल बोन
 है। वह विचार पत्रिका भी है व्यवहार पत्रिका भी है। 'सरस्वती
 बनने साहित्यिक योग्य-रक्षामें मग्न है। 'हम 'विशाल भारत और
 'विश्वानो' क्रियात्मक प्रतिभा और जिपान्तास हिन्दी अपनेके निर्माणमें
 हमारे अंधे उद्योग हैं। कहानीके अग्रममें प्रमथम्प्रीम 'हम' के द्वारा आ
 पाठ बहाली उन चाराके जो पत्र में देख सवा उनमें 'भाषा बहानी
 और 'नयी बहानी' के आयोजन एनीमड है। 'भूमाल अपने विषय
 विषयमें तथा सम्पादनके कौशलमें हिन्दीकी एक मुख्यबान् निधि है।
 'रोषक' पत्रामें हिन्दीका प्रचार करनेवाले अवाहरेके तपस्वी स्वामी
 केपानन्दकीका उद्यम प्रकाश है। 'भारती (पटना) का साहित्यकी
 शासन और नवीन चाराके समयका उद्यमक आयोजन करना चाहिए।
 हिन्दीके आधिकारों या बेनीपुरीके 'मुक्क को पृथि हिन्दी भागी उदगाई
 न कर लको। अजमेरकी 'स्यामसुमि विहारकी स्या' मध्य भारतकी
 'शानो (नरडोल) मध्यप्रान्तीय प्रमा' और धीगारका काहीरका
 'रागनी और कानपुरकी 'प्रमा एनी पत्रिकाएँ भी जो अमर लेखोंमें
 हिन्दीकी सांस्कृतिक अग्रिमके लिए याद आये बिना नहीं रहनी।

'कल्पवृक्ष हिन्दीमें मानस पूजाका विमल पत्र है। 'बस्याग इन

दैनम विद्वत् ज्ञानसे बढ़ता हुई नास्तिकताको बुद्धि रोककर हिन्दुओं में हिन्दु समाजको सांस्कृतिक मिष्टि देनवाला एक बरदान है। 'बिह्वल' मध्य भारतका उग्रबल साहित्यमुष्ठी आयाजन है यदि वह आक्रमण करनेके सस्त कालसे सदैव बचा रह सक। मनुकर बुद्धेत्तलण्डकी संकलन घणित बनकर बहाके साहित्यका भारतीय भारतीयको भेंट करनेका सफल प्रयत्न है। साथ ही मपी-मपी योजनाओंका पद्य करनेमें बहुत बेचैन भी। आगामी कल' (संस्कृत) साहित्यी साहित्यिक तथीन प्रस्थाका नव आयाजन वा सम्पादक बलमें है पद्य बन्द है। युगवादाका प्रतीक एक छोटे-से कालमें रहकर युगका मन्देत्त बहन करनेवाली धारा बनकर रहा। हमकी तरह वह तेजस्वी विचारधाराका निरंतरता स्वरूप सम्मुख जाता रहा। राष्ट्रभाषा समाचार यीमप्रारायणकी अद्यवाककी भाषा वादाक बोचकी पहागतहीनताका स्वरूप बनकर निकला और हीमाय है कि उसने मन्त्र मान्य कौमभ्यामन-वीना तपस्वी युमइहा और बर्तित पनवा समानशील सम्पादक पावा। बाहक शाल्मला विष्णु—य पत्र हमारे बाह-साहित्यिक भुयन है। बाहक' इन पत्राम बस्तुमें उठकर गस्था बन बसा है। साथला साहित्य-सन्देश क गीरवकी मानो पुरक बन्यु है। 'हम एकवाच उच्च श्रेधाका कृतिक मातिक है—अका उष्वा और बुद्धिबलि मरा हुआ युक्तशास्त्रीय मरकारी कृषि-विभागको बरबा बहुत करता है। दोरी हिन्दा भाषी स्थियोंकी आबजल एकमात्र शीघ्र पक्षिका है। 'हम भारती मस अज भाषाकी अजबकमजोष बरबाका मानन है जिगपर शासन हिन्दी बाण्य ठहरा हुआ है। बाहक' बनेत्तलण्ड और रोचके साहित्यिक मित्राका नया आयाजन है।

पूजा और प्रवृत्ताका पत्र आबजलक माय समान्य होलेपर अब हब किर विचारधारी और मुद्धे।

समाचार-पत्र प्रतिज्ञाके मापने हमारे यही अभी स्वापार मरो बन पाय। विने-बुन अद्यवादीका छोड़कर पत्रवारके पद्येन अभी को

बनोर नहीं हुआ। इसलिए थोड़े छोटे और बड़े नामों जहाँ भी सामयिक
 शक्ति का संकलन करते हैं, वही उस घम ही की तरह बसा रहे हैं।

शिम दिन समाचार-पत्रक व्यवसायमें लक्ष्य लेकर एक प्रतिभामय
 यो विद्यार्थी नाम होन लगेगा उस दिन समाचार-पत्रक हमारे इस व्यवसाय
 बननी भारी चुनौतियाँ लगे देंगे। क्योंकि मूलभूत सुगन्धित रक्त हुए, उन
 बलिष्ठता समान और वैश्वक मन-बालात्रापर प्रभाव रहना उसकी कोटि
 की बुझानगरी भी बनकी बुझानगरीक साथ सुरगित बल निकलेगी
 और मूलभूतका लक्ष्य मिलना भी असंभव ही।

युद्ध हो रहा है। यह बात हम समाचारमे कागजको महँगाई
 और पाप पदाधिके प्राप्त करनकी कठिनाता आर्थिक द्वारा ही अनुभव
 नहीं करते। हमारे देशको सोसापर भी जापानी वायुयान में डराते हैं।
 इस समय हिंसाका कत्ताकार कहीं है? क्या वह बिना दासक पक्षी
 ईनी है या बहूँक उन्माका माहिरय कभी हमारे पास तक भी आ
 सक? क्या वह अमेरिकन पत्रकारको तरह युद्ध-क्षेत्रोंमें बहो पत्रकार
 है? क्या वह दासको घरेमें घुसकर बहो यह खबर बनमें लगा हुआ है
 कि पत्रकी बिनाक तीपारीका पुरा लक्ष्य उसका जेबम है? दुनियाक
 युद्ध-क्षेत्रमें मानवता कृपसी जानपर किम तरह उभरती है और न उभर
 सकेपर किम तरह परिस्थितियाके बाध अबमरका प्रतीता और तीपारी
 बना है इस बातका अनुभव भी कहीं हिंसीका माहिरिक न रहा है?
 अतिथल बिचाराका संपन्न व्यक्तित्व बिचाराका दृष्ट राष्ट्रीय आचरण
 बताका संपन्न और अपन राष्ट्रीय धर्मगर्हीय स्वप्न पूर करनके लक्ष्यमें
 जीवन-यापन करना — क्या मानव जीवनक मरणा शीतकर अमर रहनक
 इन ताका सम्मिलित पक्ष-बासोंके बाध कुछ हिंसी माहिरिक है या
 बननी शिष्टयो बिता रहे है? क्या बहा अबमर नहीं दिया जाता? —

१. निर्णय बहायुद्ध।

तब आप मौतकी सापनामें मुहूर्तके लिए ठहरे हैं। प्रसन्नकी सापनाका नाम लेकर प्राणोंका दुस्तराजवासे साहित्यिक हम लो जाकपनका-सस्ता पत्र ही निर्माण कर रहे हैं। रक्तदानसे मधु-सोहान राष्ट्रका भाग्य रक्तसे लिखनेमें हम सफल कैसे हो सकते हैं ?

विश्वके भाव-जाजनासम और कम-कार्यात्मकता जब द्वार खुलेया तब हम अनुवादाकी जुठम समेटकर अपनी पीढ़ीकी साहित्यिक भूप बुझाते नजर आयेगे। क्याकि प्रत्यक्ष अनुभवमें हमारे पास कुछ नहीं होता। बससि भागनेक सुन्दर बजलक मिठा क्या हम अपने साहित्यकी बीछाको कोई भेंट दे सके ?

क्या बहनेक लिए, पत्रकारको द्विपिा सरकार अबसर नहीं देती ? आ कपिसी नहीं ब जिन्हे कपिसकी बीरता मूलता मान्य होती बी और आ बासपोंकी बहाबुतोपर बिस्वास करते ब उन बिस्वातोंक भुरोप द्विपिे साहित्यिक आत्र कहां गये ? क्या नहीं छलवा साहित्य अबसर, फिक्कतोनसे अफ्रीकान चीनके कमसे अमेरिकासे और मुझ-सोत्रोवे भारतमें आ रहा ?

मुझन बिस्वकी नवी भाषा ली है। हर भाषाको नय धरर रिने है। परिस्थितियोंमें बम गोलोंकी तरह कुछ धरर भी बन है। एक भाषा भी बनो है - हर बराम हर जगह। क्या इनमें हमारा भी काई हिस्ता है ?

जब हम बिडलावा उबर अडता है तब अबतरणों और अंधोंकी घुन मचा बते है और अब भाबुकताका उबार आता है तब जान या लेंप या कहवाको धारा बहान लबते है। यों अबतरण जानवा बब और अध्यात्मका अविपक है। किन्तु अबतरणवाडी ज्ञानका आरम्भ और अपने अज्ञानपर डाला हुआ कृत्रिम आबरण मात्र है। हम बिस्वके साहित्य क इन बनमानत्वकी समझते ही बड़ी है कि उस भाषोंका उपयोग करनका अविकार नहीं जिने सपनाका अनुभव न ही और उमे अनतरण अबकनेरा

बिना साहित्यकी नहीं बना चाहिए, जिसकी बीबन-भाषाका ईमान उसकी इतनी भाषाका साथ न हो। यदि कमरके कौड़ोंके पेटसे कमरके निकल पकड़ ता पुस्तकोंके कौड़ोंके पेटसे साहित्य भा निकल सकता था। अनेकानकी बेसीम इत्तमकी मूर्तिके आराधकके नाते इयामल अभिमतक उनाक साहित्यक भाई। जिन बेगमें इत्तम तलवार बीनी प्रकर और हिमालीक नहीं हाता उस बेघमें तलवार भी तलवार बनकर नहीं रह सकती।

क्या ज्ञानि भी अगर हममें 'बुद्ध विरवकी नाव जालमें अपन साहित्यको 'बुद्ध केनेके लिए मर-वप गये होते? क्या इत्तमकुंजा पक प्रताड़ना और मुसमें आचारीसे मरकर नष्ट की जानवासी हमारा जिनकी दिवारोंकी सम्पुक्तताक पकमें चढ़ायो गया अपना जिनदगोसे बरिच काट करने योग्य अधिक मूयवान् मानूम इतो है? तब हम साहित्यके नहीं शरीर-पूजाक पैगम्बर है। क्या हममें यह पूछा जायेगा कि कलवा जिन कैसा बन? कलका देव कैसा बन? कलका साहित्य कैसा है?

साहित्यकी भी दो बागए है—मानता है। एक मुदात्मक-नाय बाय कुरा विद्यायक मा मुजनीस-बारा। अपन कायर बीबनका हमकी कइकर तो उताधियास सम्मानित रखते आय है कि मुजनीसक क्यपीस न हो। किन्तु क्षेत्र मल ही मिम हो संपय उसी हृद तक पूरनका आवश्यक अंग है।

यू सम्मलन और इमार ऐसे सम्मेलन साहित्यक अगोस्तव है जिन हर तक हमारी इत्तमें तजस्विनी है। क्या हम शपथ के सवत है कि साहित्यकोंकी भी एक तदबार् है, और तदरोंके मूयवर अपन जीवनका केना-जाता वह इत्या-साहित्यकी निकट यदियमें अवरय केनी? मुसमी बन? संना जन? या ये कोई स्वग न भेज सकेगे। हजारों पीरसे हुते बीरकर हिन्दीकी एक निर्मायशीला बापीका भारतकी

और जान दो भारतरी दोरसे जान दा । उसकी इशियाँ मात्रसे समस्त
 यमोंका स्वय साहितरके प्रोदकमें मलकर उतर मायगा । युमकी मानका
 यह बाबा कौन कहाता है ?

हमारी राष्ट्रभाषाका सम्बन्ध प्रांतीय भाषाबात है । किन्तु यह
 सम्बन्ध उचित नर कि प्रांतीय भाषाएँ मात्र हैं और राष्ट्रभाषा साम्राज्य
 है । प्रांतीय भाषाबाकी साम-हीनता हिन्दीकी राष्ट्रभाषाका पर प्रभाव
 नहीं किये हुए है । यह कुछ प्रांतीय भाषाबाका यह सब हा ता बेराग
 रहे कि उनमें हिन्दीमें अधिक घेष्ठ साहित्य है । हम तो राष्ट्रभाषाकी
 उपासना समस्त देशकी साथ रलकर इमीमाएँ किये हुए हैं कि यह देशकी
 सम्य सब भाषाओंकी अपधा अधिक सरलतासे सबके अधिकार भासमें
 समझी और सीखी जा सकती है । हमने हिन्दीका राष्ट्रभाषाके रूपमें
 प्रामुख नहीं किया है । समबाओ होनेके नाथ देशकी संस्कृतिका पूरक
 और पश्चिम तथा उत्तर और दक्षिणमें लोट-लोटकर बहुत करत-करते
 हिन्दीमें स्वयं अपनका सातारिमीम राष्ट्रभाषा बनाया है ।

हिन्दीका यह भाग्य रहा कि सामान सब महा बहन किया अनतान
 उमे मना यहक किया और सिद्धामनाम उस कभी मत्राग नहीं किया ।

परन्तु हमारे जानके बाहल मन्तिरके व्यभिचारम समाजकी
 घनिष्ठतासे उचरत्सके स्वयम रुदिकी कामतान मफरपागाके पदावातमें
 हिन्दीका गीताकी बीकी जननम रीकना प्रारम्भ किया । यही कारण है
 कि बुल-बुलका प्राम-बीताकी धनि हमारी साहित्यिक बनायम पूर
 पर बयी । और या रामनरमरी त्रिगीत बा अन्तुक्च पैमानेपर
 अपना सम्पुन बाहन लयाकर हम साहित्यकी और समस्त दारा ध्यान
 एक तरकी और तरक लेगके धी देखरु सग्याबीन लीबा । गीताके
 बोनाकारर बायी जानबाका लायनिवा हमारे बादे-गोंकी घनिष्ठताम हमें
 हमकी हीन पदती है । गीतों और धनिज्ञानाम गाय जानेकामे गीत हमने
 बारीके सिए छाह रिय है । लम्होंकी बबोद और व्याकरय-विदुन

बर्षिका इमन कुछ चुन सा है बहुत छोड़ दी है । बर्षिका बसन्तका
 अनुशोके वदप-बबकहाँ मुदावरोंको तानोंकी वक्रुनको उन्चारों-
 को पहुँचियोंकी नित्य काममें आनवाकी बोलियाँ मानो भाषाके
 शास्त्रमें शूद्रत्व है जो बुर रखा गया है । हमारी लोज महाक्रियानामें
 एता है जहाँ और बलिहानोंमें नहीं ।

साहित्यमें जहाँ स्वाद आता है और भाषा बहूँ अनेकामबती हातो
 है वे स्वयं है — मुदावरों पहलियों साकोक्तियों और कदाचित्तके
 उपयोग । य आन भी जैसे गीतोंमें समझ आता है जैसे राहुरामें । भारतमें
 भाषाका यह बीमब हमें कदाचिन् गीतोंन अधिक दिया था । जहाँ बोधन
 का बड़ी ता साहित्य बनना ? अब हमन गीतका भाषा-सम्बन्धी-बीमब तो
 न निम्ना है और उसे इतना कठिन बना दिया है कि वह गीतके काम न आ
 सके । कुरुन उठाते समय गीत कर्मी हमारी नजरपर ही नहीं होता ।
 मना भाषका बूब पाकर हमारी मारी बुद्धि बीरुको मात करनमें मगी
 है । और मन्दाक छाड़िए । चौपसा छसरी सागोंमें साहित्यको अयोग्य
 बनाकर मोरुह प्रोमदी कृत्रिम बोधनक लोभोंके लिए साहित्य जननका
 इमारत यह कैसा मोड़ है ?

क्या यही हमारी पुराणामिता है कि हमारी उपमोम की हुई भाषाको
 नान समझ न सके और हमारा साहित्य गतिहीन होनक बजाप उम
 महाक्रियानामें रचना पड़ ? प्रियामी भाषाकी पीठपर पुराणामी भाषा-
 को यह याथा चिन मंडिसपर पहुँचगी और कितन नितोंमें ? क्या हम
 मुझे का बीरुकक सम्काकी घोष और बिनोक किए भाषा बाए रहे
 है । अंगूठ मा इला रास्त आकर लोह भाषाक मीशानोंमें मगी थी । अब
 हम पण्डित हिन्दीको भी उमी तरह दण्डन करके छोड़ेंगे ।

बसन्त पाठगोंमें बहूँ रहे जहाँ रलक दिम्बों-जैसे घर है आत्मनुजा
 योही आगपना है हाथीके दाँतोंकी तरह जहाँ बाजा बसना है और
 यो विान पकरनक बारनानोंमें इमता और परिस्वितिके बाठीगराक

यहाँ टूट-फूटकर परम्परा किशा जाता रहता है ?

प्राचीन सभ्यता बाबिया हुमन समेटकर रख ली है । उचित किया है । सभ्यता बेजोड़ बाबिया लिखी है । स्याकरण टूटा है । बाब्यके नियम टूटे हैं । मर-मर्तोंकी मर्तारा टूटी है और स्वाबिकोंके स्वाब्य टूटे हैं । क्या आज जो सभ्य है उन्हे हम सहराती औरबाती प्राचीन सभ्यता-वीती भावाके दाबमें स्वतन्त्रता नहीं दे सकते ? क्यों ? और क्या आजके सभ्यका साहित्य हम उस दिन बटोरेंगे जित दिन वे मर जायेंगे ? क्या आजकी सोबमें हमन यही नबीयता सीखी कि पूज्य बहु आ पुराना हो ? नहीं तो आजके सभ्य और सभ्यकोंकी बाबिया सीखी सरोबरों नदियों सोंपड़ियों और सभ्यहरो में हम क्यों न हूँ ? किन्तु वर्तमान कलाकार औरबाबा सब किमापी सिखीन जनकर कीति पा केता है । सब सहराती भीग-बिनास छोडकर बहु सभ्यत्वका पीछा पकड़केका पापसपन क्या प्रहण करे ? क्या कुछ मुर्बा आये आकर सभ्यबाबीकी सहरबाबी बननेके मरणसे बचा सभ्ये ? क्या वे प्रयास कर सभ्ये कि आजके कलाकारका स्वर सोबके मर्तारके स्वरसे भिन्न सके ? किन्तु कहीं कि सभ्यबाबीको जमर करनके लिए हम यबमें आय आओ ?

एक प्राचीन विज्ञानमें मुझे बिरु लिखी है । उस बिरुके सम्मय मर सभापतित्वका सारा सम्मान सभ्यमानित और सभ्यित है । आ भावाकी सभ्यपूर्वा बाबिकोका सभासी हा । उमे सभ्य करनै कलामान् और विज्ञान् हातन सभ्यमें हम तरह कव्य बाबीमें भीग-नी सोबकेके लिए बिरुन किया है । हमने साहित्यकी सभ्यीरपर सभ्यन हीकर साहित्यके सभ्य सभ्यका सभ्यमान किया है । सभ्यता विज्ञान बाबाके भीसभ्यमान् विगारदने मुग विगार है —

“मारर बादे

परिचय न होतै हुए भी आपसे कुछ प्ररन करमेकी पृष्टा कर रहा है और इनके लिए प्रारम्भमें ही दावा सभ्यी है ।

सी भाषासे मैने यह निबन्ध आपको सत्रामे किया है ।

यह बिन्दुो मत्तर मीगती है और मुझ आया है कि इन सम्मेलनमें एवबिन्ध साहित्यिक विद्वान् इन बिन्दुोके स्वरूपा परिचोमें निवास करनेवाले लोपाको भाषाका स्वर मानकर अबरन इनका उत्तर बैसे ।

अबराही लोपाके भारतीय भासनको यहि इतिहास भारत कहत है तो बेसी रियासतोंको भारतीय भारत । ईदराबार और मीपाषका भारतीय भारत उन्नु भाषाका उछो खोस और उल्पाइस सत्रामेता हे रखा है जिस तरह बहु इसकामकी भाविक संस्थाभाकी सहायता करता है । वहां इतनी अनुवारतास काम किया जाता है कि भाषाकमें आजा मीगे जानपर भी मन् १९४१ के दिसम्बरक तीसरे सत्राहम बहकि मजिस्ट्रेटन एक हिन्दीका साहित्यिक ममा करनेकी इशाजत न बी । ईदराबारक सामनन ईदराबारकी ओरस आमित्रत हिन्दी साहित्य सम्मेलनका अधि कथन ईदराबारमें गहो होन दिया । यह अनुमते कहनको जम्मत नहीं कि इन कामा राज्योंकी अधिकार्य जनता राज्यकी इन भाषा-जम्हन्नी कृतिको जनतापर की जानवासी अबरवस्ती समझती है । ये सामन अननी सोमाम तो बिसकुल उन्नु न जाननेवाली जनतापर अबरवस्ती उन्नु लारो विन्नु बदीरम जहाँ घामक भाषाका साम्प्रदायिकताके साथ नहीं मिलाना चाहता कातिश की जाती है कि वहाँक हिन्नु भा अबरवस्ती उन्नु पडनक निग बाध्य किय जायें ।

अब अबरा हिन्नु राज्याकी तरफ बुंठि बसिए । इन्धोर जनताकी भाषा ओर राज्यकी भाषा बानाज प्रति ईयानदार और गजम है । सामन के जनक परिवर्तनाक बाह मी उन राजकी भाषा-नीति विगहन नहीं पानी । इन्धोर राज्यक बहुमत्तर विद्वान् यत्नशील है कि मध्यभारतकी गन्धिविन बसिनगे धीमुत सिंहसत्रीकी बहु यात्रना मफल हा सक ना हिन्दा बिबबिवालयका योजनाए नाममें प्रसिद्ध है और जिनकी बर्षा इग सम्मेलनक इन्धोरके अधिवेशनमें हो चुका है ।

बात है कि ग्वासियर राजके कानूनकी किताबें फारसी और अरबी भाषोंमें लगी हुई हैं। किया-यसके विवाह हिन्दी भाषा उतमें अधिक नहीं होती। इसके अलावा वह कई वर्षोंसे इस भाषामें कोई परिचित नहीं हुआ। फिर भी इन नवीन भाषाओंमें परिचय यह हुआ है कि हिज्ज हार्मिसेब एक कॅमिटी कांफ्रिडियस तथा जनताके सरस्पीकी सैपर हकूम अहमद (राम्पके एक मन्त्री) को अध्यक्षतामें बना दी है ताकि वह परिचायक समझे ता इसे सबकी रामस सरस जनताका प्रयत्न करे।

जयपुरमें रामचन्द्र धर्मा 'बीर की इतलिये उपवास करना पड़ा कि वही हिन्दीका प्रचार हो। सरकारने आश्वासन भी दिया। २८ जनवरी को राजका आज्ञा निकली कि श्री महाराजा साहब बहादुरकी अधिवास प्रजा देवनागरी लिपि इस्तमाल करती है। इसलिए गवर्नमेण्टकी यह संज्ञा है कि तमाम दफ्तर और अदालतें देवनागरी लिपिका प्रयोग करें ताकि सम्बन्धित जनताको किसी किम्पकी अनुविधा न हो। किन्तु साब ही उसी आज्ञामें वे साहब भी लिखे गये हैं— मगर इस आह्वारका संज्ञा यह नहीं है कि देवनागरी लिपि ठीक तरह न जाननेवालोंके लिए उन्नी लिपि इस्तमाल करमपर किसी विस्मकी रक्षाबट है। जब जनतान इस आज्ञाका एक हाथमें दफ्तर दूसरे हाथसे मुविधा छीन देता तब ८ फरवरी मन् १९४३ के नोटमें जयपुर दरबारके परिषदकी अहमद गानकी ओरमें अधिकारपूर्वक यह स्पष्टीकरण किया कि उनकी पहला आज्ञाके मद्दा दखलै मानी सरकारकी यही मरजो या निणय है। राजन यह भी स्पष्ट किया कि 'देवनागरी लिपि ठीक तरहसे नहीं जाननेवालाक निग से सरकारका अधिप्राय यह है कि जन्मीमें जन्मे सरकार दफ्तरों और अदालतोंमें देवनागरी लिपिका धाम व्यवहार होना चाहिए। किन्तु १५ फरवरीको फिर मन्त्री छेक गयी। एक मरकारी आज्ञा निकला जिसमें २८ जनवरीके मरकारी सेमीरेण्डम और ८ फरवरीके परिषदकी अहमदके नोटका उन्केन करते हुए राजके परिषदकी अहमदम दिर

साहित्य बीमबकी हिन्दी जगत् और राष्ट्रभाषाक उच्चावियोंके सामने रचना चाहिए ।

इस विषयमें मैं समस्त हिन्दी संसारके बह्वचचनके लिए पं० बनारसीदास चतुर्वेदीके जलपवादी स्थापना अथवा मण्डळोंकी स्थापनाक मुझावका समर्थन करता हूँ - बर्हातक बर्हातक कि दिल्लीके सम्मेलनका प्रस्ताव जाया देता हूँ । यी हिन्दी भाषाक भारी बिस्तार और गुरुतर कार्य नारके कारण कुछ संस्थाएँ हिन्दी साहित्य सम्मेलनक अर्गठयत हाकर भी अपना कार्य अवाय रूपमें अलग कर रही हैं । काद्यो नागरी प्रचारिणी सभा बुन्दौरको मध्य भारतीय हिन्दी साहित्य समिति बिहार पंजाब मध्यप्रान्त और मासबाका हिन्दी साहित्य सम्मेलन बर्बाकी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति बिड़ान् चारंग बर्मा-डारा स्थापित और इन सम्मेलनक गठ बपक अर्गठयत बिड़ान् पं० अमरनामजी सा-डारा उद्घाटित भारतीय हिन्दी परिषद् - म संस्थाएँ अपना अपना काय किम जा रही हैं और प्रयागका सम्मेलन कार्यालय इनके कार्योंका समर्थकी वृष्टि नही देखता । पंजाबके हिन्दी प्रेमी मित्राण इन बप पंजाबमें हिन्दी प्रचारकी जो मूम मचायी हैं वह मिश्रन्दरी वासममें उत्पन्न हिन्दीकी अथवा क बुद्धयत्नका कार्यो उचित उत्तर हैं । किन्तु मैं इन प्रयत्नको दिकेगीतररखा प्रयत्न नही करता । मैं यह ता चाहता हूँ कि नारबाड़ी मासकी बुन्दल्लवणी अथ भाषा वैधिलो वादिका नष्ट होता हुआ साहित्य उज्ज्वल रूपमें समस्त काय बिन्धु मैं यह हरनिध नही समझ सकता कि इन प्रान्तीय पाठप-गुस्तके बर्हातके वासियोग उपन ममें । प्रान्तीय अभिमानका वायुत करना बुरी बात नही बिन्धु हमरे गृह-जगतमें मस सन्पूर्व हिन्दी जगत्के नाथ ही जापका भव मासम हाता हैं । मरे विचारसे अंगरेजीके राजप्रथका हिन्दी क क्षत्रोम बसबात् बसाकर अगिल हिन्दी जगत्की एक हिन्दी भाषाका कमजोर करनका इसस सुन्दर तरीका बुरा नही है । सचता कि प्रान्तीय उत्तेजनमें बड़कर एक दिन वैधिलीका बोलनेवाला नारबाडा न समझ धोर

सच है कि सेसनकी घातें ज्ञान हैं। समान चाहे मिलना ईमानदार हो
 वह ज्ञानक भाव नहीं छोरीया जा सकता। हम मत्न करना चाहिए कि
 हिन्दी प्राप्त्याम और हिन्दी जयत्के मित्र-मित्र स्वागामे हम बह बल में
 कि जिस तरह कमाकार भूषां न घरे उछो तरह बह दिमागी भूषण
 कहीं बीना न रह जाय।

भारतकी जिस जमीनपर हम हैं उसकी याशकी लड़को यदि हम
 उगाड़ दें ता सताम्रियाके साहित्य-साधक उसमेंसे निकल कर हमसे
 बाझन लगे। वात्सल्यका बिबिधबिबिदी बरबात सकर मुर निकल जायें और
 मारस्यकी समक बारा सेकर तुष्ट्या। हिन्दी जयत्क मय बनकर बाभीली
 बिदुस्ता-विद्रोहो कबीर निकल जायें और रसको हिन्दु-हिन्दुमें अपनाका
 निकल जानकाक बिहारी। एक राजाकी म्दर्या और दूसरे राजाकी म्पू
 होकर मी गिरघर गायामके बरबामे समपिता समाजकी अमर बिरोहिनी
 मीरा निकल जाये जिसको बाभीके बरबाम भाव सेबक है मम रेहन रखा
 हुआ है और काटाके पकका बनन पाहकी घारा बहानबाभी उर्मलियामे
 बिवा गया है। जिसम तुलसीसे पहले हिन्दी बोलते जायसो मिने और
 हरिरसमें मोतप्रात रागगात। जिसमें गायनका कलम और काव्यकी
 कलम साव-साव बलानबाके प्रागतामा मिने और दुम्नेनननन करिबिबिद
 बरान हा। जड़ी मीमर अमोर अर्ली 'मीर की बाभीमें मुन पड बि—

“सच त मार गरीब है जाय गरीब निपात्र,

कृपा कारि करि चरिबी ब दिन है मुगमात्र। (१०१३)

स्वधरो आगो-अम अपना पर (दबरी-जिला नागर सा० पी) छान
 का काव्य हुए तीपद अमार जली मोर बगी पर बहत मुनाई पड कि—

‘धन के हित छोड़ी धना पर में

— धन उयो हिम अत्रि की ग्रीह मया;

हम माय मिरे ध मुनी जन के

अब भी मन है ते बिजाह मया।

घर जात बने न बम बने बाहिर
 'मीर' कहा यह छाह मया
 बुविषा में पर्या मन मरा मला
 बुइ सुम्बक बीष क्य छाह मया ।"

बमब्रपण रात्रके बीषान-यन्म बपनी रेण मकिनटे कारण निकामे
 के 'मीर' क बाण ह्ये ब्रह्मरीजीको बापी मुनाई पर जा युगची नयीवे
 की मुमोमे मंमप मेतो दिसाई दे ।

फिर बोइ पीछे लौटे । हम देखको कोमल और बमत्कार मगी मुमो
 टेन मुम-निर्मिता भारतमुकी बापीमे हम देण ममात्र और माहित्यकी
 बाह्यकलाबोका बिष प्रतिबिम्बित देखे और फिर भी उनका यह
 बनान देखे—

"सरबम समिक के मुदास दाम प्रमिन क
 मला प्यार हृप्य के गुलाम राधा रानी क'

फिर मुम बोये कि हम नाबूराम दांकर दामकि दगन करे बिनवा
 गुनवा स्वल्प है कि मानो—

"लज म निमिर के हिय में तार मारा है ।
 फिर ह्ये निरें दियामपपर बिचरण करत घीघर पाठक जा मगापि

यत्रकी मोमानर मस्त होकर बह रहे हो—

"क्यों जादू-मरी बिश्व बाजीगर कैली
 जगत में मुक्ति परी दास क निर पर कर्पी ।

और निरि मृगाकी परछाहीं मरोबरोंमें देगकर बनला हुआ मोयम
 रने बनला छा हो—

"प्रकृति बहई लक्ष्मण कैदि मित्र रूप मँबारति
 पन् बल पकटति मय छनकि छन छन छवि धारति ।"

जानने ह्ये राय देबीप्रमाह पुण मिल जावे जो 'भाब रम छन्दकी
 कविता निरन्धनकी पुरन प्रमिदि मिदि मित्रकी स्वामिनी सगस्वनीकी

कवितापत्र

भारापनामें मग्न हों ।

फिर मिल जायें हमारा साथी सस्यनाउपस्य कबिराल और पं० बनारसोशाम बनुरेबीकी छबर पूछनेके बाद छाना-सापटो करनेपर अपनी बुपसो टोपीबाछा मिर तुकाकर कहें—

‘क्येरा मल्प ग्राम की बासा

क्या तक्स्तुफु जान ।’

और इस बातकी शिकायत करें कि सम्मेलनकी सीमामें क्यों यह मलय मारायण कुटीर बनबा दी गयी जब जमोतक गनेरापंकर बिछारकी ओर सोगोंका ध्यान नहीं गया ?

ज्यों ही हम तहाको बरबस मूर्ख ~ क्योंकि यदि गुण-यान क्रिमे ही जायें तो गुण पाया चुक नहीं - ता हमारा युग हमारे सामन लडा है ।

बाबू मैथिलीशरनजी मुष्ट देशके शीव, शीव आदर्श अभिमान बलिदान और मुसोंका क्रोमलतम और प्रलरतर प्रसाद लिये उपस्थित हैं । सो ब कहते हैं कि—

‘जा पीठे भा रहे उन्हीका

मै भाग का जब उपकार ।

किन्तु बीज इनकार कर सकता है कि रगोंकी प्तिमसनपर बिना सम्य रसोंकी क्रममे मुष्ट लिलमका उत्तरदायित्व ब अपनेपर किस तक आ रह है ? उनक लिए बड़ी रम रम है जो समस्त यगको लिया जा मके ओर योग रम दिव है जिस लनके लिए मुसोंके मुनहने तुमैपर भा ब नीचको उत्तरदायित्व तैयार नहीं । हरिओबजी उपस्थित हैं हिन्दीमें आज मुष्टमें एलकी बजनेकी बहानीकी और कलाकी नयी विधिते जान बजनेके लिए । श्रुति-बानी और उदासीन मत्र लिये यद्यपि लोकम शोचते-ते । मनहीजा है । सामन ही । किउन तरफमें उनम क्रमम पकड़नेका गडर नहीं गोगा ? ब बाध्य ही बाकते हैं बाध्यमें ही चर्चा करत है । मुष्टकी तेज दीपको सडकन कजकर नापाड भा हा उठते हैं । किन्तु मुष्ट उनके

एकदम बैठकर खेला है।

बनकर प्रकाशकी धारा है। धारापकी शिल्पिनी स्वकी उद्योग
बदला मुपस्थित हार, मूसोके पुपेसि मूय कए महकी तिम्य तबान
दुपयोवा बमर बीमर जब धामुपकी मरुपपर बदलत लगता है तब
मसा प्रमाकी कहम बापी बमकर बहनगिन इली है। एतकर
इतिहास वकीही कइकटाइम तगमन मरुपानि इमपमकी-मी
उंनियीन पदुंय बहनबापी रंगोमी दो कि दब-बाभाबाव मपू बर
है बीर बाभा ययाय रूपमें मेहु-मर्मा हा उठी। किन्तु दिन उग्र मानव
ए बा बय। बापी इबाई बहाउपर किमीका मना भीर लकिमानकी
ए बा ययी हा। निराका—मूसोके पपमें अनठ गिनि-गुमाकी बडात
पीडकर रकतस लहुकरात अपन ही माध्यपर हैकना-मा बर मरुताना
केर बरु बडात ताइ हो जायेगा। कबोन ? प्रणय और प्रलय माना एह
ही बनिमकी उतक पान हो तमबीने है। उमक प्रलयका मध्य है कि
एतानके बा भी बायोकी धारा प्रकाशित है और उमक प्रलयका मध्य
ई कि बर बीकममें भाग लगाकर मार मुला-मपमाका नाव डीना है।
निजातपरम है मानो एक भरता है ना कहता है—मरुसाक प्रनि-
मिब मरुतार है और मागकिनोंके दहन छत्याम बचकी मरुह छि-न
किन्तु टारने हुए बासुबाव अमरुय प्रतिनाम निमन। कायरप्रया
एतानके बीमर और इकिरो-पुनकी देन जो कामस निमन ममर
पदापर बरत है—

“मुझे दस्य नामा सुरगग किह भा भाय स्वाधानना के।”

और उमकी बीकपर लड़े है उम मुगक एम टाप्नकार भाषाय बवप्राय
नाम 'बान और ब्याकरमकार बिन्दु र कामनाप्रसादसे मुह।

कारेकी और मुयडा माना मुयका दो मकिठ-बाकिहारी है। बलि
मुयारीका मुयकीत है काय-बलि मरुतबीकी बमरुपारा है।
बायोकी बायना पब बहा है जही मूसोका बीमर लेकर हो पदुंया या

सकता है। जोवन प्रखरतर बीवन साम कोमलतर भावनाओंमें भक्तिसे
 हृदय-यत्रको सूकर लोक-लोकमें फैली जा रही है। तारा पाण्ड मानो अपने
 काम्यके अर्पण अपने अस्मिताका सुभापर अडाकर संवार रही है।
 विद्यावता कोकिल सेवाका पत्र आहवाका भाग और सम्यक्की माननाके
 साथ अपने स्वरम सुधको गूँथ रही है। सुमित्राको मानो सुधका किमी
 बाहको प्रसन्न-विह्वल लयमें बिना नहीं छोड़ती। व मनोभाषाके प्रकटी
 करणके लिए बाकीकी मुहताज है उसे छिपाएके लिए नहीं। मुकुटपर
 'माधुरी' लकन आय। और मातृ पूजन के रुप डा रह।

बचन बीच ताड़नका मस्ताना बैसक लकर आय। जोमोन छत्र
 काम्य मीति वास्तव मर्मादा क्या-क्या नहीं बसूक करना पाडा विविधो
 हम मस्तानी बेनमे। खोग ठहरे नहीं कि उरा इस बाहका तेज समुच्च
 अपनापर भागपर देखें और पलकी तपन चारा बसक मयी। मिसिरकी
 उज्ज्वलता मस्ती और अस्मिता तीना मानो एक सुमरेसे डोड़ लेत है।
 सुमे है कि अकल्पक छठरना मही चाहती। हरिकृष्ण प्रेमी कवि है।
 अपने इरादापर अस्मिता समर्पणके पात्रकपलस परेषान। जिस दिन भी
 बास उठता है उग निन बाकी उमेल उठती है।

जगहन ज्ञा स्नेहको पृष्ठभूमिपर सुभोकी तलबोरास कला मन्दि
 सजाता-ना कवि है। दिनकरकी एक मृदुम मूठकासका बेबल अपने
 समस्त कामकाको लकर छटपटा रहा है और दूसरो मृदुम बिरहका
 विविधित मस्ताना समस्त सुभासे गाव प्रमनलील है। उसके मस्तकम
 अर्थात् है; कमजम बागका प्रवाह है, भावों दूर तक देलती है और उमन
 अंतर है मृदुम मानो कुछ बंधा-ना है और कलममें मनबाहा है।
 मेगाको नगापिरात्रका हिन्दा कविताके पदम प्रकरी प्रतिनिधि है। वह
 सारना और अट्टाकोका भावामे बहार बाकना है प्यार बोलता है।
 भगवतीवरम बर्मा हृदयकी बहन है कभी काम्यम दूको-नो कनी
 बरानीमें तीरती-नी। रामकृष्ण मस्तकके कुछ नीच और हृदयक कुछ

इन विवेकीकी तरह धीठल और ममदाकी तरह मुहर है — अपनी
 पूरके बेराग वैभवस युगकी स्वरा रेखा बनता बना जानेवासा स्वर्णमाका
 सदा । कठिन है, कि इस समय उरकी याद न जाय । कास व
 क्लिवागिनी का प्रसन्न कर सकी होतीं वे हिलोरे काज युगकी कारियां
 बन मही होतीं ! अभी भी उरसे उमक गीत दूर मही पड़त यदि उस
 मूर्खी बुमोकर आरसबादिता न सिखाया जाये । मुँहफू है ? विमुक
 विप्लव विस्मया ऐसा भी एक स्वभाव दवान होता है — क्या न मानें ?
 कोमलमिह एक बेकाबू बारा है । किमारे तोड़कर बसनी ? चट्टानामें
 बिबाइती है, और कोमल बहियोंने गुदगुवाती है । दूरस और बेरस एक
 कामक पुहार रहा है—उदयकार मट्ट । यदि इसका हृदय-वैभव सम्पूर्ण
 बनौपर भा जाये तो यह अनमोक सजाना किनी गिन हिन्दोको निशक
 करेगा । 'हृदय' क मरनेस जो कराह जो उठीं उरुं व प्रतिभाएँ जामेंगी
 किहू जानकी मसाम डाती है । उमकी प्रतिभाक पत्र फडफडाव ही ये
 कि मालवक बेभवका मसक यमराज जाय उठा । बाणोके हव-मन्दिरमें
 गाव सिरके बल बढ़ रहा है । युग प्रतापाम है कि वह क्या बड़ायगा ।
 मरापक पायक कसरी अपनी यडावमि लिये युग-पत्रपर अपना रथ
 मिय पत्र-पुष्पक-तोय सेकर बना जा रहा है । मनाजबन मानो हमारी
 प्रतिभा-विभूतिका लभाबना निकोता है । ममदा तर बाभाकी महज
 बनिमीका ध्वनियाम यडावगत गुजित है । जा याद जानेका याद जाय
 यह ममकीप्रमाद बापेयो कोमल पहियोंने मयुग और जागृत पायक
 है । धान्तिप्रिय कितना उपेक्षित किन्तु कैसा निमल ! भाग्य-मा बडाबु
 और भावाशाओं-मा प्रमतिनीस । बीरेण ताजमहलका पायक हृदयक
 शरें अभिमतका बडागा-सा । रामानुज माना काव्यकी कामसता और
 बापोंकी तरसताका अपना नाम है । प्रभाद पुण्याव और प्रतिभापर
 बनना बडाये हुए बलिपन्थी-सा है ।

मोहनमास कास विवेकी युगकी धाराके प्रतिनिधि कवि है । उमकी

छो। जब कठिन उद्गु और प्रारंभिक शाब्दाकी भाग का जाती है तब
 उनके दृष्ट कर तब भाषाक न बड़े कर उनका एक धनग स्वल्प
 राजरो तरु देवपर भाग बाधा है। किन्तु जब हम कठिन मन्कन
 पद शिर्षों में टुंमकर उनका मतिपोखता नष्ट करत है तब हम भाषाक
 कृत बानका तरु सरस होनक पथम रोड अटकात है और पाकिस्तानकी
 संघ निश्चायन समयन करतें हैं। मैं ता राष्ट्रभाषाका लक्ष्य जब इतिहा
 मानने जाई तब बंधका उड़िया तलुनु तमिल मन्कनम कप्रह
 मग्री और गुजरातीभाषियाम राष्ट्रभाषाम बाहुंगा तब उन भाषाकाय
 मिलने नवसाधारण मन्कन पद काममें भा रहु हाग और हिन्दी
 भाषाका दिन मन्कन पदमन्कन समस्त जानम मरसना प्राप्त हागी
 मन्कनक नम मयसत लुमानका में स्वीकार कर लेंगा। बराकि न मुस
 मानक हमारेपर भाषा गढ़ना स्वीकार है न परिमिषियाम पबराकर
 मरा मना स्वीकार है किन्तु जब य निम्नम जाईगा हैदराबादम
 गठना पंशकमें जाईगा बामारम जाईगा सामान्य जाईगा और
 शासनमें जाईगा तब मैं उन भाषाकी स्वीकार कर लना चाहूँगा बिन
 के नमम मरा भाषा मरे दगकी जन सीमाभाम समस्त जानकी बोड हा
 बड। श्री है बागानी चीनी तुर्की अरब और मंगरी भाषाका बिदगा
 मन्कन और जब स्वीकार करेगा लाषारीकी तरु और मईय पन्कनम
 मन्कन यि म उन लाषारम प्रथम बिम मूण लक्ष्य प्रतिगम इन दगका
 मन्कन और हम दगक माशिनका व्यक्त करमबाकी प्रत्याय तदा
 माशाय बापाधिमिंके चुन लें। मैं यह बनी मइ नहीं सकता कि भाषाका
 इतिहा मपदा मरा कर हम जीवतका व्यक्त करतवात बरम संकटनु
 लक्ष्यमिन्मन मुह मोड़े।

बाप जानते हैं राष्ट्रभाषाकी विरोधिनी भाषा कौन बना रहा है ?
 और यह कहां बन रही है ? न बह प्रयास कानी या पन्कन टप रहा
 है न लक्ष्य निम्नी और लाहौरमें। मित्रिह हनुकींके अगाधर बिद

विद्यालयों तक बेस भरम बह कौन-सी भाषा है जिसका पढ़ना हमारे
 बच्चोंके लिए अनिश्चय है ? आसतु हिमाचल एतके स्थापनापीय सुखर
 अन्त न हानका गव बनबासे अंबरेडी राजकी कृपासे किस भाषामें अपने
 पसरे किमत है ? देस भरकी स्थापनाय स्वराज संस्थामेंसि लपाकर
 भारासभाओं तकपर किस भाषाकी प्रमुता जारी गयी है ? पानके
 मायब लहमोकरस लगाकर गवनर और बनर बनरस तक किस भाषामें
 राजाजाएँ बे रह ई ? हमारी समृतिको चाह बह मुगल-मुगकी हो वा
 राजपूत-मुगकी या बति प्राचीन मुगकी घोष करमेवाले विद्वान् अपनी
 भाषाको किस भाषामें रखकर विश्वविद्यालयक आचार्य बन रहै ई ? वह
 कौन-सी भाषा है जिसमें अपनी पाण्यता सिद्ध किये बिना इस लक्ष्य
 चिन्तक अतुर और आकर - कोई पाय्य नहीं माना जाता ? जब
 मार देशमें अपनी बानी पहुँचानी पडे तब किस भाषामें लोकमान्य तिसक-
 को मराठी भाषा लखनपुररायका पीपुष धीमती एना बेमेष्वा गु
 इच्छिवा और कामनबोल सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीको बंगाली धीकस्तुपीरना
 आर्यभरकी हिन्दू और महारमा गांधीको यंग इच्छिवा और हरिजन
 प्रकाशित करमे पड ? वह कौन-सी भाषा है जिसमें हम पदे लिखके भाग
 प्राप्तिमें अपनी बात पहुँचामके लिए चिट्ठियाम और चिट्ठियोंके पत्रामें
 लिखा करत हैं ? राष्ट्रक परीरपर आधिक एस्त्रजिमाकी तरह दीडन
 बानी रेलका विद्याय नारदार किस भाषामें बन रहा है ? भारतमें किस
 भाषामें बन आयुक्च है जिसके अवनरक और अनुवादाको लेकर देनी
 भाषाके पत्र अपने कलेबराका नियम कर्त्तितन कर घण्य हात है ? हमारे
 दरबाजोपर किस भाषामेंसि लगने सये है ? विद्वताके गहनती आममानम
 विवरण करते हुए आज बस पढ़ा-लिखा भी अपने हर भाषयम किस
 भाषाके बा-तीन शब्द लिखये बिना नहीं रहता ? जब क्या जीने पहुँचे है
 कि अंबरेडी इस देशका माचारण भाग नहीं बनायी जा रही ? हमें ता
 तभी आश्चर्य करमा चाहिए वा जब राष्ट्रभाषाके पत्रमें हमारा अणन

लता व शोभा । स्वगाम्यका खरबा है तो पाकिस्तान हाकिम है राष्ट्र
 पदायी खरबा है तो समयका हाकिम है । यह समयका प्रमाण खरबा नहीं
 है । इस हाकिमका अधिक खरबा करव हम इसका नीचे अधिक पागो नहीं
 लिखना चाहते । हम बातको हम बना मुफ्त है कि जहाँ अंगरेजा देनाक
 समय विरचविद्यालयोंमें अनिवास है वहाँ इस देनाकी काई भाषा अंगरेजी
 को पाठ अनिवास रूपसे पढ़ायी नहीं जाती ? हम जानका जिन्नी नहीं
 बनने क्योंकि मुर्य और बापको विद्वानी नहीं मानते । किन्तु मुहकी
 लतामें भा हम खरबाके बन्द कर टण्डकम गह सेल है और
 शारी ठाठतामें हम समय बन्दों और भावकाममें खरबा गहा
 कर लेते है किन्तु अंगरेजीके प्रसारमें हम मकवा मकलमीय है ।
 मकलमीय को देना मरमें फीका हुई है और हमी दगाकी भाषा है कमी
 रिक और कमी अरबियम सोम पढ़ते है और यह उस समय जब हमने
 पाठ बहुमती पामिक सामाजिक साम्प्रतिक परम्परा उस भाषाम
 दी गई है । हम मकलमीय एषियाका स्वल्प सामन रखकर भी कमी पला
 मुनी प्रारमो बनीं मपाठा तिखती और बीनी पड नहीं पात जब
 मपाठोंमें समान रूपसे बड नहीं पाते । पाठ-म किन्तक और तागतम
 मपाठोंमें भी बान नहीं । घोडो-मी ठालीय एक शोने न हात हमारे
 देते है बम्बका अंगरेजा पढ़ायी जा रही है । अंगरेजाक भाषाम हात
 मपाठ हम देनी भाषाओंमें हमसिए नहीं मान दिया जाना कि उममें
 कमी बम्बकी कमशोर न पड जाय । यह सब देना-मुनकर नी हम धारम
 में मपाठ कटव है कि राष्ट्रभाषाका दुमन कीन है ? ई नहीं चाहता
 कि इन मकलमीयपर गभीर पाठे हाककर मकलमीयको मरन खरन रगाम
 विरच करनका पातक लेन हम और अधिक गये । हम दूर रहना
 पण है ता पीठे दिनों बाद जानेंगे कि हुकने मूक की हम निबट
 कामा चाहते है ता निबट जानेम रूपे कोई नहीं रोक सकता । और यदि
 है बानी मारा गयी नहीं गय मकले कि हिन्दुस्तानको समस्त भाषाओंमें

बहु धीमे परिचित हो सके और हिन्दुस्तानके बाँके परीकों तक समझी जाये तो हम अपने मस्तिष्कके अभिचारके जिसबाद चाहते हैं कि ये रहे । हम देशमें अपभ्रंसके रूपमें एक परिचित और सरल भाषा बनती रही है और वह बोझिलवालोंकी आवश्यकतापर परिचित होती रही है । कठिन शब्द डालनेकी शिष्ट करनेवालों और उनकी अकड़की हत्यासे युद्धके साथ मग्न लाल होते जाते हैं । चाहे वह शिष्ट कठिन फारसीकी ही चाहे कठिन संस्कृतकी । आजकी हिन्दी देना ही अपभ्रंसका स्वरूप है और वह अधिकाधिक सरल होती जाये ।

रेडियाका नियंत्रण भी भारत सरकार करती है और अपने प्रकाशन विभागका भी । किन्तु अपने द्वितीयक प्रकाशन-विभागकी भाषाको भाषी रेडियाके सारमें पाठिककी भाषाको वह हिन्दीके रेडिया मंचपर नहीं चढ़ाने देती । भाषा पढ़नेका यह 'अध्यापारेणु व्यापार' समाचार और समावेदन समा-प्रियता और आम-वृष्टिकी समताकी लाचारीसे लाभ उठानेकर महत्त्वा पराम एक दुपित भाषा सादर रहा है । युद्धके लिए चम्पा केने समय विभाषणमें सरकार और हिन्दी बोझी है और रेडियामें समाचार मुनाठ मध्य टोक सुमारे हिन्दी । पश्चिम मीरुपों और पादरी लुटाव रत्न गये हैं कि यथा मुनाये कराने परीक मुनाये और बाह्यल मुनाये । और भारतो बहुजन समाजको भाषाका नीचे विफलता बढ़े पैमानपर प्रयत्न जारी है । आकाशवाणीके द्वारा द्वितीयोच्चैः हम और जनताका ध्यान भीषा का और राजनाथ पाण्डेय साहि मञ्जुलान कुठ प्रयत्न भाषिये य । किन्तु संवटिन उद्योग न हा तब तक कुछ केने हा ?

यना इतर पक्ष प्रतिभातीवता और कुरी भाषा पानका सुमरा स्वयं छिनमा है । किन्तु इतर उन्नत सुधार हुए हैं । हिन्दी भाषा मूलजन और निम्नतमार्थी नियंत्रणमें हम विधामें हम समष्टि केना शक्ति मनी हम अपने सुदृष्टन मन्वस मानोसाक अग्रमाहिन मन्वर भगवतीकरण नरेण प्रशय मञ्जुला किनांर प्रभा-वीके कसाराराका भाषाका नियमन

कृपापर जीवन बितासे न हम पुराण बस्तु संग्रहालय वाली मुहाफिजखानों-
 का ही साहित्य लिखें जो केवल बस्तुओंमें बँधा रहे और छूटे-छमास व्यवस्था
 बेनबालाके द्वारा देखा जा सके। दूसरी ओर हम इस बातसे भी सावधान
 रहें कि जो कुछ लिखा जाय वह चाहे बँधे बिनामें प्रकाशित होनेवाला
 सामयिक पत्र-साहित्य भल न हो किन्तु बँधे बपोंमें प्रकाशित होनेवाला
 सत्सिद्ध आवश्यकताओंपर बहस करनेवाला शक-जीवी साहित्य मात्र
 भी न हो जाये। हम सिलें वह जो प्रतिभाकी नवीनता और विवेचनकी
 ज्ञानगमित शैलीके कारण अनन्त बपों तक जीनेकी अपनेमें सामर्थ्य रख
 किन्तु दिमागी एवाग्रस लगाकर खेतों और ससिंहामार्गें काम करनेवाले-
 का जीवन-मापी जो साहित्य कहना सके। हम सिलें वह जो कोटि-कोटि
 नर-मुण्डाके स्वर्णोंका आवरण हो सके और उतरते हुए आवरण बढ़त हुए
 पीरुप उमरते हुए उद्योग और समर्पित होती हुई सेवाके पथमें अपना
 साहित्य बनकर उठर सके। वह राहगीराके समय काटनेका कुम्हाड़ा मात्र
 न हो किन्तु समयका पथप्रदर्शक राहगीर भी हो सके।

लोक-क्षेत्रोंमें पृथ-क्षेत्रोंमें औद्योगिक-क्षेत्रोंमें और संकट-स्थलोंमें नजर
 डालकर देख लियेके कलाकार ! कि तू कहाँ है ? तेरी कृति कहाँ है ?
 तारा प्रभाव कहाँ है ? तेरी प्रतिभा-हीनतामें तेरे पृथ विनयेके धमके फल-
 स्वरूप भल हो तुम स्वयम् विमान जा जाये या तेरे सपनाका रीरुप तुम्हें
 स्वयं बीपन लम्बे किन्तु साह-साहकार बड़नेके लिए विरहके विचाराले
 टकराने और लोक-हृदयमें उतरनेके लिए, मानि-बैता विरहका धारणपथ
 और उसकी आवश्यकता बननेके लिए अबतक तू अपनेकी पराम्भ पाठा
 है तबतक कोटि-कोटि नर-मुण्डाकी बाणाके बाणाचारी कहलानेका और
 काटि-कोटि नर-मुण्डाका हथकीपर उतारकर उम्हें आराध्यपर बना
 बनकी सर्वनी चटानका सावध तुम्हें छाटना पटना। मानव शरीरमें
 हृदय ही मांस है मस्तिष्क और हृदयमें भी कुछ रूना कुछ नरा है।
 किन्तु शरीरमें पाणी जल है। वहाँ प्राण रहता है। वहाँते मादर

बनकर बोली बनकर जाती है। उस अगहमे मुख्यतान् धरोरमें कुछ नहीं
 गता। क्या बनी बोली बिदबकी उल्ट-पुल्टका बनी एगबत खात्र निग्या
 और पनपातका म्नुनिस्यक कूड़ा इतके काममें लाया जान लमे ? और
 इ मब माद्विपक मामपर ? हिन्दी पद्य परसों तक सत्र भाषामें लिखा
 जाय वा। कस मैविर्सीभरन गुप्तकी उँयकीन गद्य और पद्यक मुमका
 निप्याय। पद्य भी बेबारा लस्त्रकी लालके बार पय ईदला रहा कि
 हिन्दीमें अपनी कोई पति बना स। त्रिबेदीजीने उमे गति दी प्रगति थी।
 पन्नात अचिक्र अय देना पाया, मुद्दाबिरौत समयपर भाषा बाषयान
 बबदा रककर टहरला पुष्ट-अण्डोंने अय बहुलकी रेलमाडीक रास्तापर
 लय सगी और डरी सखी बनना सीला। चिह्ना और मंकेतोंन भाषाकी
 रिमाण बारहुरीपर इवम-इवमपर पहर देना सीला और बिपयकी
 बिबिधताके मिश्र मिश्र मंकेतोंनि यह दिलाया कि बिसो दपारभका रथ
 रगों रिषामें जाय या न जाय भाषाके निर्माताकी मूसका रथ बगों
 रिषाभोंमें लूठ जाता-आता है। त्रिबेदी-युगल वा मंकेत दिय इम बनीं
 टहर है। बीने हुए बनापर कम्बडा करना तो पूर कममरियटके निपा
 दिवोका उरु डर-तम्बु उलाइत और हाते मुम्ती जाती है। हमारी यह
 बसाया ममाण हा।

गाँवोंकी धार धरोबोंकी धार उकरतमग्नोंकी धार कौन जायगा ?
 इतिहास क्या कलेजेमें हो हा लनको है ? क्या गाँवामें रम नहीं कि
 बगानियाँ नहीं ? गाँवामें ताय नहीं कि तयय नहीं ? गाँवामें रकन नहीं
 कि मुत्र-शुद्ध नहीं ? फिर शाहुरानी बन्दासय बनानके बजाय इमन गाँवामें
 रल-नरय बगों नहीं किया ? जिम काशीप्रमाण जायमबानन लखइहरोंका
 बाबा इकर हमार विष् दानाबिदवोंकी भाग्यीय दामन-नीति कुँरी हमने
 स्वयं काशीप्रनाइकी मादपर अरने अजातवा लखइहर गदा कर लिया।
 क्या इम अपनी उपेयान मोरबमय मौगीनकर हीराब-का गतिहासिक
 मुम्तिके ईनय अयकण्ड रिद्यापकारका बिबिधके मिश्र-मिश्र दशाकी उबन्-

पुपसक ज्ञानम-स भारतीय गुरुका डोरा बनकर सुदूर आनवाले बाबा रामाशर बाबो गुरुक सादृश्यवायनको और उल्लामगदक कोनम महा काशक इतिहासक नामपर हमारे उपेक्षाकी अद्वानपर अपन ऐतिहासिक प्रयत्नाके अंगु अद्वान आमवाक लोचनप्रसार पाण-वरो या गायनगानुर हीराकास-अथ इतिहासकके समयसे पहले स्वयंवागो हो जानव काण कविताका पय छाड इतिहासकी अचनाम स्वयं वय — इन मार्गोका भी जिनकी अर्थात्पाप आमुग हाकर हमारा बिरबिबो-द्वारा बदगाम भूतकाक बिरबका परम मय्य बनकर आना आहता है हमारी बाबाक यम-भरीक इन अवाका — उपशाकी उमी मीत्र मार टालना आहता है जिन मोत कि हम साहित्यक युगाबनार आवनवासका भूक आगम अत्यधीह इ ? अपना सनवाम असाधारण प्रतिभा अँदकका राजवार करन और मुमकसे हाम पीटकर उन नगण्यता मय्य कलकबानन वती हम बना अनुभव कर सक्य कि साधारण प्रतिभाके असाधारण और अकक उपम मँदकर बिबागो और भावाको आ स्मरण-यात्रा कलाकाका अोचन-यात्रा बनकर आती है वह भी अपन निगरे स्वल्पम उहूक और असाधारण प्रतिभा कहल्य सकतो है ?

सिगना रकन-कर मही है जिन बनल कला ही नइ सिगना बजानवारोका प्रदान मही है वह मायापर उपकार मही है वह सबाक को छाटा मानकर अपन बह्यनकी डीम मही है वह युग बलामका धुइ समागा सिजातवा आरूप मही है । वह धन है जिन मही इ मवता है जिनक वाम हो वह माचन है जिनपर-म समुचीको समुची आगि चार आधाक एक मुठ-स्वल्प्य सुनरे मुठ-स्वल्प्य पहँच जाती है वह प्रवटी करन है उन परिपारा जिनके प्रवट न करमपर पीकीकी पीडाक अल्प कारमे मटकत रखकटा डर है वह वाम है रवठ बान है — उन युगको जिनम अक्षिवा संचार कर मागाकी तरह गवित और बिरब-निर्माणाकी तरह अक्षिमय बनकर हम साहित्यक बापन वह रनवान करत है जिनम

किन्हीं अपने प्राणों में जम्पे लेकर ठुकेकी उठें वृत्त भूमिक आरूपपण
 विच्छेद कर मासमानका और एक पक्ष और अपनी वाचाके परम फलका
 बना मानुमिवा गोंडपर बाह्य मुकाकर समपित कर दें । माहित्यिक !
 नृमयाविराज है । गमा और जमुना बहानका तर पाम है । नृमयाका
 मलवका मस्तक है । किन्तु यह दृष्ट कि क्या तुम भी किमा भूमि
 काभी रखा हो रही है ? तरे दुपरा-वणाका घाराक किनार भी क्या
 हर-हर और उपराज हा उठ है ? क्या अनन्त जन्म-गमि ररताक तक तु
 पुरुषक मानपा ? और तरा तरमता नही पुकगी ? नत्र हब ! तरा बाये
 और उनक सत्यानास इरियामा भोक-जावन मड सेगा । तरी प्रतिभा
 कापही यामे बिदर अनन ओवन-वापनका व्यापार क्या मगा उम्परत
 पनपर बह तर लौघ म्बकवकी घाराक आर-वार हा रगा इमलिए कि
 कनी कीनी और परिस्थितिको हरी-हरी ररतक मिए उम पुनगम्भा
 और कनकनी बनाप रगनक मिए नून अडाकक बबत्वका मालक छाडकर
 पुन-नराक मिए कपाठार उतारका बाल पक्ष प्रहम किया है । तुम याद
 रहे कि तुम काटि-कोटि भर-मुष्टिके मामन अपराधीकी तरह पन हाक
 बसाव देना है कि ईजातिपरक माहम तरे घराभे कम बहन करनकी
 अपित कविन और बिच-रचनाका अधिक प्राप है और ईजातिपर प्राप
 पणिके कि तरा मुहमाक है । राजनीतिम कक मर जाकके मिए अपनी
 कावकी प्रमम-भापना इमलिए मरबीली अनुभव करमा कि मात्र अपन
 शक्ति मपनोपर मरकर कक और ककक बाद अनन्त कापाकी बप मकन
 बाक युक्ते नृ जिशा रहे । और पांडियाको याशन-मे पुनरापयामे-न
 पतिपाव-मे बिचोमि-म रामितियामे-मे और मन्महराम-मे नृ पधारता रह
 कि रम्या यकीम इमा उंचर-म मिरक नूमोपर मिर उतारकर म
 सेनेट इमो कीनयमे-मे है एक भाषा । म्नाबिज्ञान तेरा पप न पकडेगा ।
 का तेरे पपकी मरन करपा । घराके बिचारनन तेरा पप न राज ता
 मावा और बिचरोका व्याकरण तरा पप कयी कर रोकेगा ? प्रेम पूषा

ब्रह्म मन्सर दप मोह और काम मबोविज्ञानका इतना हा हा मूकपन
 है । यदि इन्हे लेकर उपदेशक बननेक लालचमे तू उपदेश हो उगमन
 और आदर्श ही निकलने कम तो तुझे मरनसे बिन बधा सक्ता है ? किन्तु
 यदि तू अपनी कलाकृतिक उदाहरणके रूपम तार विकारोंपर प्रतिमा
 पुष घोष कर तो मन्दक यहाँ भव कृष्ण पैदा हो जा न हो किन्तु
 ध्यास ! तेरी कसममे उतरनबाला कृष्ण सतामिरवाकी छाती बेव-बेवक
 खेतीकी आगापर झूठे झूठता कापाके हृदयपर उभये करता और युवा
 युवा तक सोयोधी भीषणर घसठा बन्दर बायेमा । यदि अनुभव करन
 बाला म हा हा रोगबासेका बरन उठा ही क्यों हा ? और तू अनुभव
 कर कि मबाधामकी भारतीय सभितने तेरी बाणी चाही थी इसलिए कि
 इस बाणीसे बहु उनके बावदका लिखा मिटा सक जिनके भाव्यर मुकाम
 लिगा है और तेरी बाणीम—उस बाणीम जो आसेतु हिमाचल व्याप रही
 है—'मुक्त बोधन उनके पाणपर लिग सक । वह तर्काई जो कार
 धारोमि जल रही है वेठामे तप रही है अन्तिकी साधनाक लिए तेरा
 मुँह ताक रही है ।

हमने आज तक राजाओको सिखा नबावाको लिखा बामासाओका
 लिगा । बौद्धनीकोरु ड्राके इबान बनलेय हमन कीन-जा धोरक अनुभव
 नहीं किया ? आज बडा तो हम पुरीद कप हमारी घाप लुरीद भी बवी
 किन्तु जब वाधोमि इश्य बने तो गडा निकसा अमीर निबसा और मरा
 पुत्र और पुत्ररा पुत्र फिर बिक गया । बडा यं कुर्मिन परा जा हमारी
 सामर्थ्य-हीनताके बलपर हो हमारा धाम्य बना बसा जा रहा है तुमग
 न टूनेमा बसाकार ? ये पाटलाकारो है यहाँ बलाम इल्लन है । ब विरम
 विद्यामय है यहाँ बाओला ज्ञान आधपर बाओरको पगदरहा र्दरम जाया
 करता है । यं धाय है इनम वनाका वनन थी उत्पान है और उठावा
 उत्पान भी वनन । यं गिर्वाबदालय है जिनम तू नहीं तप गागक
 तेवार हाड है जो रचनम जग ही तुमग मिसठ हा रचनम यं तुमगा

एकर सेवा नहीं घासम ग्रहण करते हैं। वे तेरे मालिककी पराधीनता
 की दुःखान्तरिकी तुमपर लड़े रहनबाड़े पहरेदार ठाकते हैं। बड़ लाल
 काम बनता? उसके पाम अघर इसलिए नहीं पहुँचे कि फिर उसक
 बशानम तराजू तक और ठरलवार साम न सठ सवगे। तू बीटा गात
 की मला रग और तराजू पसवार तक और सेबाकी सागान मिहासना
 के शर, इठारमें बातियाँ बनाकर खड़ा कर बी। जहाँ पड़े-सिले बीस
 शमन मौ नहीं वहाँ घेगियाँ बन गयी। ऊँचा जपान और हुबलठा
 खर हमारी जमीनपर माक-घाय न बायें लभी आ-पय है। संघत गिन
 चुनके हाथ है बह गिने चुनकी बाति है और धम साँस सपम और
 लवनाय - कोटि-कोटिक। सब कुछ 'हुड'के काम मानकी बायें है
 बरने है पगकी बासी पम समस्त कता है। तुमसीदामजी कहत है -

"नग जाम रग ही की माया।

और तूने यह सटार दिया है कलाकार। कि तेरी बिक्रीके बाजार
 पुक नके किन्तु मानकी बोसीको मानन नहीं समस्त पाया। भापाम
 गुबार हुए, तू पबराया लिपिमें मुबार हुए तू पबराया बावदा बदल
 तू पबराया दुनिया बदसी तू पबराया। किन्तु तुम स्मरण रहे मारी।
 तू नाम पबराहट नहीं। पबराहट काचारी हाठी है और काचारीका
 ताब नष्ट दिया करते हैं पाल-पोसकर अपने पाम नहीं रना करते।
 जो मरक बा मरण है जिस तूम निर्माण किया है। और इमीको और
 इयो इय्यो सिताहकर ताड़कर या मरोइकर तुम बा दुनिया
 बना देना है जिम [अपनी पीढ़ीकी] सोपते समय तू अपनकी मरत
 बनून कर।

मय्यमन? जान य? जमोमब है या मरण त्यागर। गाठीबा
 है नही और जबाई जहाबादे माक-साँसरा हिताब लिना जा रहा
 है। विडर जमनापजी हा घामय मेरी कटिमा-वोको ममस्तने हा।
 मेरे बिल मय्यमन तक प्रतिमा है। बह १०११म पाम करती लो मा

रही है। वह है कि आज प्रयागम है। कल नामाके नीबानक परपर है। परमा फिर प्रयागम है और बार-बार जलमें बनी है। फिर वह लाहीरक किसी संकम मैनजर है और फिर सोक-सबक-मामितिके तिरपर है। किन्तु मैं मया उम प्रतिमाको हिन्दी जगत्की कठोर बाजू रखते हुए, हिन्दी जगत्के चरणों में ही देखा है। वह प्रतिमा मुझे सिपह-मालार मस्त और साहित्यिक - तीना रूपाम हीस पड़ती है। उसका मनमूषामें कांति है मट्टीम निरुचय है और उसकी बतरतीव हिन्दी शरीके कुछ ऊपर बमबती बालाम राष्ट्रमापाक बमिमानकी आरुच्य ज्वाला है। यह सम्मकल जगतक मेर मसम उस कविकी दिव्य कविता बनकर गटेगा तबतक हमारी पीढ़ीका समपन उसके चरचामें रहना चाहिए और तभीतक प्रयाग हीबराज होनच जपन जीवनके फटेको बरामें हुए है।

मैंने कुछ मित्रोंको पत्र लिख के और कुछ मित्रान मुसे। जो सूचनाएँ मित्री उमम मद्रास हिन्दी प्रचारक परम उद्योगी और आज राष्ट्रमापा प्रचारके उद्योगो तथा हिन्दी प्रचारको मूर्तिमान् स्फूर्त धीमान् बाबा बालसकरके दाहिन हाथ धीमुत हृदियत शक्तिने सूचित किया है कि राजगोपालाचारी-मन्त्रि-मण्डलके दिनाम महामम ^{विरोधी} विरोधी आन्दासन बस रहा था वह उम प्राप्तकी राजनीतिक हुआ था। और कांप्रगका बच देनके उद्योगियाने कि राजनीतिक साधन बना लिया था। नागपुर विश्वविद्यालयके अध्यक्ष डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्रकी राय है कि पंजाब विश्वविद्यालयके परीक्षाका अनुरूप नागपुर तथा हिन्दी विश्वविद्यालय भी करे। बरसी कायेके प्रसिद्ध माहिग्यमी धायुत राकरमहायत्री सकमनाम आर दिया है कि विश्वविद्यालयका का माध्यम हिन्दी हा। हिन्दीकी सभी संस्कार्य प्रतिषय हिन्दी बनाये हिन्दीमें समासोचनाकी एक व्यवस्था निरिचत हो

इनकी वसूली का दुःख्य म किया जाय । प्राप्तापक को प्रभाकर
 एषान सूचित किया है कि मध्यभारतक सहस्रय मुक्ति धी हुरपकी
 वाकित्तियोंका संरक्षक मा० म०-द्वारा प्रकाशित किया जाय तथा
 सरसंगी मद्रिड और इन्टरमीडिएट बाइ अपनी सम्वादाक विनयम
 दिना मापाका पाठ्यम स्वीकार करे । वं० बनारसीशमरी अनुवैशेष
 विनोकराको प्रथम मथा ही ही है और था बामुद्वारापकी अप्रवादन
 वनसंगी माहिनिक मगठक लिए एक बपका वायक्रम सूचित किया है ।

यदि वे बान स्वाम्यपर काव पा मकता और अपनी पात्रनापर
 एषान और हिन्दी बगत्की मना सकता ता मै यह योजना रक्षता -

१ हिन्दी भाषाक विस्तार और स्वल्प निश्चयका दृष्टिकोण मानने
 एकर एषाम प्रबलित प्राप्तीय भाषाक उम एषा मुजाबिरा और
 वाकित्तियोंका वाक को शाय वा या तो हिन्दी भाषामें है वा हिन्दीक विहृत
 मकर है वा बिनका हिन्दीमें लेना उनक मूल रूपक कारण मरक है ।
 एक विपरीत ममिति ही यह वाय कर सकती है ।

२ हिन्दीभाषा मूलों, मापणों और माहिनिकाकी व्यवस्था तथा
 पुस्तिकाका बनानके लिए, सम्मन्म अपनी सम्बन्ध सम्पाशोंका सूचना
 है और वा-परके इम हेतु-व्यापी भाषावतका जो विवरण प्राप्त हो उसका
 एषान सम्बन्धन पत्रिकाक विनी एक अल्प विषय रूप किया जाये ।

३ बन्दीपुरमें बगर हिन्दीक ककारागों और एगकोंकी मुक्ति लेम
 और उनके परिवाराका नशायता पहुँचानक लिए एक ममिति हिन्दी
 बपक विषय-विषय प्राप्तीय मरुपाग प्राप्त कर उद्योग करे ।

४ बिन माहिन-वेदियोंका स्वगवाक ही बया और बिनके परिवार
 दुःख पर मय सुनकी इमके बया मशायता को तथा वा माहिनिक शरीर
 है उन्हें इम बिन तरह मशायक हुए इमका लेना योग्य क्या जाये ।

५. निवि-मुजाबमें देर करके इम रोमन निविकी धप्रपत ममन्मय
 न हूँ बानरक मुषायके लिए निश्चय ममिति अपनी वात्रता प्रस्तुत करे ।

६. अपने महान् प्रयत्नोंके सम्पन्नकार्योंकी रचनाओंपर हम अपनी साहित्य-परिपक्वमें अपने-आप खर्चा करें और अपने कलाकारोंकी नीरव वृद्धि करें। जिन विषयोंपर हम साहित्यम नयी पुस्तकों चाहिए उनका निर्देश भी करें।

७. हिन्दी जनताके समस्त प्रायःके पुस्तकालयों बाचनालयों स्वीडी बाचनालयों ग्रामीण तथा बन्दे फिरेले पुस्तकालयों तथा हमारी प्रकाशन संस्थाओंको सम्पूर्ण सूची तैयार का जाय और उनके संगठन और नियन्त्रण की योजना बनायी जाये।

८. देशी राज्योंमें हमारी एक निश्चित समिति अथवा प्रतिनिधि मण्डल काम करे और हिन्दी प्रचार और हिन्दीके प्रयत्नोंके पथको कठिनाइयाँ दूर करनेके लिए राज्या म स्थानीय संगठन भी करे। वे संगठन स्थानीय धन-द्वारा संचालित किये जायें और बन्दे उनका उचित नियन्त्रण किया जाय।

९. सुविधाका समय आनेपर उपनिवेशोंमें तथा समिष्ट देशोंमें हमारा भाषा-सम्बन्धी प्रतिनिधि-मण्डल जाकर हिन्दीके साथ विभिन्न भाषाओंके सम्बन्धपर विचार करे और उन देशोंके भाषाकार साहित्यकार हिन्दीमें अनुचित होनकी आवश्यकता हो ता सूचना करे। यदि वहाँ सम्भव हो ता हिन्दी-समितियाँ या राष्ट्रभाषा समितियाँ स्थापित करे। इस कार्यमें देशोंके दूर दृष्टि रखनेवाले प्रधान राष्ट्रभाषा प्रयोग विभागोंमें सहायता ली जाय।

१०. इन क्षेत्रोंमें विद्वानों या साहित्यिक विद्वान् जायें उनका हम अपनी संस्थाओंमें स्थापित करें और उनका ज्ञान प्राप्त जानना निरन्तर हमारी वार्षिक सूचीमें दर्ज हो। ऐसे विद्वान् चाहें जिनका धर्म जाति या समाज न हो। इस विषयमें एशियाई दृष्टि रखकर काम करने का विचार मठ पर लिया जाय।

११. भारतीय समाचार-पत्रोंके विभागोंमें हिन्दी समाचार-पत्रोंका हम

बनेंगे न छोड़ें। उल्टे घाटी जमानत को वापस, उन्हें कटोर कष्ट
 मित्रानुसार बाह्य न मिलानपर सामनकी साधारण मुविद्यामसे उन्हें
 विविध नियम वापस तथा अन्य ऐसे ही व्यवस्थापर हिन्दी-भाषी प्रधान
 संस्थागत हम उनका कार्योंमें अपना वायित्व सिद्ध करे।

१२ समाचार-पत्रोंके लिए हम हिन्दीमें ठार मजबूत सबसे बहुराशी
 रिक्त समझाने शीर्षमें शीघ्र बाक पहुँचाने सहाराका कायदा गीब या
 ए गहरोंमें मिला पहुँच सकन आर्थिक विपयम सरकारका जमानत
 वापसमान करें।

१३ रशियो विभाजन हिन्दीका प्रायः सम्पूर्ण बहिष्कार कर रखा
 है। उस उचित पथपर जानक लिए उक्त विभाग तथा मुमनेबाकसे
 हम अपना मंसूब बहायें रशियो रक्तनवालोंकी सूची बनायें और कायका
 वापस पहुँचानेका प्रयत्न करें। आवश्यकता हा ता इस कायके लिए
 एक पत्र भी प्रकाशित करें।

१४ जिनमामें हिन्दी गटा कलाकारों हिन्दी साहित्य तथा उस
 विपयक पत्रोंके हित रसकपर ध्यान दें। उद्योग करें कि हिन्दी भाषी
 मूलक और साधनोंपर बल-विश्व मगहन कायम हा मकें।

१५ केनामे गय या सेनामे कौन हिन्दी भाषी सनिकेकि पत्रों और
 साहित्योका संरक्ष करें, और उनका बचनानुक्रम तथा ज्ञानारमक उपयोगी
 बात प्रकाशित करें।

१६ प्रायोंमें अरबों भी का कल्प पाहियो हा और उनका का
 साहित्य प्रकाशित जाता हा ता उमकी जीब कर उनका साहित्य-बुद्धि
 या भागनीस्वामे महायक हा मजबूतका साहित्य हम प्रकाशमें लायें।

१७ हिन्दी प्रायोंका घारा-मभाषा तथा सामनाम अपन प्रामाणिक
 अनुभवक और दीर्घ-मुद्रक पहुँचानेके लिए उद्योग करें और इनके न
 बचनम हातवाला जानियाँ प्रकाशमें लायें।

१८ प्रतिपत्र सम्प्रेषनक अधिकतरक समय या आवश्यकतापर

स्वायी समितिकी बैठकोंमें प्रारम्भिक भाषाभाषके विस्तारों और कलाकारोंकी आमन्त्रित कर भाषाकी देश-व्यापी समस्याओंपर विचार-निमित्त करे और उनके सम्मिलित उद्योगोंके आचारपर देशक सामन अपनी योजनाएँ करें ।

१९ हिन्दी-भाषी गायकों विचकारा तथा अन्य कलाकारोंकी पूरी सूची बनाये और कलाकारोंमें अपनी सम्पत्क स्थापित कर भाषाके विस्तार तथा साहित्यिक उत्थानके लिए हम उनके कौशल और व्यक्तिगतका उपयोग करें । और अपने अन्य कलाकारोंकी तरह हम अपने बीच उन्हें सम्मिलित और सम्मानित करें ।

२० जा हिन्दी-साहित्य-सेवी सामान्य अधिकारों तथा या भद्रकुरियोंकी अवसरपर कार्य कर रहे हैं उनके साथ हम अपनी साहित्यिक सामाजिक या स्वरिपत आरम्भोंकी लुप्तता विना भाषा सम्बन्धी सम्पत्क स्थापित करें और भाषा तथा साहित्यके आयोजनमें उन्हें भाग दें ।

२१ ग्रामीण-साहित्य ग्रामीण क्षेत्रों तथा गाँवों तक समान जाने वाले साहित्यिक हम उच्चता बगुन करनी जिस छोड़कर सम्पत्क स्थापित करें और उनकी बुद्धिमत्ता प्रयोग में तथा गये साहित्यिकों तथा कवियोंका सम्मिलित आदर करें कि उनकी भाषाओंकी सत्य सत्य भाषाओं तक कला और हमारे आदर्शोंकी पुनर्जा केकर पहुँच रही है ।

२२ विश्वविद्यालयोंमें विद्याया माध्यम हिन्दी करनके लिए वेदक विद्या और विचारोंकी से नाम ग लें हिन्दी जगत्के विश्वविद्यालयोंके उद्योगोंमें मिलकर पाठ्य-पुस्तकोंकी स्वीकृति नव-साहित्य-निर्माण और भाषा आकर्यवताओं तथा कठिनाइयोंमें हम विश्वविद्यालयोंमें सम्पत्क करें ।

२३ जिन हिन्दी भाषी कवियों और कलाकारोंने संज्ञाया कवियत प्रथम किया उनके साहित्य कवि जीवन-क्रम उद्योग और उनकी छोड़ी

हमारी रचनाओंको धार हम दृग्दृश्य न करें। उनका साहित्य और
 कवनी और दृग्दृश्य हरमसे हम अपना साहित्य और इतिहासक
 इतिहास एक दूसरेको बंधु खो देंगे। उनका गीत उपस्थान भाषा
 और कवना नवका प्रायना और सिद्धान्त मन्त्रका गतिज्ञासिद्ध मन्त्र
 और दय इला साहित्य।

२४ केवल विन्धी ज्ञानकर युवापय व्यापारिया विद्वाना अध्यापकों
 और शायरों आदिका न हम अपना बुद्धि मन्त्रों न उनसे दूर रह।
 हमसे दयमें हम उनसे अपना अधिकाधिक सम्बन्ध स्थापित करें और
 छान दें।

२५ मम्मन्त्रक मन्त्रज्ञानका हम समस्त हिन्दी जगत्के गौरवका
 एक बलकर उनका मन्त्रज्ञानके लिए ममस्त हिन्दी-मन्त्रकारका ध्यान
 बढ़ाएँ।

२६ हम प्रतिद्वय एव कलाकाराकी कृतिको सम्मानित करें विद्वाना
 हमारे साहित्यम प्रतिमा या युवाकी भावस्वरूपाकी बुद्धि मन्त्रिन वस्तु
 रचित का है और मन्त्रिन धर्मका आयोजन किया है। हम प्रस्ताव
 मन्त्रज्ञानका एक मन्त्र न करें किन्तु उपस्थान वस मन्त्र भी न डालें।

बेरी वसत मन्त्रज्ञानों कदाचित् अवबधी हो सकती है जबतक एक तो
 मन्त्रिन इन दिनाम मन्त्रज्ञानके न जगाय और दुमर हिन्दी-जगत्का
 वस साहित्य-मन्त्रकारका धनिक-वस यत्र आबित न करे कि वसकी
 अधिकाधिक मन्त्र उनमें साहित्यकाकी दूर-दृष्टि और मोचन-मन्त्रज्ञानकी
 अधिकाधिक भी है।

इतिहासके विषयमें डॉ० रामप्रसाद बिपाठी डॉ० बनीप्रसाद डॉ०
 विन्धीप्रसाद डॉ० रामचंद्र बिपाठी डॉ० बनारसप्रसाद आदि कितन
 ही इतिहासज हमारे बीच है। किन्तु एक तो उनकी कृतियाँ अंतर्राष्ट्रीय
 जगत् पर बानी है दूसरे पदातीके इतिहासकार मर वसाई और राजवाड़े
 की तरह युवा रमाकर हिन्दी जगत्के इतिहासक पीछे आमाओकी

तरह पढ़ जानबासे मनस्वियों और उपस्वियोंका हमारा पाम टोटा है । यही कारण है कि रामस्वामि बुध्देकम्बुध और बिहार तथा मुक्तप्रान्त और हम्प्रस्वामि हमारा इतिहास पला हुआ है किन्तु अपन युवकी जमतामें उस इतिहासके प्रति अमिमान उत्पन्न करनेमें हम आम सकथ नहीं हो रहे ।

उपग्रामकी स्वर भाषा हिन्दी भागत्को प्रमथम्बुकी देन है । मद्रकुम्भारक मनस्वी संसक बुन्दावनछाककी बर्मा हिन्दीको प्रेमथम्बुकी की ओइका बान देस । मुगक बीच आम वीतम्ब लकीन बारामें अपनी वृत्तिमी केकर लगत है । यदि उनका निबन्ध-भासथ उनके क्राकूका रह सके उनका बाधनिक उन्हें उपग्रामकी निमस साधारणतास दूर न डकस दे और वे उपग्रामको कछमको प्रेमथम्बुकी तरह एकाग्र स्वाग दे सके तो व युवकी मौन पूरी करन भास्य उपग्राम और मधु कपाए हिन्दीको बैठे रहगे । इस मौनिक पथम हम थम्बुपुथ इसमथम्बु ओर्दी और भवकरीचरककी आर आया-मरो दुहिसे दखना बाहिए । एक पथ करन योग्य चरककार बात्सबापन और दधपाककी कनमपर उत्तरना बाहता है — येना योगता है ।

चरित-केलन हमारे बर्मा प्राय प्रारम्भ ही नहीं हुआ । व बनारसी बाम चतुर्वेदी कबिरहन सन्पनाथपथ और भारत-मकथ एन्डर्ज मिथा कुछ न लिख पाय और बिड़लाजीन को था जमनालाककी और महारमा पाग्पीपर लिखा है मुम है एव कामका मो है किन्तु बर चरित-केलन को मन्नुन मोमाम नहीं आता । बर ता स्मृतिवोंका माहिर है और उन जैती परिनिबलि-प्राप्त ककमाका इस विमामे एव लिखा बाहिए । भास्य चरित लिखते भी हमारा हिन्दी मनीपी मानो मधुचछा है । बरतिफ मे जानना है केवल गुलाबछपकीन लिखा है और नाम दिया है—मरी असपत्कथा । श्रीमती गिबगनी बकीन मो अपन पत्रि प्रमथम्बुकी कुछ स्मृतिवी लिखा है । इस विमामे मिशक और मतरानकी कन्तुनी छाड़

एकान्ततुल्यक इमें माय बदना बाहिए ।

एकही विषयमें प्रसादबलने प्रतिमाक बमबक माय जा पिन्ना है
नहीं फट है । किन्तु जा पिन्ना है उसमें रंजकबनर पट्टेबन-बेसा बहुत
गो है । माय बधिक है । इन दिशामें स्त्रमोंन बदगीमाय मट्टकी कमी
एकदमबाध बर्ना पूरी कर सकत थे । बाबू याबिन्दनामम छात्रे-बद
मैल डार बन्क लिखकर माना माटकोंको बूम मबा दो है । जा माटक
नीमकी बगिना और बन्कनी विदीपताबास मरे है उनक सन्क
है ही शिष्टम प्रेया थी उन्परकर मट्ट और ठाकुर सन्कमविह ।
मैनेका 'ग्याबन्कन और टाकुर माहकक माटकोंमें 'उन्मग धेष्ट
एक है । इन दिशामें उन्मनाथ 'मरक' तथा अन्य कई विद्वान् लिख
ए है ।

एकही माटकोंमें धा मद्गुल्लग्न बबस्वीन प्रमा-बाक नाटकोंको
एकदमबा कोणक और विद्यादानका बधिक्य अपनी रचनामें सुब
दिना है । किन्तु उनको माया मन्कोपर और बीनामोंपर सन्क न
है । रामबुनार बमके ग्वांकी मत्रक है, व इन्कमके लिखबाइ है । इन
लिख द-बिन्दनाम मुबनवरप्रमाइ और बारस्वरमिहका उद्याग
बमाइ है ।

बहागियाम कोणिक और मुबयनक माय इमें ममबनीप्रसाइ और
मन्कोपर नब होना बाहिए । यों पिबयनीदेवी मुबडाकुमाटी मद्गुल्ल-
ग्न द-बिन्दनाम, तथा पिबा ममशाप्रमा खर धा पशानी बिनाइ
दंड बनि मूठ बाना-बेनक इमार बाब मत्रक उद्योपी है किन्तु
इन्कोका प्रार्थन बाने और रीतन्त्राका छाइ हें ता प्रमबप्रतीकी
एक बहिनबाका मोकाकी पतवारका मट्टक मन्माकनबाया बनी बाये
गो बाग । नयी धारामें उन्मनाथ किन्तु यनपास अमेय पिबनाक
कि हीनेर तथा बुक और है किन्तु बमी हेर है जब उनकी म्पुदपा-
का पुन मन्क लिखद हो नक । यही बी उद्योकी प्रतिमा धा धाय
ब-बिन्दनाम

बिना गरी रूठो मणि ब युमको वस्तु द सबे ।

बर्हिठक मे प्रागता हें सम्गावम—बसापर भीमुठ विप्युइतजीके
पत्रकार कलाके सिवा और कोई बड़ी पुस्तक देखनमे गही जावी ।
हैं उगार्के सम्बन्धम इकाहाबाद का जर्नल प्रसक मैतबर धीमुठ कृष्णदेव
प्रसाद दरने आधुनिक उगार्के नामक थछ पुस्तक लिखी है । धी राम
नारायण सिध अपने 'मूगाम मासिक-द्वारा दिल्लीको अन्तराज्याय काम
कारियाँ बनम मफल हुए है । प्रयागकी विज्ञान परिषद्ल दिल्लीको विज्ञान
का माहित्य बिमा है ।

मुवकी रेया बनकर जा कमाकार पावे है जनम काशीक सहुयय मुहुइ
रामकृष्णवामको कवि कलाकार और चिन्तकके नाठ दिल्लीक गव है ।
माधुमना मुकवि आ विद्यापीठद्वितीय कम्म इमसिए उठाकर ठेक दी
बयाकि वह उहे जीवनके ईमालदार प्रकटीकरबकी बापा दीप पडी ।
किन्तु उग्रान जा लिखा उचब लिखा साधु लिखा । मोठामके मुवराज
रमुबारनिहजी पर मास्का और दिल्ली जगत् दानाको गव है । अपनी संपाणुप
प्रतिभा लेकर दिल्लीके विस्तार और उसकी धी-बुद्धिम सहायक हानके सिए
धीकाका कामरुकर हमार बीच जावे है । भीमाहनवास गहन कनी-कनी
लिखठे है किन्तु उचब बचिमे लिखत है ।

मध्यप्रांत्तम बिड्डर हाँ कबदेवप्रसादकी ब्योडार रात्रेग्रसिहजी
मुकवि और समालाचक आचिनयमाहन शमी बयोबुद्ध भीलुकराम चौबजी
बुमाकर कुमारहृदय आरामेस्वरप्रसाद बुक परिश्रत द्वारकाप्रसाद सिध
मुकवि भीजबासप्रसाद ज्यातिपी भीडहर बनम भी रामगापाल
माइस्वरी धी बनलवापाल उबड धी हूपोबयजी शर्मा भीमबानाप्रसाद
इय आशिकी सेवाए उन्मेरनीय है । या प्रबानी हाकर मा डॉ०रामनुमारजी
बर्मा आ इयार्कर दुब भीपचनारायण आचार्य और भीकन्सीप्रसाद
पाण्डय मध्यप्रांत्त की ही निबि है । भीमुठ काकलाबजी मिनाकारीन
मध्यप्रांत्तक साहित्यिक इतिहासपर एक मुम्बर ग्रन्थ लिखा है । भीमुठ

लंकार, श्रीशंकर श्रीजगन्नाथप्रसाद मिश्र एम० ए० बी० एल० श्रीछदिनाथ पाण्डेय आचार्य बहरीनाथ बर्म श्रीपीर मुहम्मद मुनिस श्रीभुवनेश्वरसिंह भुवम श्रीभुवनेश्वर 'नाथच' आदिका विहार जितना गर्व करे, सोडा है क्योंकि इनपर तो समस्त हिन्दो बगलु गरित है ।

सुवतप्राप्तका तो गब है कि हिन्दो अपत्पर उसका एकाधिकार है । देवतुल्य मन्मथीशजी महाराज धाबुमना टण्डनजी मोतिमान् बानी बाबु पिचप्रसाद गुप्त महान् चिन्तक बाबु भगवानराधजी द्वितीके इतिहासकी स्वर्ण रत्ना बाबु एवामसुन्दरराधजी मिश्रबन्धु विठ्ठल जगरनाथ झा श्री श्रीनागयन्त्री अतुर्वेदी डॉ० श्रीरेण्ड बर्म डॉ० बाबु राम सक्सेना श्री देवीदत्त सुबन्ध श्री जालिपाम बर्म श्री हीरानाम पटना पराङ्करजी श्री कर्मभनागयन् यरें मनस्वी श्रीकृष्णरतजी पालीबाबु श्री गुलाबरायजी श्री हरिश्चंकर शर्मा श्री महेश्वरी श्री रंकर सहायजी सक्सेना श्री रामनाथ सुमन श्री रामबहोरी सुबन्ध आचार्य कैसबप्रसादजी मिश्र विठ्ठल सम्पूर्णान्तजी, श्री राजनाथपन्ध यादवबन्धु, श्री विजयानन्द त्रिपाठी श्री बन्धुसारे बाबुपेयो श्री हीताराम अतुर्वेदी श्री जगन्नाथप्रसाद ब्रजनाथ एम० ए० डॉ० रामविद्यास श्री रघुपति सहाय चिकारके शोर कैसक विद्याल-भाण्ड-मन्पादक श्री श्रीचर शर्मा आदि सत्रशोका नाम ही हिन्दी बगवतका बहुत बड़ा अधिमान है ।

बरात प्राप्त तथा मराठी श्री० पी० म स्वर्गीय शेषमन्त्र ब्रजनाथल ब्रजनाथकी महान् सक्तिपाम श्री बन्-जागरण किष्वा लक्ष्मण मन्त्रदेवके हिन्दी भाषियोंका मन्त्रक बहुत ऊँचा किया । इत दिवामें श्रीमती जानकीदेवी ब्रजनाथ स्वर्गीय ब्रजनाथजीकी इच्छा बनकर यत्नशीला है । बरामें श्रीपुत ब्रजनाथजी विवाशीने हिन्दी प्रचारमें अद्भुत जागरण किया है । श्रीर श्रीमती गणपदेवी गोबनका बरार प्राप्तोय हिन्दी साहित्य समे कन्धी सम्पदाके नाते लूज धम कर रही है । इत दिवाम श्रीपुत श्रीचम शर्माका लघोण श्री सराह्णोय है ।

पंजाबमें भी हिन्दी आरंभ हिन्दी प्रगो स्वामी के गणानन्दजी योस्वामी
 बनेरहस्यजी श्री ठाकुरदत्त वर्मा श्री मन्तरामजी श्री ए श्री मगबहूतजी कबिबर
 श्री सुमहात्म्यन्दजी मुरमन् कबिबर श्री हनुकुण्जजी प्रमी श्री कबिबर
 श्री जयचमकरजी मट्ट बिल्वराम्पु सन्पादक श्री माधवजी धोमती धामोदेवी
 श्री धोमती मोठारेबीजी धोमुन चम्पुजजी विद्यालंकार श्री देवचन्द्रजी
 श्री राजेन्द्रकुमारजी वैन श्री देवप्र सत्याधी श्री तेगराम आदि मजबूतोंके
 प्रयत्नोंके श्रेष्ठकर जाना बँधतो है कि एक दिन पंजाबमें हिन्दी अपना
 उचित योग्य स्थान पा लेगी ।

रिस्तोमें बिड्डर इन् विद्याशास्त्रपतिजी श्री सन्ति मिश्र परम
 उद्योगी श्री धनद्वामदासजी बिदला प्रसिद्ध कलाकार या बनेन्द्र कुमारजी
 बाबाय या चतुरसेनजी शास्त्री श्री मलयदेवजी विद्यालंकार श्री राम
 गोपालजी विद्यालंकार, श्री मुकुटबिहारी वर्मा श्री मुभूलाक्षजी श्री
 बियोया हरिजी आदिकोंके परिश्रमपर हिन्दी बलिमानिती है ।

बम्बईमें एक बार गुजराती साहित्यके सत्रक और चेत कलाकार श्री
 कर्णिकालजी मुन्गोने हिन्दी बयतके गौरव स्वर्गीय श्री प्रमदचन्द्रजीके
 साथ समस्त देशी भाषाओंमें सम्पन्न स्थापित करनेके लिए 'गानिक हूँ'
 का सम्पादन किया था । आज पुन ऐसे उद्योगकी उत्पत्ति आवश्यक
 है । बड़ी बँकि 'विरचमित्र की शक्ति'या 'बैरटेरवर समाचार की शक्ति'या
 श्री निर्दम धर्मा बरिठ श्री मानुजुमार श्री रामदेवजी पोद्दार आदि
 सज्जन सब काम करते हैं । अब बड़ी हिन्दीके प्रसिद्ध और अन्तर्राष्ट्रीय
 दुष्टियोंके विद्वान् डॉ० ईमचन्द्रजी जोशी भी पहुँच गये हैं । तथा शिवा
 बरबसायके कारण श्री मगबहीचरणजी वर्मा श्री नरेन्द्रजी श्री कपयन्त्री
 श्री प्यारेलाल सन्तोषी श्री नीलकण्ठ त्रिवाणी श्री बृजमोहन शोशित श्री
 विद्यार साहू श्री उत्पलाम विद्यालंकार आदि सज्जन बड़ी हैं तथा
 बलवान् हिन्दी भाषी तथा रामद्वामी शक्ति'या बड़ी हैं ।

इनकृत्योंमें श्री मूलचन्द्रजी अणुवालकी शक्ति'या शिवा सेकुरिया

पुरस्कार प्रदाता श्री सीताराम सैकसरिया श्री बगलसालजी मुरारख्य श्री नटवर या मोहनसिंह सेंवर श्री सकिताप्रसादजी मुकुल श्री हजारी-प्रसादजी डिबेरी श्री धीमानजी श्री हिमकरजी लोकमान्य आदि विस्वव्यापी समाज-सेवक विशाल भारत और विश्वमित्रकी उक्तियों आदिसे बंगालका क्षेत्र आघातपूर्ण है। तिसपर प्रसिद्ध विद्वान् श्री सुनीलकुमारजी चाटुर्ग्या-जैसे मजस्बियाका सम्पन्न है।

मुगली इस्लाम जो तरफ अपने हाथम बरते हैं उनमें श्री जैत-उ-डा० रामबिस्वास श्री रामनाथ सुमन श्री जयदीप एम ए श्री मिसिम्ब श्री बंनोपुरी श्री अज्ञेय आन्ति प्रसाद श्री शिवदान सिंह श्री गिरजाकुमार श्री मुनित्राकुमारी शिवहा श्री पुरनचन्द्र जोषी श्री सोहनलाल डिबेरी श्री शिवमंगल सिंह सुमन श्री पण्डित मासवीय श्री अंचल श्री सचरामन्द श्री माचवे और श्री सज्जाल आदि मुख्य हैं।

कुछ सैदाक हैं जो सेजतम सफिफ्ट स्वाचसे तथा मुदुर हुलचलसे मित्र सबका उच्च साहित्यिक दृष्टि रखकर निकते हैं। उनमें ठाकुर गुरैस सिंह श्री रामनारायण पादवन्तु या रुदमीनारायण मिश्र श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी श्री प्रयागरथ मुन्न आदि मुख्य हैं।

हम अपना सीमाके रक्षाकाको देखकर दक्षिण है। मद्रास श्री राज-गोपालाचार्यजी डॉ० पट्टाभि सीतारामैबा और अनक मुभी हमारे मद्रासके हिन्दी प्रचारका अक्षय अपने हाथम बांधे हुए हैं। महाराष्ट्रम समस्त बल अपना भेदभाव छोडकर राष्ट्रभाषाकी उपासनाम सीन है। गुजरातमें मुनि जिनबिजयजी श्रीमंत बर्हूवाभाबजी तथा श्रीमती बीलाबतीजी मुगली बंगालमें डॉ० सुनीलकुमारजी तथा बित्तल ही अग्र्य सुधी जन हमी प्रचार आग्रम तमित भाषाम कर्नाटक उड़ीसा आदि सबसत रक्षानामें राष्ट्रभाषाको समाराधनाम संलग्न है और श्री पुण्यासमदात या टचहनको ध्यप-साधना तथा बाबा बालककर-जैसे उपरिबर्षोंको सवा लच्छ हो रही है।

राज्याय नमस्को बाधो है जिसका मस्तक गयाबिराजके मोससे
 ऐश्वर्य चरकोश और इतिव है। गयाबिराज राज्यका प्रहरी होकर
 तो पारशी है। किन्तु नीचोक्ति देखनाका तो वह रजत-मुकुट ही है।
 और इसे देखनेके बन्धे मया और जमनाका हार झहरा रहा है इरावती
 और किन्तु विजयी भुवाओंके संकट बनकर सीमा बना रही है नमया
 और शानी किन्तु कमरको करवनी बनकर अदृश्य रही है कुप्या और
 शारी विजयी शारीका जिनामें बस रही है और हिन्द महासागर
 सिधे बाधोको भी रख है। भारतबाधिमेंकि समस्त बनों समस्त
 बनिमें और सम्पन्न प्राणाओंको यह जमना है। इतीकी बाधोको हम
 एतुपयो करते हैं और इतीके स्वरूपके हम दुकड़े-दुकड़े नहीं देख
 सके।

तो इनको वैदिकी तोहने बाधना वह इसकी बाधोको आकेतु हिना
 एक वैश्वेया। आज भी एक मुना है जो राज्याधो किञ्चिती है, राज्यका
 मय, शरीर किञ्चिती है।

एक मुक है जो मानव स्वाधीनताक किन्तु अर्धोंको खोततो हुई
 पुनपाननेके रज के रही है, मरिचकी बेवार रही है, बतमानको प्राण
 एत कर रही है।

देनी वह खोरके सोच रहा है—मानो कोरे-बीरे पुनपुना रहा है।
 वह इमय मरिच्य कह रहा है किन्तु पशोतिपी नहीं है, मुच-भटा है वह।

उसके परमाक बाप इधारे एक चठे है। वह जमवका स्वामी है।
 मानेधारी बीजे जयधोको जोटा रहा है, धालेबाके मुपकी भाव कह
 रहा है।

जो ईट और परवर पीरन बरसाकर उसके विवाहकी मस्त नहीं
 रज्य बनते नहीं ईट और परवर उसके जगनको कायाधर नहीं बना
 करते। वह परम जम्पुल है।

एक बिक्रि है जो खीरिबोके यहनों तक सुन-किरिबीकी तख्ठीक

रहा है और जिसकी प्रकाश-रेखाओंपर राष्ट्रीय उत्थानके संश्लेषीय काष्ठिका उभरा हुआ है।

बहु बर्ना है क्योंकि उसके संकल्प उन्मुक्त है। बहु अपमानित है क्योंकि उसकी प्रतिज्ञा काटि छोटी बीबनके हृदय-मण्डिरम सम्मानित है।

बहु हमसे दूर है क्योंकि बहु हमारे हृदयोंके इतना पास है जिसका पास कोई नहीं।

बहु उनका मातृ स्थित रहा है जिन्हें स्थितना नहीं जाता उनको आरसे बोस रहा है जिसकी बाधा नहीं फूटती।

समस्त गरिमा किसक अभिप्रेतकी जलो जा रही है? समस्त हरि वाक्पापन किसक संक्षेपपर भूमिसे विद्रोह किसे ऊपरको उठ रहा है? भारतीय मानव रीझने और सोसनवाक्याम बंटकर किस बाधाके आस-नास अचकट काट रहा है? उसके सिरपर स्वत बरब बंधा है उसके बदनमें सँभोटी लगी है। मृष्टी भर इट्टिमाँ है और प्राणोंको इतना ठरा रहा है मानो उसे झीनी चादर बनाकर अपने अभिमतको संसप-से झांक लेना चाहता है।

भारमासीक राष्ट्रवाणीकी रक्षा उसम बेग रहे है। तस्माईं आज हराशक अनुवादमें इतनी बेचैन है कि उस मुनवाणोंको पोछे छोड़कर मानो लम्बाचिराजपर अङ्क धार्यकी। उसकी विजय इतिहास है। और अपनोंसे उसकी पराजय मुपना महान् पुण्याथ हीगी।

उत्त युग-पुण्याके द्वारा राष्ट्रवाणी है चाहे बहु सेवा-धाममें रहे बाप धारमें रहे वा किसी और लोचमें रहे।

उसके बन्धन और नवी पीढ़ीके निर्वाणकी प्रतिज्ञाके नाच हिन्दी भाषी गायक आजो 'अधर जो आरापमा करें धरको साथ करें खरबा मुँहन करें भारतीयके खरबोम अंजन चढ़ावें टूटत देण और टूटता बापामें सन्धि साधन करें पदाको संज्ञातकर जमावें अंगावो बलवान् बनावें

और राष्ट्रमागधीको मस्तक उठाकर मस्तक मुकाकर और धारस्यक्या
 होनेपर इपेचीपर मस्तक उतारकर बर्ही के चर्से कहसि बह विरहकी
 स्वतन्त्र धाराकोसे बराबरीके बोल बोल सके । इसके लिए जितना संघटित
 प्राय जितना बलिदान जितना पौरवगाव और जितने स्वप्नोका जागरण
 आवश्यक हो हमारी पीछी है सके तमी हमारी हरिद्वारकी तीथयाथा
 मऊफ होवी और तमी नगाधिगत्रके द्वारपर बहती भापीरथोकी
 समुद्रमुभी बागना अप हम समस्त सकेंगे ।

११६ प्र मा० स० शिव सन्देशक
 बन्दर बन्दिरप